साहित्य अमृत

मासिक

फाल्गुन-चैत्र, संवत्-२०७७ ❖ मार्च २०२१

वर्ष-२६ ❖ अंक-८ ❖ पृष्ठ ९२ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

✍ **संपादकीय**

महिला सशक्तीकरण : नए क्षितिज ४

✍ **प्रतिस्मृति**

सरिता हो मेरा जीवन/ *महादेवी वर्मा* ६

✍ **कहानी**

दृष्टि/ *प्रीति गोविंदराज* ८

नहीं चाहिए बेटी/ गिरीश पंकज ३४

परी नहीं होती'''/ *मीनू त्रिपाठी* ४९

लालसा/ *सुरेश मीना* ६२

विभागीय/ *मनीष कुमार मिश्रा* ६८

'''कि तुम मेरी जिंदगी हो/ *पूरन सिंह* ८३

✍ **आलेख**

आचार्य महाप्रज्ञ का कवि रूप/ *नरेश शांडिल्य* १४

गांधी-चिंतन और भारतीय समाज/ *राजीव गुप्ता* ३०

ऑस्टिन (टेक्सास) की उल्लासपूर्ण होली/ *हरि जोशी* ४०

सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली/ *चितरंजन भारती* ४२

महिला-साहित्य का प्रस्थान बिंदु : ऋग्वेद की ऋषिकाएँ/ *जीनत आबेदीन* ७३

✍ **लघुकथा**

आमने-सामने / *ओमप्रकाश शर्मा 'प्रकाश'* २६

तिरस्कार एवं सम्मान/ *माणिक विश्वकर्मा 'नवरंग'* ६३

कितने रूप दहेज के/ आर.बी. भंडारकर ७१

✍ **कविता**

कुछ मैंने सुना/ *विनोद शर्मा* १३

गगन गुलाल मलता है'''/ *व्यासमणि त्रिपाठी* २७

फागुन आया/ *इंद्रा रानी* ३२

किस बात पर बातें करें/ *रवि ऋषि* ३९

है तेरा आसमान खतरे में/ *अशोक अंजुम* ५२

क्यों नहीं पूछा ?/ *रेणु राजवंशी गुप्ता* ६७

धूम मची धूम, होली की धूम/ *विष्णु भट्ट* ७२

रूबरू/ प्रीति कच्छल ७९

एक चेहरे का आदमी/ निलोत्पल रमेश ८०

✍ **लोक-साहित्य**

फागुन, फाग, राग और कवि ईसुरी/ *शिवचरण चौहान* ६४

✍ **राम झरोखे बैठ के**

बुद्धिजीवी उदास क्यों हैं ?/ *गोपाल चतुर्वेदी* १७

✍ **संस्मरण**

साझी संस्कृति की समृद्ध धरोहर : जापान/ *ऋचा मिश्र* ५८

✍ **शोध-पत्र**

छत्तीसगढ़ी साहित्य में धर्म व अध्यात्म/ *नम्रता पांडेय* ५३

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

'तुळु' भाषा की दो कविताएँ/ *एच.एम. कुमारस्वामी* २८

✍ **विनोद-वार्ता**

हास्यकवि की फागुनी बाइट/ सूर्यकुमार पांडेय ३३

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

उसकी पहली उड़ान/ *सुशांत सुप्रिय* ५६

✍ **यात्रा-संस्मरण**

राजस्थान के तीर्थ-दर्शन/ प्रेमपाल शर्मा २०

✍ **बाल-संसार**

होली का त्योहार/ *हरदेव सिंह धीमान* ७६

दादी बदल गई/ *आशा शर्मा* ७८

✍ वर्ग-पहेली ८७

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८८

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ८९

संपादकीय

महिला सशक्तीकरण : नए क्षितिज

कुछ दिनों पहले का समाचार था—३४ महिलाएँ केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की 'कोबरा कमांडो' बनेंगी। केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की महिला बटालियन भी विश्व की अनूठी बटालियन है, जहाँ से इन्हें चुना गया है। 'कोबरा कमांडो' जिस तरह के जोखिम भरे करतब करते हैं, वे हम सबको आश्चर्यचकित कर देते हैं। इनका प्रशिक्षण इतना कठोर होता है कि गिने-चुने साहसी ही सफल हो पाते हैं। इन शेरनियों का चयन महिला सशक्तीकरण का बेमिसाल उदाहरण है।

पिछले दिनों चार भारतीय महिलाओं ने सैन फ्रांसिस्को से बेंगलुरु तक की सबसे लंबी दूरी पर विमान उड़ाकर विश्व कीर्तिमान बनाया। इस 'नॉनस्टॉप' १६,००० किमी. यात्रा में ये वीरांगनाएँ उत्तरी ध्रुव के ऊपर से गुजरीं। यह बेहद जोखिम भरा कारनामा था। ईंधन के जम जाने का खतरा और दूर-दूर तक विमान उतारने की संभावना नहीं···और भी कितनी ही चुनौतियाँ। किंतु कमांडिंग ऑफिसर जोया अग्रवाल ने अपनी तीन सहयोगी महिला अधिकारियों के साथ यह जोखिम भरी यात्रा संपन्न करके भारत को गौरवान्वित किया।

इसी प्रकार पाँच प्रबुद्ध महिलाएँ 'सेफ स्पीड चैलेंज' स्वीकार करके वाघा सीमा से कन्याकुमारी तक कार यात्रा करती हैं। रक्षामंत्री श्री राजनाथ सिंह तथा सड़क परिवहन मंत्री श्री नितिन गडकरी इनकी यात्रा को शुभारंभ करने हेतु उपस्थित होते हैं। ये महिलाएँ इस विराट् यात्रा में यातायात संबंधी अध्ययन भी करती हैं तथा लोगों को सड़क दुर्घटनाओं के प्रति जागरूक भी करती हैं।

अमेरिका के नवनिर्वाचित राष्ट्रपति की प्रशासनिक टीम में सात-आठ भारतीय महिलाओं को अत्यंत संवेदनशील उच्चपद दिए गए हैं। यह भारतीयों के लिए तो गर्व का विषय है ही, साथ ही महिलाओं की प्रतिभा और क्षमता के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण की अनिवार्यता को भी रेखांकित करता है।

पत्थर तोड़ने वाले एक गरीब मजदूर की बेटी मीनू सोरेन अमेरिका में होनेवाली 'विश्व एथेलिटिक चैंपियनशिप' में भारत का प्रतिनिधित्व करने हेतु नामित की गई है।

बड़ी उम्र की महिलाओं के साथ-साथ छोटी उम्र की बच्चियाँ भी उत्कृष्ट कार्य करके भारत का गौरव बढ़ा रही हैं। मात्र सात वर्ष की नन्ही 'प्रसिद्धि' आठ विद्यालयों में नौ हजार से अधिक वृक्ष लगाकर, और आठ विद्यालयों में फलों की वाटिका स्थापित करने में सूत्रधार बन जाती है और गणतंत्र दिवस पर प्रधानमंत्रीजी से सम्मान पाती है।

झाबुआ की छोटी उम्र की छात्रा कोरोना काल में देशी साधनों से 'सामुदायिक हैंडवॉश' केंद्र स्थापित करने की सूत्रधार बन जाती है। यूनीसेफ इस बच्ची को 'सद्भावना दूत' घोषित कर सम्मानित करता है।

पिछले दिनों में ही जब भारत की सबसे अमीर महिलाओं पर एक सर्वेक्षण किया गया तो एक हजार करोड़ से अधिक का कारोबार स्थापित करने वाली ३८ महिलाओं में से ३१ महिलाएँ ऐसी थीं, जिन्होंने सारी सफलता अपने ही बलबूते पर प्राप्त की है और उसमें उनके पिता अथवा पति की कोई भूमिका नहीं रही। इनमें २५ महिलाएँ उद्यमी हैं, जबकि ६ प्रोफेशनल महारत हासिल करनेवाली। दिल्ली पुलिस की सीमा खोए हुए ७६ बच्चों को उनके परिवार से मिलाकर उनके आशीष तो बटोरती हैं, 'आउट ऑफ टर्न' प्रोन्नति प्राप्त कर 'ए.एस.आई.' भी बन जाती हैं।

इसी तरह की अनेकानेक उत्कृष्ट उपलब्धियों के समाचार हर दिन मिलते रहते हैं—भारत से भी तथा विश्व के अन्य देशों से भी। भारत के एक छोटे से गाँव की महिलाएँ संकल्प कर लेती हैं तो सात-आठ माह के परिश्रम से एक मंदिर की ओर जानेवाले झाड़-झंखाड़ वाले बीहड़ पहाड़ी रास्ते को समतल कर साफ-सुथरी सड़क में बदल देती हैं।

ये सारी-की-सारी उपलब्धियाँ पिछले कुछ दिनों की ही हैं। जरा सा पीछे नजर डालें तो गणतंत्र दिवस परेड के अंतिम चरण में 'मोटर साइकिल सवारों' के हैरतअंगेज कारनामे याद आते हैं। अब ये रोंगटे खड़े कर देने वाले करतब महिलाओं द्वारा किए जाते हैं।

मंगल ग्रह मिशन में महिला वैज्ञानिकों की भागीदारी पर भी नजर जाना स्वाभाविक है। क्या अब भी यह बताने की जरूरत है कि महिलाएँ प्रतिभा और क्षमता में पुरुषों से किसी भी प्रकार कमतर नहीं हैं।

अब ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है, चाहे वह कितना ही जोखिम भरा क्यों न हो, जिसमें महिलाएँ पुरुषों के बराबर उत्कृष्ट सेवाएँ नहीं दे रही हों। वायुसेना तथा नौसेना में भी पिछले दिनों संवेदनशील पदों पर उनकी नियुक्ति हुई है। तब फिर नारी सशक्तीकरण में रुकावटें क्या हैं? सरकारों को 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान क्यों चलाना पड़ रहा है? समाज अपनी मानसिकता से कब उबरेगा?

भारत के संदर्भ में 'नारी मुक्ति' या 'नारी सशक्तीकरण' को भी सही परिप्रेक्ष्य में समझाना होगा तथा कुछ प्रश्नों के हल खोजने होंगे?

भारतीय नारी पुरुष सत्ता के वर्चस्व से मुक्ति के संदर्भ में, न अपने पति से मुक्ति चाहती है, न पिता या भाई से; वह एक पत्नी के रूप में, माँ के रूप में, बेटी के रूप में, बहन के रूप में अपने सारे दायित्व पूरी तरह निभाने को संकल्पबद्ध है। वह मात्र इतना ही तो चाहती है कि उसे कोख में ही न मार दिया जाए और दुनिया में आने दिया जाए।

वह मात्र इतना ही तो चाहती है कि उसे पढ़ने दिया जाए, अपनी प्रतिभा को विकसित करने का पूरा-पूरा अवसर दिया जाए। जो बनना चाहती है, बनने दिया जाए।

वह मात्र इतनी सी माँग करती है कि उसे 'देवी' या 'दासी' बनाने की बजाय 'इनसान' समझा जाए, जिसके पास एक हृदय है, एक मन है, मस्तिष्क है, आत्मा है! उसकी भी 'अस्मिता' है, उसकी भी 'पहचान' है, उसका भी 'सम्मान' है। वह मात्र इतना ही तो चाहती है कि उसे 'सुरक्षा' मिले। वह कहीं भी आ-जा सके—बिना किसी भय या आतंक के। लेकिन अभी भी उसका जीवन कितना काँटों भरा है। तरह-तरह के अपराध, हिंसा के खतरे उस पर मँडराते रहते हैं। छेड़खानी, बलात्कार, तेजाबी हमला, शोषण, अपमान आदि-आदि···लंबी सूची है। हाल ही का एक सर्वेक्षण बताता है कि करोड़ों महिलाएँ यौन हिंसा की शिकार हैं। पुरुष भी अपनी मानसिकता से बाहर आने को तैयार नहीं हैं! पंचसितारा होटलों से लेकर ढाबों तक लाखों पुरुष खाना बनाने के काम में लगे हैं, लेकिन घर की रसोई में प्रवेश मात्र से उसका 'पौरुष' आहत हो जाता है! कितना भी कहा जाए कि पति-पत्नी जीवन की गाड़ी के दो पहिए हैं किंतु व्यवहार के धरातल पर एक पहिया 'ट्रक' का और एक मोपिड या साइकिल का हो जाता है। भारतीय महिला 'अनुचरी' की बजाय 'सहचरी' बनना चाहती है। अभी भी महिलाएँ जीवन में कितनी ही वर्जनाएँ, कितनी ही चुनौतियाँ ढो रही हैं। महानगरों तथा नगरों के कुछ परिवारों को छोड़ दें तो कस्बों तथा गाँवों में स्थितियाँ उस गति से नहीं बदल रहीं, जिस गति से बदलनी चाहिए। हमें इस बात पर अवश्य ही गर्व करना चाहिए कि हमारे राष्ट्रनेताओं, संविधान-निर्माताओं ने भारतीय नारियों को अनेक ऐसे अधिकार दिए, जिसके लिए दूसरे देशों में उन्हें लंबा संघर्ष करना पड़ा। अमेरिका का उदाहरण हमारे सामने है, जहाँ इतिहास में पहली बार भारतीय मूल की महिला को उपराष्ट्रपति बनने का सम्मान मिला है, जबकि भारत में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री आदि पदों पर महिलाएँ बहुत पहले सुशोभित हो चुकी हैं। जिन-जिन कानूनी सुधारों की आवश्यकता हुई, वे भी निरंतर किए जाते रहे हैं। न्याय-व्यवस्था ने भी महिला सशक्तीकरण में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

सबसे अधिक चिंता का विषय देशभर में होनेवाले गैंगरेप जैसे भयावह कुकृत्य हैं। यहाँ हमारी पुलिस और न्यायिक व्यवस्था को अधिक सजग होना पड़ेगा तथा शीघ्रातिशीघ्र न्याय देने के लिए फास्टट्रैक कोर्ट जैसी व्यवस्थाएँ सुदृढ़ करनी पड़ेंगी। यह कितना विडंबनापूर्ण है कि 'निर्भया कांड' में अपराधी कोई-न-कोई कानूनी दाँवपेंच लगाते रहे और पूरा देश लाचार होकर उन राक्षसों की फाँसी टलते हुए देखता रहा और कितने लंबे अरसे बाद न्याय मिल पाया, जबकि इस कांड पर तो पूरा देश, पूरा मीडिया भी नजर रखे हुए था। तब से कितने ही ऐसे कांड हो चुके हैं!

औद्योगीकरण और शहरीकरण के चलते परिवार व्यवस्था निश्चय ही क्षतिग्रस्त हुई है। 'संस्कार' जो हमारे भारतीय जीवन के सुदृढ़ आधार थे, शिथिल हो गए हैं। 'मीडिया' और 'सोशल मीडिया' पर अश्लीलता व फूहड़ता इतनी बढ़ गई है कि आज मोबाइल पर ही वह सबकुछ सहज उपलब्ध है, जिसकी कुछ दशकों पहले तक किसी को कल्पना भी नहीं थी। अश्लीलता के जहर को नियंत्रित करना ही चाहिए। विडंबना देखिए कि भारत के अनेक क्षेत्रों में पीने का पानी भले ही सहज उपलब्ध न हो किंतु टी.वी. चैनल और सोशल मीडिया से अश्लीलता का जहर भरपूर उपलब्ध है।

नारी सशक्तीकरण के संदर्भ में हमें अपनी प्राचीन भारतीय संस्कृति को भी नहीं भूलना चाहिए। याद करना चाहिए कि कैकेयी को दो वरदान तब मिले थे, जब युद्ध के समय राजा दशरथ के रथ का पहिया टूट गया था तो कैकेयी ने अपने कंधे पर रथ टिकाकर विजय दिलाई थी, अर्थात् महिलाएँ युद्ध तक में भागीदार होती थीं।

गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा जैसी विदुषियों का भी हमें स्मरण कर लेना चाहिए, जिन्होंने शास्त्रार्थ में दिग्गजों को पराजित किया। विदेशी आक्रमणों के बाद नारियों की स्थिति बद से बदतर होती गई। उन्हें परदे में रहने पर विवश होना पड़ा। तरह-तरह की कुरीतियाँ जड़ें जमाती गईं। अब जबकि हम स्वाधीनता के ७५ वर्ष मनाने की ओर उन्मुख हैं, नारी सुरक्षा, नारी सशक्तीकरण, नारी सम्मान की ओर गंभीरता से विचार करना होगा तथा ठोस उपाय सुनिश्चित करने होंगे। यह सुखद है कि साहित्य अपने दायित्व में सजग है और नारी-विमर्श पिछले कुछ दशकों से साहित्य का अनिवार्य अंग बना हुआ है।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

कुछ मैंने सुना

• विनोद शर्मा

जाने-माने लेखक। ५० वर्षों से अनेक छोटे-बड़े पत्र-पत्रिकाओं व अख़बारों में कविताएँ प्रकाशित। अनेक काव्य-संकलनों में संकलित और पंजाबी, उर्दू, अंग्रेजी, गुजराती, कश्मीरी, बल्गेरियाई एवं रूसी भाषाओं में अनूदित।

क्या कहा, क्या सुना?

मंच पर थे हम दोनों
श्रोताओं के सामने
पेश करने के लिए नमूना
संवाद-अदायगी की कला का

कुछ मैंने कहा
कुछ तुमने सुना
वही जो मैंने कहा
या फिर कुछ और

कुछ तुमने कहा
कुछ मैंने सुना
वही जो तुमने कहा
या फिर कुछ और

गूँज उठा सभागार
तालियों की गड़गड़ाहट
और बंस मोर की आवाजों से

विज्ञापन

विज्ञापन तो विज्ञापन है
वह चाहे किसी पॉपस्टार के 'स्टेज-शो' का हो
या फिर किसी धार्मिक गुरु के साधना शिविर के उद्घाटन का
किसी फैशन—'शो' का हो
या किसी ब्यूटी-कॉण्टेस्ट का
या फिर किसी हीरोइन की पहली फिल्म के प्रीमियर शो का
'शो' तो 'शो' है
और विज्ञापन तो विज्ञापन है ही

जो वह कहता है उसे ध्यान से सुनो
उसके मुख से निकले शब्दों के अर्थ को गुनो
क्या, कब, किस से और कहाँ
कहा जा रहा है
उसे रुई की तरह धुनो
आपको पता चलेगा कि उसकी भाषा में सुननेवालों को
यकीन दिलाने की अद्भुत क्षमता है जिसके सीमांत
छलने की क्षमता के सीमांतों को छूते हैं
जिसके दम पर सहस्राब्दियों पहले
साधु के वेश में प्रकट होकर रावण ने
विवश कर दिया था सीता को
लाँघने के लिए लक्ष्मणरेखा

मैं नहीं जानता

जिस शहर में
नैतिकता के मुद्दे पर बुद्धिजीवी
उन वकीलों की तरह बहस करते हों
जो केस जीतने का झूठा वादा कर
अपनी फीस के नाम पर ऐंठ चुके हैं हत्यारों से मोटी रकम
वहाँ बुद्धिजीवियों की
उस कभी न खत्म होनेवाली बहस में
हस्तक्षेप करने के लिए
मुझे कैसी कविता लिखनी चाहिए
मैं नहीं जानता

८३, रॉयल्टन टावर्स, क्लब ड्राइव,
डीएलफ फेज-५, गुरुग्राम-१२२००१ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८११२०१३६८

आचार्य महाप्रज्ञ का कवि रूप

● नरेश शांडिल्य

वर्ष २०२० आचार्य महाप्रज्ञ के जन्म शताब्दी वर्ष के रूप में मनाया गया। आचार्य महाप्रज्ञ एक मुनि, एक संत, एक संन्यासी, एक दार्शनिक, एक चिंतक, एक विचारक, एक ऋषि के अतिरिक्त एक कुशल वक्ता और एक उत्कृष्ट कवि भी थे। स्वयं एक कवि होने के नाते आचार्य महाप्रज्ञजी को मैंने हमेशा एक असाधारण और बड़े कवि के रूप में देखा। वे जैन संप्रदाय की 'तेरा पंथ' शाखा के नियंता और नियामक भी रहे। वे बहुत पहले से मुनि नथमल के नाम से लिखते रहे थे। उनकी बचपन की अनेक घटनाओं को जोड़कर देखें तो मालूम पड़ता है कि वे बहुत ही संवेदनशील प्रवृत्ति के रहे और उनकी दृष्टि में अलौकिकता का भरपूर प्रभाव रहा। शुरू से ही उनकी रुचि साहित्यिक थी और दार्शनिक भी। उन्होंने स्वयं माना कि "मेरी साहित्यिक रुचि और दार्शनिक रुचि में किस को प्राथमिकता दूँ, यह निर्णय कठिन है। इतना निर्णय दे सकता हूँ कि दोनों रुचियाँ साथ-साथ चलती रहती हैं। प्रारंभ में साहित्यिक रुचि प्रबल थी और दार्शनिक रुचि कमजोर। दो दशक तक यह स्थिति बनी रही। उसके बाद दार्शनिक रुचि प्रबल हो गई और साहित्यिक रुचि कमजोर। प्रवृत्ति में कुछ अंतर आया, क्षमता में अंतर नहीं आया। आज भी दोनों रुचियाँ, दोनों प्रवृत्तियाँ और दोनों क्षमताएँ एक साथ हैं, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ।"

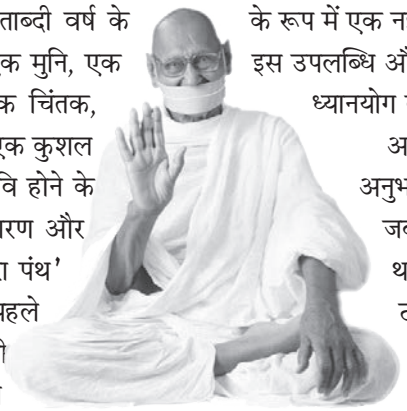

स्वाध्याय से ही आचार्य महाप्रज्ञ ने बहुत ही कम समय में संस्कृत, प्राकृत, व्याकरण, दर्शन, न्याय, काव्य आदि विषयों का गंभीर अध्ययन कर लिया था। जैन संप्रदाय में दीक्षा लेते हुए मुनि नथमल के रूप में उन्होंने अपनी गणना अत्यंत मेधावी मुनियों की पंक्ति में करवाई थी। उन्होंने अपने गुरुवर आचार्य तुलसी के अणुव्रत आंदोलन को नई दिशा ही नहीं दी, अपितु इस आंदोलन की दार्शनिक पृष्ठभूमि भी लिखी। अपने कार्यकाल में इसे और अधिक व्यापक और प्रभावी भी बनाया। उन्होंने कभी यथास्थितिवाद को नहीं स्वीकारा। निरंतर नए अन्वेषण में रत रहकर उन्होंने विस्मृत जैन साधना पद्धतियों को फिर से खँगाला और प्रेक्षाध्यान के रूप में एक नई साधना पद्धति की परिकल्पना भी हमारे सामने रखी। इस उपलब्धि और खोज के कारण स्वयं आचार्य तुलसी ने उन्हें 'जैन ध्यानयोग का कोलंबस' तक कहा।

आचार्य महाप्रज्ञ हमेशा से कुछ नया करने में प्रसन्नता अनुभव करते थे। प्रयोग धर्म का उनका विशेष गुण था। जब अधिकतर तुकांत कविताएँ लिखने का ही प्रचलन था, तब आचार्यजी ने अतुकांत कविता लिखने की ठानी। हर नई बात का विरोध होता ही है, तो उनका भी हुआ। उनका यह नयापन कुछ को बहुत अटपटा सा भी लगा। बाद में उनकी ऐसी कविताओं को समर्थन और प्रोत्साहन भी मिला।

एक रोचक घटना है। आचार्य तुलसी के सान्निध्य में एक बार पटना में बिहार के तत्कालीन राज्यपाल डॉ. जाकिर हुसैन ने लंबा-चौड़ा भाषण देते हुए कहा था कि हमने औद्योगिक प्रगति करते हुए बड़े-बड़े कारखाने तो खोले हैं, लेकिन मनुष्य के निर्माण का कोई कारखाना नहीं खोला। आचार्य तुलसी के द्वारा प्रारंभ किए गए अणुव्रत आंदोलन को उन्होंने मानव निर्माण के कारखाने की संज्ञा देते हुए कहा कि यही आंदोलन हमें विकास की सही दिशा दिखाएगा। उनके लंबे वक्तव्य का आचार्य महाप्रज्ञ ने अपनी काव्य भाषा में तब जो गुंफन किया था, वह इस प्रकार है—

विकास का मंत्र ?
गति
गति का मंत्र ?
गहरी नींद
गहरी नींद का मंत्र ?
उफनती हुई चाँद की चाँदनी !

इस प्रकार आचार्य महाप्रज्ञ पूरे व्याख्यान को मंत्र रूप में व्यक्त करने की सामर्थ्य रखते थे। वे जानते थे कि साहित्य में ही वह ताकत है कि वह स्वयं को सर्व तक का और सर्व से स्वयं तक का रास्ता तय कर सकता है। पूरे बरगद को एक बीज में और एक बीज को पूरे बरगद में

सिमटते और फैलते देखने की दिव्यदृष्टि आचार्यवर के पास सदा से रही।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', मैथिली शरण गुप्त, सियाराम शरण गुप्त, हरिवंश राय 'बच्चन', रामधारी सिंह 'दिनकर', जैनेंद्र कुमार, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', विष्णु प्रभाकर, हीरानंद सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', शिवमंगल सिंह 'सुमन', काका कालेलकर जैसे प्रतिष्ठित मूर्धन्य कवियों-साहित्यकारों से आचार्य महाप्रज्ञ का बार-बार संपर्क होता रहा। कविताएँ सुनने-सुनाने के अवसर भी मिलते रहे और इस प्रकार इन मुलाकातों से प्रेरणा भी मिलती रही। एक बार बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने एक रात्रि प्रवास के दौरान आचार्य महाप्रज्ञ की कविता को सुनकर खूब प्रशंसा भी की थी। कविता इस प्रकार थी—

बीज में विस्तार होता
बीज क्या ? विस्तार क्या है ?
चित्र में संसार होता
चित्र क्या ? संसार क्या है ?
मृत सलिल का योग पाकर
बीज ही विस्तार बनता;
वासना का भोग पाकर
चित्त ही संसार बनता

जब आचार्य महाप्रज्ञ मुनि नथमल के नाम से लिखते थे, तब उनका गद्य गीतों और लघु निबंधों का एक संकलन भी आया था—'अनुभव चिंतन मनन'। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस किताब का प्राक्कथन लिखा था। उन्होंने इस प्राक्कथन के अंत में कहा था कि "इस छोटी सी पुस्तक को पढ़कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे आशा है कि हर सहृदय को इस पुस्तक से आनंद और प्रेरणा, दोनों की प्राप्ति होगी।"

आचार्यवर ने अपना कविता लेखन राजस्थानी भाषा से प्रारंभ किया था। राजस्थानी, हिंदी और संस्कृत भाषा में उनकी अनेकानेक कविताएँ उपलब्ध हैं। उनकी एक राजस्थानी कविता की बानगी देखिए—

दिल तो है पण दर्द कोनी
दर्द कोनी जद ही दिल है
नहीं तो आज ताईं रेतो ही कोनी
कदेई टूट जातो··
परायो दर्द कुण देखे··

आचार्य महाप्रज्ञ ने जैन संस्कृति के आदि पुरुष ऋषभदेवजी के जीवन-चरित्र पर आधारित महाकाव्य 'ऋषभायण' की भी रचना की है। इस महाकाव्य को पढ़ने का मुझे भी अवसर मिला। मैं मानता हूँ कि आदि पुरुष ऋषभदेवजी के चरित्र-चित्रण के अभाव में मानवता के विकास का इतिहास अधूरा ही रहता अगर 'ऋषभायण' की रचना नहीं होती। आचार्य महाप्रज्ञ ने 'ऋषभायण' का सृजन कर इसे पूर्णता प्रदान की है। 'ऋषभायण' के प्राचीन कथानक के माध्यम से आचार्यश्री ने आधुनिक युग की अनेकानेक समस्याओं पर जो टिप्पणियाँ की हैं। वे हमारे समाज को नई दिशा प्रदान करेंगी। इसमें समाज की पीड़ा, उस पीड़ा का निदान और समाधान सबकुछ सामने आया है।

प्रतिष्ठित कवि, दोहाकार, शायर, नुक्कड़ नाट्यकर्मी और संपादक। विभिन्न विधाओं में सात कविता-संग्रह प्रकाशित। हिंदी अकादमी दिल्ली सरकार का साहित्यिक कृति सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

आचार्य महाप्रज्ञ कृत 'ऋषभायण' में आदि पुरुष ऋषभ के चरित्र के माध्यम से मानव जाति के आदि युग की कथा महाकाव्य के रूप में कही गई है। आदिपुरुष ऋषभ ने युग-परिवर्तन के समय नई सभ्यता और नई संस्कृति का किस प्रकार सृजन किया, इसे विस्तार से इस महाकाव्य में कथा रूप में समझाया गया है। इसमें सृष्टि का विकास, समाज व्यवस्था का सूत्रपात, राजनीतिक तंत्र का विकास, दंड नीति का प्रादुर्भाव, मनुष्य का अकर्म युग से कर्म युग में प्रवेश—इन सब का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसे पढ़ते हुए जेहन में मनु और श्रद्धा के माध्यम से कही गई जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' की कथा भी कहीं-कहीं गूँजने लगती है। आचार्य महाप्रज्ञ ने 'ऋषभायण' की कथा का अपनी साहित्यिक विद्वत्ता और सम्यक् ज्ञानदृष्टि से इस प्रकार ताना-बाना कसा है कि पूरा महाकाव्य सरस व रोचक तो बन ही पड़ा है, साथ ही साथ इसकी ऐतिहासिकता में कवि ने जिस खूबसूरती से वर्तमान की ज्वलंत समस्याओं के मूल का भी जगह-जगह जिक्र किया है, इससे इसमें आधुनिक-बोध भी समाहित हुआ है और इस ग्रंथ की प्रासंगिकता और सार्थकता सिद्ध हुई है। ऋषभ, भरत और बाहुबली की यह मर्मस्पर्शी गाथा असल में हमारी सभ्यता और संस्कृति की इतिहास कथा भी है। आचार्य महाप्रज्ञ ने इसे अतीत की कथा मात्र तक सीमित न रखकर इसमें वर्तमान का जो स्पर्श दिया है, उससे हमारे समाज को नई दृष्टि, नई दिशा और नई संचेतना का आस्वाद मिलेगा।

'ऋषभायण' के निम्नलिखित काव्यांशों में आप आचार्य महाप्रज्ञ की साहित्यिक दृष्टि की असाधारण झलक के दर्शन कर सकते हैं—

मानव, मानव विहित व्यवस्था
सबकुछ है परिवर्तनशील
अनुत्तरित है प्रश्न आज भी
अमुक श्लील है या अश्लील

निज पर शासन, फिर अनुशासन
शासन का यह मौलिक मंत्र
अपने शासन में शामिल था
स्वयं ऋषभ का जीवन तंत्र

सत्य इतना ही नहीं
जितना कि मैं हूँ मानता
व्योम इतना ही नहीं
जितना कि मैं हूँ जानता

सब अपने-अपने नेता हैं
फिर क्यों आवश्यक नेता?
अपनी मर्यादा अपना
अनुशासन जन यदि कर लेता

निज पर शासन जब-जब घटता
तब नेता लेता अवतार
वही कुपथ जाने वालों का
कर सकता है सहज सुधार

मुक्त पवन में श्वास लिया है
मुक्त गगन में किया विहार
उस पंछी का कैसे होगा
पल भर भी पिंजड़े से प्यार?

दुःख जन्म देता दर्शन को
वितथ नहीं चिंतन धारा
दुख ने ही खोजा सुख का पथ
फिर भी सबको सुख प्यारा

मन से मन का मिलन ही
है वास्तविक विवाह
सामाजिक अब बन रहा
जीवन एक प्रवाह

सामाजिक सुख के लिए
महापुरुष की सृष्टि
शस्य श्यामला भूमि के
लिए जलद की वृष्टि

इच्छा से इच्छा बढ़ती है
इच्छा का अपना है चक्र
दूध जन्म देता है दधि को
दधि से फिर बनता है तक्र

हर प्रवृत्ति के पीछे-पीछे
चलती है अवधूत प्रवृत्ति
मन की चंचलता के पीछे
नई-नई होती है वृत्ति

शांति का मैं पक्षधर हूँ
किंतु उसका अर्थ है
एक पाक्षिक बंधुता का
अर्थ सिर्फ अनर्थ है

बाएँ-दाएँ में क्या अंतर
दोनों अवयव एक शरीर
एक धार है अमल सलिल की
केवल अलग-अलग हैं तीर

क्या शोणित से धुल जाएगा
सना हुआ शोणित से वस्त्र
नहीं वैर की ज्वालाओं को
बुझा सकेगा कोई शस्त्र

संशय की भाषा को पढ़ना
नेता की पहली पहचान
उसका निरसन करने वाला
होता है नेतृत्व महान्

आचार्य महाप्रज्ञ की बहुआयामी प्रतिभा और काव्य के प्रति उनका अनन्य अनुराग दरशाता है कि यदि वे पूर्णकालिक कवि होते तो उनकी गिनती निश्चित रूप से विश्व के शीर्षस्थ कवियों में होती।

आचार्य महाप्रज्ञ जी को समर्पित मेरे कुछ दोहे—

महाप्रज्ञ ब्रह्मांड थे, परमात्मा स्वरूप।
शिशु जैसी मुसकान थी, मेधा दिव्य अनूप॥

पारस जैसा स्पर्श था, नैनों में था नेह।
यों वे बेशक देह थे, यों थे मगर विदेह॥

प्रियदर्शी व्यक्तिव था, परम ज्ञान भंडार।
मनसा वाचा कर्मणा, किया जन्म साकार॥

मेधावी थे जन्म से, साहित्यिक थी दृष्टि।
पल, पल वे व्यक्ति से, होते गए समष्टि॥

तुलसी गुरुकुल में पढ़े, किया साधु सत्संग।
फैलाई निज पंथ में, निर्मल ज्ञान तरंग॥

योगी थे हर दृष्टि से, काम किए निष्काम।
ऊपर उठकर स्वयं से, जीवन जिया तमाम॥

दीन दुखी के हित किया, मन से मंगल गान।
जैसे बरसाते कृपा, भक्तों पर भगवान॥

शत्रु नहीं था एक भी, थे वे सबके मीत।
वे मानव के छंद में, थे ईश्वर का गीत॥

खुद को खोकर पूर्ण की, खुद में खुद की खोज।
मुनि नथमल से वे हुए, महाप्रज्ञ उस रोज॥

सा अ
सत्य सदन, ए-५, मनसाराम पार्क,
संडे बाजार लेन, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९८६८३०३५६५
nareshshandilya007@gmail.com

राम झरोखे बैठ के

बुद्धिजीवी उदास क्यों हैं?

● गोपाल चतुर्वेदी

जीवन की सच्चाई है। कोई भी इनसान सुखी नहीं है। दुखी होने के कई कारण हैं, धनवान को आयकर है, अन्य सरकारी विभाग हैं, जो हर प्रकार की वसूली के लिए उसकी ओर आकर्षित हैं। युवा, अधेड़, वृद्ध प्रतिद्वंद्वी हैं, जो बाजार पर हावी होने के प्रयास में हैं। हर कदम पर वह उसे पटखनी लगाने को प्रस्तुत हैं। आय, संपत्ति, भविष्य की योजनाओं आदि के बारे में वह इतना झूठ बोल चुका है कि यह अब उसके व्यक्तित्व का अंत है। सिर्फ एक सच है, जो उसके झूठ के समर्पण से मेल नहीं खाता है। इस सच्चाई से वह कैसे इनकार करे कि उसके एक पत्नी है, दो बच्चे हैं, जिनमें एक लड़का, एक लड़की है और एक फॉर्म हाउस है? दीगर है कि मकान कई हैं, एक पत्नी के नाम और एक पुत्र और पुत्री के वास्ते। यही जोड़ गाड़ियों का है। पहले उसने सोचा था कि एक-दो कार नौकरों के नाम भी खरीद लें, फिर दूसरों के भोगे हुए यथार्थ से उसने सीख ली। इससे कोई लाभ नहीं है। आज के सेवक सिर्फ पैसे के सगे हैं। उनमें से अधिकांश घर के भेदी हैं। सोने की लंका होने की कूबत रखते हैं। उसे सूँघ-सूँघकर कहीं पता लगा कि मालिक ने उनके नाम का बेजा प्रयोग करके एक महँगी गाड़ी खरीदी है, तो वह उसका ढिंढोरा ही नहीं पीटे, बल्कि उसे बेच भी डाले। उसकी निष्ठा बेहद सीमित है। वह केवल पैसे से है।

यह वर्तमान के भौतिक युग का सर्वव्याप्त और समान सच है। नाम भले भगवान्, खुदा, अल्लाह, क्राइस्ट-ईसा या महावीर, बुद्ध अथवा गुरु-द्वारे का हो, सबकी वास्तविक भक्ति केवल नकदी है। चाहे वह पाउंड, डॉलर या अन्य करैंसी हो। कभी श्रद्धा का युग था। मंदिर, मसजिद, गुरुद्वारे, चर्च उसी के अवशेष हैं। मानव का एक अन्य स्वाभाविक चोंचला उसका धार्मिक होने का दिखाना है। इसे तथाकथित धर्म-निरपेक्ष भाई बखूबी निभाते हैं। यह निहित स्वार्थ के अंतर्गत हर धर्म-स्थल पर मत्था टेकने की उत्सुकता और उपक्रम, वास्तविक नहीं, केवल निष्ठा का नाटक है। बहुधा इसका दर्शन चुनाव के पूर्व होता है। जब प्रत्याशी हर धर्म-स्थल के चक्कर काटना नजर आता है। कभी वह बच्चों को प्यार-दुलार से गोद लेकर उन्हें रुलाता है, भले वह डर के मारे 'सू-सू' कर दे, और हर बुजुर्ग के घुटने छूता है।

जब सब जानते हैं कि उसका अपने पिताश्री से कोर्ट में केस चल रहा है। कौन कहे, वह यह साबित करना चाहता है कि उसका बुजुर्गों के प्रति कितना सम्मान है। उसे कोर्ट-कचहरी ले जाने की इकलौती वजह उसके प्रति पिताश्री का अन्याय है, संपत्ति के बँटवारे में। वह भूलता है कि सियासत में पिता की कमाई पूँजी का ही उपयोग कर रहा है। नहीं तो जनता की सेवा के नाम पर उसके जनसेवक बाप का ही योगदान है। कोई उससे जानना चाहे कि वह राजनीति में क्यों आना चाहता है? तो उसका एक ही उत्तर है, ''जनता की सेवा का यह सर्वश्रेष्ठ माध्यम है।'' इस प्रश्न का हर क्षेत्र में यही एक असत्य उत्तर है। चाहे सवाल किसी सरकारी अधिकारी या बाबू से हो, नेता से हो अथवा उद्योगपति से। सब 'जनसेवा' में जुटे हैं। हमें कभी-कभी ताज्जुब होता है कि इतनी 'सेवा' के बावजूद जनता का जीवित रहना ही एक उपलब्धि है, वरना उसमें जन-ता के बजाय जन-था कब का जुड़ जाता। सिर्फ 'ता' के स्थान पर 'था' नहीं आने का श्रेय इन तथाकथित सेवकों का न होकर जनता का खुद का है। यह उसकी जिजीविषा ही है, जिसने इतनी सेवा के बावजूद उसकी साँसों को चलाते रहने को प्रेरित किया है, वरना वह भी अभी तक कब का टें बोल चुका होता?

ऐसे जनसेवक के चेहरे पर कभी-कभार तनाव की रेखाएँ आ जाती हैं। वह इतने दिनों से झूठ का पल्ला पकड़े है कि दूसरों के नाम पर की गई कहीं स्वयं की सेवा का सच न उजागर हो जाए? धनपति डरता है कि कहीं उसकी बेनामी संपत्ति की पोल न खुल जाए? नौकरशाह अपने हर काम में भ्रष्टाचार का आदी है। इस बारे में कुछ प्रगट न हो जाए? कौन कह सकता है कि विभीषण कहाँ नहीं है या कौन है? भक्तों की असलियत तो उनकी मौसमी भक्ति से कब की जग-जाहिर हो चुकी है? सब इस तथ्य से परिचित हैं कि इनकी भक्ति केवल स्वार्थप्रेरित हैं। इन्हें हनुमानजी की याद तक तभी आती है, जब किसी निजी या सार्वजनिक संकट में फँसे हों। कुछ दिनों से वह श्रद्धा में लीन है, क्योंकि

कार-दुर्घटना से उबरे हैं और अस्पताल में भरती है। घर के पूजा-पाठ का प्रसाद नियमित रूप से अस्पताल आता है, डॉक्टर-नर्स के बीमारों के निरीक्षण की तरह। एक नर्स पर वह विशेष कृपालु हैं। वह उसे बहाने बनाकर बुलाते हैं और नाम-मात्र का खुद लेकर बाकी प्रसाद उसे समर्पित करते हैं। इतना ही नहीं, अब तक वह उसके फेस-बुक फ्रेंड बन चुके हैं। उसी पर 'चैट' भी होती रहती है। यों नर्स अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। फेस बुक की वह मित्रता सेवा-समय के बाद ही निभाई जाती है। कभी कभार वह दुर्घटना के प्रति मन-ही-मन आभार भी जताते हैं। न कार से कार की टक्कर होती, न वह अस्पताल आते, न नर्स नूपुर से उनकी भेंट होती! उनकी श्रद्धा-भक्ति के समान कौन कहे कि मित्रता टिकाऊ है कि चलताऊ? भविष्य किसने देखा है? यह जैसा ही अदृश्य है जैसे उनके आराध्य हनुमान। किसी की यह कहने की सामर्थ्य नहीं है कि कब क्या हो जाए? अगले पल की योजना, कुछ की मान्यता है कि मूर्ख ही बनाते हैं। हाल ही में हमें बुद्धिजीवियों की गोष्ठी में जाने का सौभाग्य मिला। वहाँ चर्चा के बजाय हिंसा की मानसिकता अधिक नजर आई।

चर्चा का विषय 'कोरोना और चीन' था। पहले वक्ता जिनका जिम्मा विषय प्रवर्तन था, ने ही यह कहकर शुरुआत की कि वह 'कोरोना' के नाम से ऊब चुके हैं। अब तो प्रतिरोधक 'वैक्सीन' भी आ गई है, अब हमें कोरोना-काल भूलकर इस चीनी रोग के बजाय देशी बर्ड-फ्लू पर ध्यान देना चाहिए। उनका इतना कहना था कि चर्चा-कक्ष में हंगामा मच गया। वक्ता और उनके लाए श्रोता एक साथ अपने वैचारिक प्रतिद्वंद्वियों से भिड़ लिये। एक पक्ष का तर्क था कि चीन का कोरोना से क्या ताल्लुक? दूसरे का मत था कि कोरोना वुहान की प्रयोगशाला का ही प्रयोग है, संसार पर अपनी वैनाशिक क्षमता दिखाने के लिए। ''विश्व को विनाश की ओर ठेलना ही उनका लक्ष्य है।'' इसी बीच विस्तृत चर्चा माईक के बिना सुनाई देती रही। किसी ने लद्दाख सीमा पर चीन की पैंतरेबाजी और धोखेबाजी का जिक्र किया। धीरे-धीरे गंभीर होता वाक्-युद्ध हिंसा की ओर बढ़ चला जब एक पक्ष ने समवेत स्वर में चीन को भद्दी-भद्दी गालियाँ देना प्रारंभ किया। बुद्धिजीवी ऐसी-वैसी गाली नहीं बकते हैं, उनकी गालियाँ भी रचनात्मक होती हैं। विरोधी खेमे ने चीन को गालियाँ देने वालों पर अपशब्दों की तोप दागी। एक दूसरे को शारीरिक दंड देने के लिए दोनों पक्ष आक्रामक तरीके से मुट्ठी बाँधे, हवा में घूँसे चलाते, एक दूसरे की ओर बढ़ते नजर आए। बुद्धिजीवियों की एक विशेषता है। वह एक-दूसरे की बुद्धि खाते हैं। लात-घूँसों से उन्हें परहेज है। उनकी समझ में वाक्-युद्ध ही पर्याप्त है। शारीरिक युद्ध की जरूरत ही क्या है? इतने में संयोजक ने बुद्धि से काम लिया और 'टी-ब्रेक' की घोषणा कर दी। बुद्धिजीवी का मूड कैसा भी हो, खान-पान सदा उसकी प्राथमिकता रहती है। बिना अपना भरे, वह भूखे पेटवालों के लिए कैसे संघर्ष कर सकता है? माहौल में एकाएक शांति छा गई।

इस वाक्-युद्ध के हिंसक होने से उनकी ऊर्जा तिरोहित होने के कगार पर थी और पेट की चिनगारी आग बनने की ओर। सबके चेहरे पर तनाव की रेखाएँ परलक्षित हैं। कहना कठिन है कि यह भूख की हैं या चिंतन की? ऐसे चाय-नाश्ते की मेज देखकर लगा कि तत्कालीन तनाव 'भोजन-भोग' के योग के कारण है। सबके खाने की मेज के सम्मिलित आक्रमण से समोसे की प्लेट खाली होकर, एक और हड़पने के प्रहार से, नीचे गिरकर चूर-चूर हो गई। पकौड़े, रसगुल्ले, बिस्कुट कहाँ और कब अंर्तधान हो गए, खबर ही नहीं लगी। चाय-कॉफी के कंटेनर तो कब के खाली हो चुके थे। कुछ बुद्धिजीवी संयोजक से भिड़ गए इस बदइंतजामी के विरुद्ध। "न कुछ खाने को है न पीने को। चर्चा क्या खाक होगी? आप ही ऐसों के कारण गोष्ठियों का स्तर लगातार गिरता चला जा रहा है।"

उसे विश्वास हो गया कि बुद्धिजीवी बुद्धि तो खाते ही हैं, भोजन से भी नहीं चूकते हैं। लौटी टोल ने देश हित का हवाला देते हुए कहा कि ''हमें बरबादी से नफरत है। मन तो खिन्न है पर हमें यही चिंता सताती रही कि खाने की बरबादी वह भी हमारे द्वारा, हम सब पर कलंक सिद्ध होगी। इसे हम पाप के समकक्ष समझते हैं। इतने भूखों के बीच इस प्रकार अन्न के प्रति यह अपराध अशोभनीय है।'' संयोजक को बुद्धिजीवियों की कथनी और करनी के न समझ आने के कारण सिर में भीषण दर्द है। वह खाने की मेज पर शिथिल बैठा है, पानी का ग्लास लिये। बाकी सारे मेहमान 'जिन' पीने की प्रतियोगिता में लगे हैं।

इस आरोप के साथ डकार लेते, वह बाहर सिधार गए। गोष्ठी का आसमय अंत हो गया, संयोजक को दोपहर के लंच पर निमंत्रण के साथ। बचे बुद्धिजीवी, एक-दूसरे से उदासीन, अपने चेलों से वार्तालाप करते, पास के पार्क में प्रयाण कर गए। कौन कहे वह वहाँ के पेड़-पत्तों से मौन-संवाद कर रहे हों? कुछ की आँखें हरी घास और बेंच पर अर्धमुदित थीं, कुछ खर्राटों से सबको जाग्रत् रख याद दिला रहे थे कि अभी चर्चा का लंच-कांड शेष है। दुखी आयोजक आगे से कभी भी गोष्ठी न करने की शपथ ले रहा था। वह क्लब के मैनेजर से प्रार्थना कर रहा था कि लंच के मैन्यू से आइटम कम करने के। मैनेजर ने उसे समझाया कि इस शॉर्ट नोटिस में कुछ भी करना असंभव है। लंच तकरीबन बन चुका है। उसने फिर से शपथ ली गोष्ठी न आयोजित करने की। उसने एक और शपथ, इसी विषय में, तब ली जब कि उस पर बदइंतजामी का आरोप लगाने वाली शिकायती टोल फिर वापस लौटती दिखी। उसे विश्वास हो गया कि बुद्धिजीवी बुद्धि तो खाते ही हैं, भोजन से भी नहीं चूकते हैं। लौटी टोल ने देश हित का हवाला देते हुए कहा कि ''हमें बरबादी से नफरत है। मन तो खिन्न है पर हमें यही चिंता सताती रही कि खाने की बरबादी वह भी हमारे द्वारा, हम सब पर कलंक सिद्ध होगी। इसे हम पाप के समकक्ष समझते हैं। इतने भूखों के बीच इस प्रकार

अन्न के प्रति यह अपराध अशोभनीय है।'' संयोजक को बुद्धिजीवियों की कथनी और करनी के न समझ आने के कारण सिर में भीषण दर्द है। वह खाने की मेज पर शिथिल बैठा है, पानी का ग्लास लिये। बाकी सारे मेहमान 'जिन' पीने की प्रतियोगिता में लगे हैं।

गोष्ठी के अनपेक्षित अंत के साथ यह संभावना भी बढ़ती जा रही है कि कहीं लंच के साथ भी कोई ऐसी दुर्घटना न घटे? बुद्धिजीवी इस तरह गटागट 'जिन' के गिलास चढ़ा रहे हैं कि रेगिस्तान में प्यासे, पानी पीने वाले को भी शर्म आए। लगता है कि बुद्धि के धनी व्यक्तियों का दिमागी सैंसर पहले चढ़ाए एक-दो गिलासों के बाद काम करना बंद कर चुका है। अब केवल मुफ्तिया जिन में डूब जाने की तमन्ना है। इन पेट भरे सदा प्यासों में से कुछ ने खाने पर भी तवज्जो दी है। दुर्दशा अवर्णनीय है। कुछ का 'सूप' उनका महँगा सूट पी चुका है, कुछ का मेज पर बिखरा है। करीने से सजी डाइनिंग टेबल सूप की तलैया बनने की ओर अग्रसर है कि प्रशिक्षण पाए बैरों की टीम दुर्दशा प्राप्त टेबल-क्लाथ हटाकर दुबारा खाना लगाने की कोशिश में जुटती है। कुछ बुद्धिजीवी, जो कुरसी पर बैठे-बैठे हिल रहे थे, अचानक धराशायी होते हैं। कुछ उल्टी कर रहे हैं, कुछ खकार कर उसी प्रयास में लगे हैं। आयोजक इस दृश्य से हक्का-बक्का है। क्या देश इसी कच्चे माल से कभी विश्व का ज्ञान गुरु बन पाएगा? बिल के साथ यह सब तोड़-फोड़ और गंदगी की सफाई का खर्चा भी लगेगा। उसका बढ़ना लाजमी है। क्लब कहीं उसे ब्लैक-लिस्ट न कर दे? सबके पते उसके पास हैं। वह टैक्सी बुलाकर, उनमें लादकर, इन अस्थायी बेहोशों को घर रवाना करता है। इस आश्वासन के साथ कि वहाँ तक इन्हें होश नहीं भी आया तो कोई-न-कोई घर का सदस्य बिल चुका ही देगा। यह सब शिकारपुर के प्रतिष्ठित निवासी हैं, जिनकी अपनी साख है। दीगर है कि कभी-कभी उस पर ऐसा बट्टा लगता रहता है।

भारत मुफ्तखोरों का देश है। यहाँ सरकार के बाबुओं से लेकर प्रगतिशील बुद्धिजीवियों तक सब 'फ्री' के आदी हैं। बाबू भाग्यशाली हैं। जिन्हें काम पड़ता है, वह उसे नशे का प्रिय पेय घर आकर समर्पित कर जाते हैं। इस टुच्ची भेंट की शिकायत भी की जाएगी तो कौन ध्यान देगा? गंभीर मामला कैश का है। उसके प्रति सब सावधान हैं। यह पुण्य कर्म ऐसे लुके-छिपे किया जाता है कि किसी को अनुमान तक न लगे। बुद्धिजीवी भेंट-गिफ्ट के क्षेत्र में बाबुओं से मात खाते हैं। पहले की सरकारों में सुभीता था। प्रतिष्ठादायक पद भी मिलते थे और वक्त-जरूरत विदेश-यात्रा में भेंट-गिफ्ट भी। जहाज में सवार होते ही 'वेलकम ड्रिंक' प्रारंभ से लेकर पूरे सफर तक साथ आ-आ कर निभाती। इन सब नेक परंपराओं को वर्तमान सरकार में दुखद विराम लग गया है। सत्ता में इतने स्वार्थ-केंद्रित लोग हैं कि घर के बंद कमरे में भले ही धुत्त हो लें कुछ 'शेयर' ही नहीं करना चाहते हैं किसी और से। सैक्युलर और कट्टर में यही अंतर है। वह मिल-बाँट के खाता है। कट्टर अव्वल तो खान-पान के कायल नहीं हैं और खाते भी हैं तो ऐसे अकेले कि साये को भी शक न हो। इसीलिए बेचारे बुद्धिजीवी किसी भी अवसर को गँवाने में यकीन नहीं करते हैं। उल्टे उसका पूरा आनंद उठाते हैं। गोष्ठी परिचर्चा की दुर्घटना इसका आदर्श उदाहरण है। ऐसे अन्य साक्ष्य भी मौजूद हैं। उन्हें फ्री के खानपान के अवसरों का इंतजार है। यही चिंता उन्हें उदास कर जाती है।

जैसे गधे घास चरते हैं, बुद्धिजीवी बुद्धि चरते हैं। यह चर्चा-परिचर्चा में ही संभव है। कि वह सिर्फ अपना न सोचकर दूसरों का सोचते हैं। जैसे राममंदिर के निर्माण में राष्ट्रपति ने चंदा क्यों दिया? देश का अन्नदाता किसान है। सरकार तीन काले कानून लाकर उसके हनन को क्यों उतारू है? इस आंदोलन से क्या वर्तमान सरकार को पटखनी दी जा सकती है? इस संघर्ष में उनका ऐतिहासिक योगदान कैसे संभव है? क्या ट्रैक्टरधारी किसान है या उनके शोषक? अथवा खेती से आयकर की राहत में पाई दौलत के नमूने? ऐसे राष्ट्रीय मसलों के चिंतन से उसकी मुख-मुद्रा गंभीर रहते-रहते उदास हो जाती है। इसके अलावा अन्य अंतरराष्ट्रीय समस्याएँ भी हैं। ट्रंप के जाने और बाइडन के आने से चीन पर क्या प्रभाव पड़ेगा? वह क्या अन्य देशों पर अपना प्रभुत्व जताने में अमेरिका को पीछे छोड़ पाएगा? तय करना है कि चाइनीज एसेंबली के अपने सूत्रों से और प्रगाढ़ रिश्ते कैसे बनाए जाएँ? इसके अलावा उसका ध्यान अपने देश-व्यापी चेलों की तरक्की पर लगा है। क्या करें कि उसमें और वृद्धि हो? उसकी आकांक्षा है कि देश के हर नगर में उसकी विरदावली गाई जाए? वह इसके लिए भी तनावग्रस्त है।

वह हिंदी का इकलौता पुरस्कार पुरुष है। उसकी अपनी सूची है, जिसमें उसे अब तक न मिले सम्मानों की लिस्ट है। वह गंभीर जुगाड़ में लगा है कि कैसे उन्हें हथियाया जाए? उसकी पुरस्कार-लगन अभूतपूर्व है। उसकी महत्वाकांक्षा है कि वह हिंदी के सारे सम्मान पुरस्कार झटक ले। कितना अच्छा हो यदि शरीर, सिर से लेकर पाँव और फिर उँगलियों की पोरों तक कपड़ों के बजाय पुरस्कारों से ढक जाए? कम-से-कम चार-पाँच महीने में एक पुरस्कार का औसत तो होना ही होना। इसके लिए वह हर संभव हथकंडे अपनाता है। वह सम्मान के लिए अपनी वैचारिक आस्था भी अस्थाई या स्थाई रूप से त्यागने को तैयार है। पुस्कारों की होड़ और जोड़-तोड़ में उसका लेखन बंद है। वह ऐसा अर्जुन है, जिसका निशाना सिर्फ पुरस्कार है। जाहिर है कि वह बौद्धिक और शारीरिक तनाव में रहे। किसी और को मिलता है सम्मान तो वह दुखी होकर धीरे-धीरे उदास हो जाता है। साहित्य जगत् में कितनी नाइनसाफी है? कितना त्रासद है दूसरों का सम्मान या लाखों का पुरस्कार? इस गंभीर अन्याय के विरुद्ध उसकी उदासी की स्थाई रेखाएँ अब उसके चेहरे की पहचान बन गई हैं। वह सिर्फ पुरस्कार पाकर मुसकराता है। फिर भविष्य के अन्य सम्मानों का सोचकर गंभीर हो जाता है। अभी तो कई अन्य शेष हैं, जिन्हें जुगाड़ना है।

साअ
९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

राजस्थान के तीर्थ-दर्शन

● **प्रेमपाल शर्मा**

सुपरिचित लेखक-संपादक। बुलंदशहर (उ.प्र.) के मीरपुर-जरारा गाँव में जन्म। देसी चिकित्सा लेखन में विशेष दक्षता। 'जीवनोपयोगी जड़ी-बूटियाँ', 'स्वास्थ्य के रखवाले', 'सचित्र जीवनोपयोगी पेड़-पौधे', 'घर का डॉक्टर', 'स्वस्थ कैसे रहें?' तथा 'शुद्ध अन्न, स्वस्थ तन' कृतियाँ चर्चित। 'साहित्य मंडल' नाथद्वारा द्वारा 'संपादक-रत्न' की मानद उपाधि। संप्रति 'सवेरा न्यूज' (साप्ताहिक) का संपादन एवं आयुर्वेद पर स्वतंत्र लेखन।

१३ मार्च, २०२०, शुक्रवार की सायं को हम चार जन—मैं, मेरी श्रीमतीजी, बेटी रिचा तथा छोटा बेटा पीयूष चेतक एक्सप्रेस में सवार हुए और तड़के सवा पाँच बजे चित्तौड़गढ़ स्टेशन पर उतर गए। यहाँ कँपाने वाली ठंड है, क्योंकि एक दिन पूर्व इस पूरे अंचल में बारिश और ओलावृष्टि हुई थी। स्टेशन के प्रतीक्षालय में दैनिक क्रिया से निवृत्त हो तैयार हो गए। प्रात: सात बजे ही हमारे पूर्व परिचित केशवराज का ड्राइवर साथी हमसे मिला कि आप तैयार हो जाइए, तब तक केशवभाई पहुँच रहे हैं। इस बीच हमने वहीं चाय-नाश्ता किया और फिर मैंने दोनों बच्चों को रेलवे स्टेशन की दीवारों पर बने चित्र दिखाए, जो मेवाड़ के रणबाँकुरे राणाओं की गौरव-गाथा बयाँ कर रहे हैं। आठ बजे के करीब केशवभाई आ गए, प्रणाम-पाती हुई। फिर मैंने उन्हें 'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक दिया, जिसमें पिछली यात्रा के वर्णन में उनका काफी जिक्र आया है। इसे देखते ही केशवभाई की खुशी का पारावार न रहा। वे अपने सब ड्राइवर साथियों को दिखाने लगे कि इस आर्टिकल में सर ने मेरे बारे में लिखा है। केशवभाई बड़े ही मिलनसार और सहज व्यक्ति हैं।

मैंने केशव को अपना कार्यक्रम बताया और खर्च के बारे में पूछा। केशवभाई कहने लगे—सर, आप जो भी देंगे, मैं खुशी से ले लूँगा। मैंने कहा कि हर बात में स्पष्टता रहनी चाहिए, आपको नुकसान नहीं होना चाहिए। सकुचाते हुए केशव ने १८०० रुपए का खर्च बताया। तब हम अपना सामान रख तुरंत ऑटो में बैठ गए। केशव ने कहा, सर रूट के हिसाब से पहले आपको आवरी माता, साँवलिया सेठ मंदिर, फिर शनिदेव का मंदिर दिखाता हूँ। यहाँ से लौटकर आपको चित्तौड़गढ़ का किला दिखाऊँगा।

चाय-नाश्ता तो कर ही लिया था। अब हमारा ऑटो चित्तौड़ को छोड़ भदेसर मार्ग पर असावर गाँव की ओर दौड़ने लगा। ऑटो में ठंडी हवा लग रही है, सो बच्चों ने शॉल ओढ़ ली, मैंने भी मफलर से कान कस लिये। जब तक हम मंदिर पहुँचें, तब तक मैं आपको चमत्कारी आवरी माता के विषय में वह सब बताता हूँ, जो केशव ने हमें बताया।

आवरी माता का मंदिर राजस्थान के भदेसर जिले में चित्तौड़गढ़ स्टेशन से करीब ३८ किमी. की दूरी पर है। यह राजस्थान के प्राचीन और प्रसिद्ध मंदिरों में से एक है। कहा जाता है कि आसावर गाँव में स्थित यह मंदिर ७५० वर्ष पुराना है। इस मंदिर के बारे में एक लोककथा प्रचलित है कि भदेसर में आवाजी नाम के एक जमींदार थे। उनके सात बेटे और एक बेटी थी। बेटी का नाम 'केसर' था। बचपन से ही वह पूजा-पाठ में निमग्न रहती थी। जब वह विवाह योग्य हुई तो जमींदार ने अपने सातों बेटों को केसर के लिए सुयोग्य वर खोजने के लिए भेजा। सातों भाई अलग-अलग दिशा में अलग-अलग गाँवों में गए और अपनी-अपनी समझ से योग्य वर देखकर विवाह पक्का कर आए। विवाह की तैयारियाँ होने लगीं। सातों जगह से एक ही दिन बारातें आ रही थीं। कन्या केसर बड़ी चिंतित थी। कुछ उपाय न देखकर उसने कुलदेवी की आराधना की कि इस मुसीबत से मुक्ति दिलाएँ। ठीक विवाह वाले दिन धरती फटी और केसर उसमें समा गई।

बेटी को धरती में समाते देख पिता ने दौड़कर बेटी का पल्लू पकड़ लिया। इससे नाराज होकर केसर ने पिता को लूला हो जाने का शाप दे दिया। बाद में शाप से मुक्ति के लिए पिता ने इस मंदिर का निर्माण कराया, जो आज 'आवरी माता' के नाम से प्रसिद्ध है। इस मंदिर में मनोकामना तो पूरी होती ही है, पर यह मंदिर पक्षाघात से पीड़ित रोगियों के इलाज के लिए ज्यादा प्रसिद्ध है। दैनिक आरती में सब रोगी तथा उनके तीमारदार शामिल होते हैं। पक्षाघात से प्रभावित अंग पर मलने के लिए रोगियों को मंत्रों और पवित्र रागों से सिद्ध किया तेल दिया जाता है। आवरी माता की पूजा-अर्चना से रोगी के पीड़ित अंग ठीक हो जाते हैं, तब बहुत से रोगी श्रद्धा और समर्पण से चाँदी या सोने का उक्त अंग बनवाकर माता को अर्पण करते हैं। मंदिर प्रात: साढ़े पाँच बजे से रात्रि दस बजे तक खुला रहता है। हनुमान जयंती तथा नवराते यहाँ धूमधाम से मनाए जाते हैं।

अब हम भी आवरी माता के मंदिर के पास आ पहुँचे हैं। केशव ने ऑटो सड़क किनारे खड़ा कर दिया, फिर बोला, 'सर, आप दर्शन करके आइए, मैं आपको यहीं मिलूँगा।' अभी प्रात: का समय है। इस मंदिर के परिसर में आगे बढ़ते हैं। कोई-कोई दुकानदार अपनी परसाद की दुकानें

सजा रहे हैं। मंदिर तक जाने वाला रास्ता काफी चौड़ा है; यहाँ पेड़-पौधे पर्याप्त संख्या में हैं। पटरी पर परसाद लगाए एक बहिन से परसाद लिया; जिसमें नारियल, सिंदूर, चूड़ियाँ, चुनरी आदि हैं। अपने जूते-चप्पल हमने यहीं उतार दिए। आगे बढ़कर मंदिर की ड्योढ़ी पर दंडवत् किया। प्रवेश द्वार से आगे ही माता का छोटा सा मंदिर है। थोड़ी ऊँची बड़ी खिड़की से इसमें प्रवेश किया। माता की मूर्ति मंदिर के मुख्य भाग में बाईं दीवार के साथ विराजमान है, जिसे फूलों और स्वर्णाभूषणों से सजाया गया है। श्रीमतीजी ने मुख्य पुजारीजी के द्वारा माता को पूजा-सामग्री भेंट की, पुजारीजी ने उन्हें प्रसाद दिया। फिर हम सब ने माता को दंडवत् प्रणाम किया। मंदिर के चहुँओर रैलिंग की गैलरी बनी है। मंदिर के दोनों ओर लंबे बरामदों में पक्षाघात के मरीज तथा उनके तीमारदार ठहरे हुए हैं। कुछ रोगी प्रभावित अंगों का व्यायाम कर रहे हैं। आस्था ऐसी है कि रोगी यहाँ से ठीक होकर ही जाते हैं।

मंदिर में माता के दर्शन के बाद गैलरी से होते हुए नीचे की ओर सीढ़ियाँ उतरती हैं, जहाँ एक विशाल तालाब है, इसे बेहद पवित्र माना जाता है। इसमें बड़ी संख्या में मछलियाँ अठखेलियाँ कर रही हैं। यहाँ आने वाले दर्शनार्थी इनको कुछ-न-कुछ जरूर खिलाते हैं। श्रीमतीजी ने इनके लिए चने खरीद लिये, जो हम सब ने मछलियों को खिलाए। जैसे ही दाने पानी पर गिरते हैं, बस मछलियों में छीना-झपटी होने लगती है, पानी में भारी हलचल पैदा हो जाती है। मछलियों का यह खेल कौतुक भरा है। तालाब के ही किनारे रामभक्त हनुमान की सुंदर मूर्ति स्थापित है। हम सब ने संकटमोचक को दंडवत् प्रणाम किया। बेटी रिचा ने यहाँ के कुछ फोटो भी उतारे। मैं देख रहा हूँ, ऊँची-नीची पहाड़ियों और झरनों की खूबसूरती के बीच यह मंदिर बड़ा ही मनभावन लग रहा है। यहाँ पक्षाघात के सैकड़ों मरीजों का इलाज हो रहा है। वास्तव में यह बड़ा चमत्कारी और सिद्ध मंदिर है। बाहर आने के लिए मंदिर के बाईं ओर से रास्ता है। हम लोग पुन:-पुन: दंडवत् कर केशव के पास लौट आए और ऑटो में बैठ आगे के लिए चल पड़े।

साँवलिया सेठ मंदिर का भव्य प्रवेश द्वार

अब हमारा ऑटो चित्तौड़गढ़-उदयपुर राजमार्ग पर मंडफिया गाँव की ओर दौड़ रहा है तो हम आपको साँवलिया सेठ (भगवान् कृष्ण) के मंदिर के बारे में कुछ बताते चलते हैं। साँवलिया सेठ का मंदिर चित्तौड़गढ़ से चालीस किमी. दूर चित्तौड़गढ-उदयपुर राजमार्ग पर भदेसर कस्बे के पास मंडफिया गाँव में स्थित है। मंदिर के बारे में कहा जाता है कि आज से लगभग साढ़े चार सौ साल पहले, १८४० ई. के आसपास यहाँ के भोलाराम गुर्जर नाम के ग्वाले को एक रात्रि को स्वप्न में भदेसर के पास चापड़ गाँव में तीन मूर्तियाँ दिखाई दीं। ग्वाले के बताए स्थान पर जब खुदाई की गई तो वहाँ भगवान् कृष्ण की तीन सुंदर मूर्तियाँ निकलीं। इनमें से एक मूर्ति को मंडफिया गाँव में, दूसरी को भदसोड़ा तथा तीसरी को चापड़ गाँव में स्थापित कर दिया गया। इन तीनों स्थानों पर इनके मंदिर हैं और तीनों ही 'साँवलिया सेठ के मंदिर' कहलाते हैं। ये तीनों एक-दूसरे से पाँच किमी. के दायरे में स्थित हैं। बड़ी संख्या में कृष्णभक्त यहाँ दर्शनार्थ आते रहते हैं।

साँवलिया सेठ मंदिर ट्रस्ट ने मंडफिया में स्थित मंदिर का पुनर्निर्माण कराया, जो आज 'साँवलियाजी धाम' कहा जाता है। परंतु पहली बार इसका निर्माण मेवाड़ राजपरिवार द्वारा कराया गया था। साँवलियाजी भगवान् भक्त मीराबाई के वही गिरधर गोपाल हैं, जिनकी वे प्रेम दीवानी थीं। यह धाम वैष्णव भक्तों का पवित्र तीर्थ बन गया है। यहाँ भक्तों की मन-वांछा पूरी होती है, कोई इनके दरबार से खाली हाथ नहीं लौटता है। मंदिर में हमेशा निर्माण-कार्य चलता रहता है। वास्तुकला और शिल्पकारी का यह अद्‌भुत उदाहरण है। गुजरात के अक्षरधाम मंदिर की तर्ज पर बना यह मंदिर उससे कहीं भव्य और विशाल है। भगवान् साँवलियाजी के बारे में भक्तों में ऐसा विश्वास है कि भक्त साँवलिया सेठ को जितना ज्यादा भेंट करते हैं, वे उसका खजाना कई गुना भर देते हैं। अनेक भक्त अपनी खेती तथा व्यापार में साँवलिया भगवान् का हिस्सा रखते हैं; ऐसे भक्त हर माह आकर भगवान् को उनका हिस्सा भेंट कर जाते हैं। इतना ही नहीं, साँवलिया सेठ के विदेशी भक्त भी हैं, जो विदेशों में अर्जित अपनी आय से भगवान् का हिस्सा उन्हें भेंट करते हैं।

इन भक्तों के द्वारा भारतीय रुपए के अलावा अमरीकी डालर, पाउंड, रियाल, दीनार और नाइजीरियन नीरा के साथ कई अन्य देशों की मुद्रा मंदिर में भेंट-स्वरूप आती है। साँवलिया सेठ की ऐसी मान्यता है कि देश के कोने-कोने तथा विदेशों से हर वर्ष लगभग एक करोड़ भक्त दर्शनार्थ यहाँ आते हैं। यहाँ के पुजारियों की मानें तो करीब साढ़े आठ से नौ लाख तीर्थयात्री और श्रद्धालु हर माह दर्शन करने आते हैं। साँवलिया मंदिर ट्रस्ट इस मंदिर की ही देखरेख नहीं करता है। इसके द्वारा शहर में अस्पताल तथा विद्यालय चलाए जा रहे हैं। मंदिर को मिलने वाली दानराशि ट्रस्ट द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, धार्मिक आयोजन, मंदिर विकास और मूलभूत सुविधाओं पर खर्च की जाती है। इतना ही नहीं, यह मंदिर ट्रस्ट मंडफिया के आसपास के सोलह गाँवों में विकास कार्य भी इसी राशि से करवा रहा है।

इस मंदिर में एक अनोखी व्यवस्था है कि साँवलिया सेठ मंदिर का भंडारा हर महीने अमावस्या के एक दिन पहले चतुर्दशी को खोला जाता है। इसके बाद अमावस्या का मेला शुरू हो जाता है। दीपावली के अवसर पर यह भंडारा दो माह तथा होली पर डेढ़ माह तक चलता है। बहुत से

भक्त मंदिर में रसीद कटवाकर एक नंबर का रुपया दान कर जाते हैं और यह दान राशि लाखों में होती है। केशव ने बताया कि जनवरी माह में जो भंडारा खुला तो उसमें ६६ लाख रुपए की दानराशि आई थी। इस राजमार्ग पर प्रशासन द्वारा लगाया गया हरा बोर्ड दिखाई पड़ रहा है कि 'साँवलिया सेठ मंदिर के परिसर में आपका स्वागत है।' मंदिर के स्वर्ण-मंडित शिखर पर फहराता भगवा ध्वज दूर से ही दिखाई पड़ रहा है। मंदिर से दूर, जहाँ मंदिर परिसर में सिलसिलेवार दुकानें बनी हैं, वहीं केशव ने ऑटो सड़क किनारे खड़ा कर दिया और बोला, 'सर, इधर से आप लोग दर्शन करने जाइए। लौटते में चौक पर दुकान से यहाँ का लड्डू और मठरी खरीदना मत भूलिएगा।' अच्छा, कल सवेरे फोन पर श्याम भाईजी ने भी यहाँ के लड्डू और मठरी की प्रशंसा की थी।

मैं देख रहा हूँ, मंदिर की किलेनुमा चहारदीवारी किलोमीटरों में फैली है। मंदिर के मुख्य द्वार तक आने-जाने के लिए दो चौड़े पक्के रास्ते हैं। जहाँ से मंदिर का रास्ता शुरू होता है, चौक पर फूलमाला, प्रसाद, खान-पान, कॉस्मेटिक्स तथा अन्य चीजों की दुकानें सजी हैं। यहीं से फूलमाला, अगरबत्ती, मिसरी आदि का प्रसाद ले लिया गया। जब हम लोग मंदिर के प्रवेश द्वार पर पहुँचे तो देखा, यहाँ किसी तरह का प्रसाद नहीं चढ़ता है और न ही अंदर ले जाने दिया जाता है। लेकिन प्रसाद बेचने वाले दुकानदार दर्शनार्थियों से प्रसाद ले जाने का बार-बार आग्रह करते हैं। प्रवेश-द्वार पर तैनात सुरक्षा गार्ड प्रसाद लेकर वहाँ रखे टब में गिरा दे रहा है। खैर, मंदिर के प्रवेश-द्वार से आगे बढ़े। भीमकाय नक्काशीदार खंभों पर टिका विशाल हॉल नीचे संगमरमर का फर्श, जो हाल ही में बनकर तैयार हुआ है। इसकी भव्यता और सुंदरता देख दर्शनार्थी यहीं फोटो खींचने में रम जाते हैं।

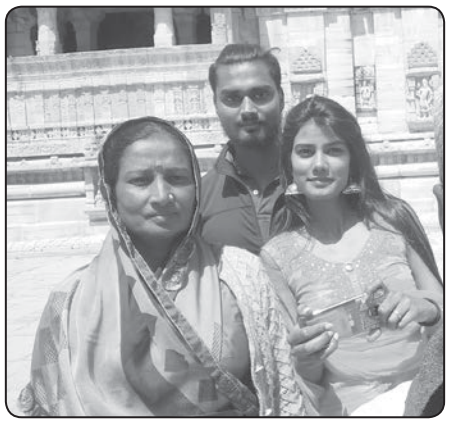

कुंभ-श्याम मंदिर, किला चित्तौड़गढ़

इस हॉल के अंदर के दोनों सिरों पर प्रसाद के काउंटर हैं। यहाँ से बाईं ओर मुड़कर विशाल लंबा बरामदा है, जो मुख्य मंदिर तक जाता है। इसमें कलात्मक खंभे तथा नक्काशीदार पत्थर की जालियाँ, इनके बीच-बीच में दीवार पर जगह-जगह कृष्णलीला की सुंदर झाँकियाँ काँच-मंडित तसवीरों में शोभायमान हैं। बरामदों में दोनों ओर स्त्री-पुरुषों के लिए प्रसाधन सुविधा है। मुख्य मंदिर के विशाल गुंबद के नीचे गर्भगृह में भगवान् साँवलिया सेठ (कृष्ण भगवान्) की स्वर्ण-आभूषणों से सज्जित मूर्ति विराजमान है। पंक्तिबद्ध श्रद्धालु दर्शन करते हुए आगे बढ़ते जा रहे हैं। मंदिर की व्यवस्था में लगे पुजारी भी उन्हें आगे बढ़ाते जाते हैं, जिससे छोटे-बड़े सभी को भली प्रकार दर्शन हो सकें। स्वर्ण-रजत की आभा से देदीप्यमान भगवान् कृष्ण की नयनाभिराम झाँकी अपने आकर्षण में बाँध लेती है। गर्भगृह के ठीक सामने अनेक कलात्मक और लकदक करते खंभों पर खड़ा विशाल मंडप है, यहाँ से भी भगवान् के दर्शन किए जा सकते हैं। यहाँ सैकड़ों तीर्थयात्री मंदिर को पार्श्व में लेकर फोटो खींच रहे हैं; वीडियो क्लिप बना रहे हैं। यहाँ बड़ी ही चहल-पहल और हर्षातिरेक का वातावरण है। बेटी रिचा और पीयूष ने भी खूब फोटो खींचे। दोनों भाई-बहन बहुत प्रफुल्लित हैं।

इस मंडप के ठीक सामने विशाल लॉन है, जिसमें हरी घास और फुलवारी करीने से लगाई गई है। यह लॉन चार भागों में बँटा है। इसके पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण संगमरमर के रास्ते हैं। मुख्य मंदिर के सामने थोड़ा बाईं ओर गणेश, शिव तथा चामुंडा माता के छोटे-छोटे मंदिर हैं। मंदिर की सुंदरता और भव्यता बेमिसाल है। मंदिर से बाहर आने के लिए वैसा ही भव्य बरामदा है, जैसा कि अंदर आने के लिए है; यहाँ भी कृष्णलीला की झाँकियाँ दीवारों पर अंकित हैं। मंदिर के शिखर पर बावन किलो स्वर्ण का कलश स्थापित है, जो बहुत दूर से ही दिखाई पड़ता है। दर्शन कर अब हम बाहर की ओर लौट रहे हैं। मंदिर के काउंटर पर आकर लड्डू का प्रसाद लिया; प्रति लड्डू चालीस रुपए का है। मट्ठी उपलब्ध नहीं है, वैसे एक मट्ठी तीस रुपए की है। मंदिर के बाहर सड़क के उस पार एक विशाल शेड बना है, जिसमें हजारों यात्री बैठ या ठहर सकते हैं। मेले के समय यह खचाखच भरा रहता है। मंदिर की चहारदीवारी के साथ जन-सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जगह-जगह हाथ धोने के लिए पानी की टंकियाँ तथा पानी के टैंकर खड़े हैं। मंदिर से बाहर निकल हम चौराहे पर आ गए; यहाँ श्रीमतीजी ने सिंदूर खरीदा। बाजार में स्थित मंदिर के काउंटर पर मट्ठी के बारे में पूछा, मट्ठी यहाँ भी उपलब्ध नहीं है। जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए हम केशव के पास लौट आए।

ऑटो में बैठ अब हम चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित कपासन के शनि मंदिर के दर्शन के लिए जा रहे हैं। जब तक हम वहाँ पहुँचें, तब तक शनि मंदिर के बारे में केशव भाई कुछ बता रहे हैं—सर, ऐसी कहावत है कि पुराने समय में मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह अपने हाथी की हौदी पर शनिदेव की मूर्ति लेकर उदयपुर की ओर लौट रहे थे। जहाँ पर आज यह मंदिर है, वहाँ पहुँचने पर अचानक शनिदेव की मूर्ति गायब हो गई। राणा के कारिंदों तथा सैनिकों के बहुत ढूँढ़ने पर भी मूर्ति नहीं मिली। काफी समय के बाद यहाँ के जोतमल नामक जाट के खेत में बेर की झाड़ी के नीचे शनिदेव की मूर्ति का कुछ हिस्सा प्रकट हुआ। फिर क्या था, यहीं पर उनकी पूजा-अर्चना शुरू हो गई। भक्त लोग तेल भी चढ़ाने लगे। हालाँकि कुछ लोगों ने मूर्ति को ऊपर निकालने के प्रयास किए, पर असफल रहे। कालांतर में यहाँ एक महात्माजी आए। कुछ लोगों के साथ मिलकर उन्होंने मूर्ति का अधिकांश हिस्सा ऊपर निकाल लिया; पर बाद में महात्माजी भी न जाने कहाँ चले गए। तभी से यह शनिदेव का स्थान प्रसिद्ध हो गया।

ऐसा भी कहा जाता है कि यहाँ तेल का प्राकृतिक कुंड है। शनिदेव को भेंट किया जाने वाला तेल इसमें इकट्ठा होता रहता है और यह तेल चर्मरोगों में कारगर बताया जाता है। सच या झूठ, ऐसा भी लोगों का कहना है कि एक बार इस प्राकृतिक कुंड से मंदिर के सेवकों द्वारा व्यावसायिक उपयोग के लिए तेल निकाल लिया गया तो वह गुणविहीन होकर मात्र तरल पानी जैसा बन गया। इसको शनिदेव का चमत्कार मान लिया गया।

हमारा ऑटो भी अब राजमार्ग को छोड़ बाईं ओर शनि मंदिर के परिसर की ओर मुड़ गया है। रास्ता काफी चौड़ा है। प्रसाद वाले दुकानदार अपनी-अपनी अस्थायी प्रसाद की दुकानों के आगे खड़े होकर बड़े आग्रह के साथ वाहन को अपने यहाँ पार्किंग करने के लिए ट्रैफिक वाले की तरह हाथ का इशारा कर रहे हैं। मथुरा के कोकिला वन में स्थित शनिमंदिर में भी ऐसा ही नजारा देखने को मिलता है। आखिर दाईं ओर खुला स्थान देख केशव ने ऑटो खड़ा कर दिया। जूते-चप्पल हमने ऑटो में ही छोड़ दिए। यहीं एक अस्थायी दुकान से प्रसाद भी ले लिया। प्रसाद में सरसों के तेल की एक शीशी, काले कपड़े की एक छोटी सी गाँठ, नारियल, फूल इत्यादि हैं। आज शनिवार है, अभी ज्यादा भीड़ नहीं है। बेटा पीयूष दिल्ली में हर शनिवार को रोहिणी स्थित शनि मंदिर जाया करता है।

हम सभी ने साथ-साथ मंदिर में प्रवेश किया। कुछ सीढ़ियाँ चढ़ते ही दाईं ओर तेल चढ़ाया जा रहा है; पीयूष ने शनि महाराज को तेल चढ़ाया। यहाँ तेल चढ़ाने के दो ऊँचे काउंटर हैं, जिन पर जाली लगी है, इन्हीं में तेल गिराया जा रहा है। पंक्तिबद्ध हो आगे बढ़े। कुछ सीढ़िया उतरकर बाईं ओर शनिदेव की मूर्ति विराजमान है। बिजली के लट्टुओं की रोशनी में यह स्थान लकदक हो रहा है। यहाँ पर खासी भीड़ हो गई है। श्रीमतीजी ने पुजारीजी को देकर अपनी भेंट शनिदेव के चरणों में अर्पित की और शनिदेव को मत्था टेक हम लोग आगे बढ़ गए। बाहर निकलने का रास्ता भी उतना ही चौड़ा है, जितना कि आने का। यहाँ प्रसाद में बेसन तथा तिल के बड़े-बड़े लड्डू मिल रहे हैं। बेसन का लड्डू चालीस रुपए का तथा तिल का तीस रुपए का है। प्रसाद-स्वरूप हमने दोनों तरह के लड्डू खरीद लिये। बाहर आकर मैदान में बच्चों ने गन्ने का रस पिया। केशव भाई को पूछा तो उन्होंने पीने से मना कर दिया। यहाँ बिल्कुल गाँव जैसा वातावरण है।

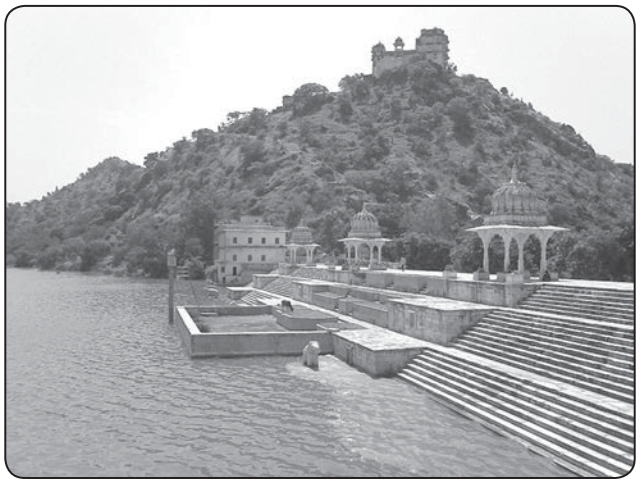

नौ चौकी, राजसमंद, राजस्थान

यहाँ से ऑटो में बैठ वापस चित्तौड़ लौट पड़े हैं। लगभग बारह बजना ही चाहते हैं। केशव ने ऑटो चित्तौड़गढ़ दुर्ग की ओर मोड़ दिया। कई दरवाजों को पार कर किले के मुख्य दरवाजे पर पहुँचे। किले की प्राचीर पर खड़े होकर केशव ने बच्चों को यहाँ के बारे में बहुत सी बातें बताईं, तब तक मैं टिकटें ले आया। बच्चों ने यहाँ फोटोग्राफी की। केशव ने एक-एक कर कुंभामहल, रनवीर की दीवार, नौलखा भंडार, मीराबाई मंदिर, कुंभश्याम मंदिर आदि दिखाए। अब हम विजय-स्तंभ पर आ गए। रेहड़ी पर चाय की दुकान लगाए उसी बहन (पिछली यात्रा वाली) से चाय बनवाई। केशव ने पिछली यात्रा के वर्णन में उसके लिए लिखी गई पंक्तियाँ उसे दिखाईं और कहा कि बहन, सर ने आपको और आपकी चाय को भी फेमश कर दिया है। चाय वाली बहन बड़ी खुश हुई। चाय तो यहाँ सैकड़ों लोग पीते हैं, पर हमारी चाय पर इतना ध्यान कौन देता है! मैं देख रहा हूँ कि बहन के चेहरे पर कितनी खुशी है और आँखों में आभार।

चूँकि पीयूष जिम में कसरत करने जाता है। वेट लिफ्टिंग के कंपटीशन की तैयारी कर रहा है, अत: प्रात: हेवी नाश्ता करता है, तो कल रात पीयूष ने अपने नाश्ते के लिए तीन रोटियाँ रखवाई थीं। बच्चे ऑटो में बैठे चाय-बिस्कुट ले रहे थे कि तभी एक पिल्ला तथा छोटे-बड़े दो कुत्ते वहाँ आ गए, जो बड़े कमजोर दिख रहे हैं। ऑटो से बाहर निकल पीयूष ने पिल्ले को बिस्कुट खिलाया, वह मजे से खाने लगा। फिर पीयूष ने अपनी रोटियाँ निकाल लीं और टुकड़े तोड़-तोड़कर बारी-बारी से तीनों के मुँह में देकर खिलाने लगा। पिल्ले को रोटी ज्यादा पसंद नहीं आई, वह दो टुकड़े खाकर चाय वाली की रेहड़ी की ओर चला गया, मगर उन दोनों कुत्तों ने रोटी लपालप खा ली। दोनों कुत्ते पीयूष का आभार जताते हुए से वहीं ऑटो के पास बैठ गए।

चित्तौड़गढ़ किला दिखाकर केशव भाई ने हमें बस अड्डे पर उतार दिया। आधा घंटा पहले ही बस निकल गई, यहाँ से अब नाथद्वारा के लिए कोई सीधी बस नहीं है। एक ड्राइवर ने बताया कि मावली तक चले जाओ, वहाँ से मिनी बस आपको जरूर मिल जाएगी। आखिरकार चित्तौड़ से उदयपुर जाने वाली बस में मावली का टिकट लिया। प्रति सवारी टिकट ८० रुपया तथा महिलाओं के लिए ६० रुपए का है। बस लगी हुई है, जो ४:२८ बजे यहाँ से प्रस्थान करेगी। राजस्थान रोडवेज का सूक्ति वाक्य है—'शुभास्ते पन्थान: सन्तु।' बस का टिकट तो पोस्ट कार्ड से भी लंबा-चौड़ा है। इससे कागज ही की बरबादी होती है; परंतु इस पर छपा पानी की बचत का विज्ञापन प्रेरणादायी है—'जल से ही हम सबका अस्तित्व है।'

अपने नियत समय पर बस गंतव्य की ओर ठुमक चली। बस यात्रियों से लगभग पूरी तरह भर गई है। रास्ते में पड़ने वाले गाँवों, कस्बों और बाजारों में बस रुकती है, सवारियाँ उतरती हैं और नई सवारियाँ चढ़ती जाती हैं। एक घंटा बीता, दो घंटे बीते, रास्ता हनुमान की पूँछ की तरह लंबा होता जा रहा है। धूप को भी अब पीलिया हो गया है। बूढ़ा सूरज हमारी बस के एकदम आगे-आगे नाक की सीध में दौड़ रहा है। उधर सूरज डूबने को है, इधर मेरा मन भी डूबा जा रहा है कि यहाँ से वाहन न मिला तो हम कहाँ पड़ेंगे! चिंता की लकीरें गहरी होती जा रही हैं। कहाँ मैं सोच रहा था कि सायंकाल नाथद्वारा पहुँचकर श्रीनाथजी के दर्शन करेंगे। मैं कंडक्टर के पीछे वाली सीट पर बैठा बार-बार पूछ लेता हूँ कि मावली कितनी दूर है?

राजस्थान के राजमार्ग एकदम दुरुस्त हैं। देश में कहीं भी चले

जाइए, केंद्रीय मंत्री नितिन गडकरीजी का काम बोलता है। आखिरकार छह बजते न बजते बस ने हमें मावली चौक पर उतार दिया। यह चौराहा मेरा देखा-भाला था, स्टेशन पास में ही है, सो जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए हमने स्टेशन पार किया और सड़क के उस मोड़ पर आ गए, जहाँ पर नाथद्वारा के लिए बसें मिला करती हैं। अँधेरे के साये जमीन पर उतरने लगे। एक दुकानदार से पूछने पर पता चला कि फिलहाल नाथद्वारा के लिए कोई बस नहीं है, रोडवेज की अंतिम बस साढ़े आठ के बाद ही आएगी। मैं बड़ा हताश हूँ, बच्चे साथ में हैं। उसी समय एक ऑटो वाला उधर आ निकला। दिनभर के काम के बाद घर लौट रहा है। मैंने उससे पूछा कि नाथद्वारा चलोगे तो उसने कहा कि हाँ चलेंगे, किराया ३५० रुपया लगेगा। मैंने पूछा कि ३०० नहीं लेंगे क्या? अंतत: बहुत आगा-पीछा सोचकर हम उस ऑटो में बैठ नाथद्वारा पहुँच गए। मधुसूदन भाईजी की दुकान पर सामान रख झटपट पहले श्रीनाथजी के दर्शन किए। 'साहित्य मंडल' के प्रधानमंत्री श्याम भाईजी ने हमारे ठहरने व कल घूमने की सब व्यवस्था कर दी। भाईजी ने प्रात: हमें नंदालय के बहुत अच्छे से दर्शन कराए। मंदिर से बाहर निकल भाईजी ने हमें चाय पिलवाई। बच्चे आज भी पोदीने वाली उस चाय को याद करते हैं और बेटी रिचा वैसी चाय घर पर बनाने की कोशिश करती है। हमारे ड्राइवर गोवर्धनजी गाड़ी लेकर पहुँच चुके हैं। चाय पीकर हम लोग भी कमरे पर लौटे। जल्दी की वजह से भाईजी ने साहित्य मंडल विद्यालय के कोने पर खड़े खोमचे वाले से पोहा और फाफड़ा का नाश्ता पैक करवा दिया। श्याम भाई गजब के फुरतीले हैं। आलस उन्हें छू तक नहीं गया है। सच्चाई और ईमानदारी की ऊर्जा से सदैव लबालब रहते हैं। भाईजी ने कमरे का किराया, रात्रि के भोजन-नाश्ता आदि का पैसा भी हमें नहीं देने दिया। प्रात: से ही हमारी सेवा में तत्पर, चाय-नाश्ता कराया, फिर भी भाव ऐसा कि मैंने कुछ नहीं किया। भाईजी की इस सदाशयता को किन शब्दों में बयाँ करूँ!

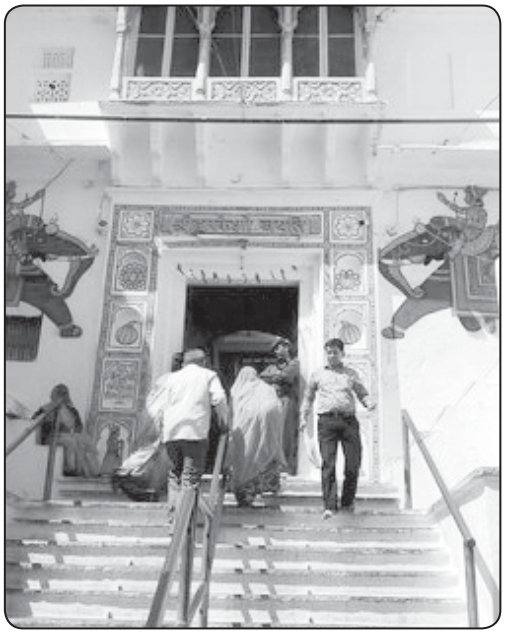

श्रीद्वारकाधीश मंदिर, काँकरोली

यहाँ से गाड़ी में बैठ हम सबने पहले अपने ड्राइवर गोवर्धन के साथ नाथद्वारा का प्रसिद्ध लालबाग देखा, फिर काँकरोली के लिए निकले। जब तक हम काँकरोली पहुँचें, तब तक यहाँ के बारे में भी आपको कुछ बताते हैं। काँकरोली एक कसबा है, जो नाथद्वारा से ३५ किमी. दूर है। यह राजसमंद जिले में उदयपुर-अजमेर राजमार्ग पर स्थित है। महाराणा राजसिंह द्वारा बनवाई गई यहाँ की विशाल 'राजसमंद झील' बड़ी प्रसिद्ध है। यहाँ पर भगवान् द्वारकाधीश विराजमान हैं। यह वैष्णव भक्तों का तीसरा पीठ माना जाता है तथा 'पंचद्वारका' में भी इसकी गिनती होती है। लेकिन भगवान् द्वारकाधीश का यहाँ पर आगमन कैसे हुआ, यह अपने आप में रोचक है। मुगल काल सनातन धर्म पर बड़ी मुसीबत का दौर था। मतांध औरंगजेब और उसकी क्रूर सेना हिंदू मंदिरों को लूटकर नष्ट-भ्रष्ट कर रही थी। मथुरा के गोकुल में स्थित भगवान् द्वारकाधीश मंदिर पर भी इनकी वक्रदृष्टि पड़ी तो तत्कालीन स्वामी गिरधरजी महाराज अन्य सेवकों के साथ द्वारकाधीश भगवान् के विग्रह को अहमदाबाद ले गए। अहमदाबाद भी उपद्रवियों का केंद्र बनता जा रहा था, तब श्री ब्रजभूषणजी (प्रथम) महाप्रभु की सुरक्षा को ध्यान में रखकर मेवाड़ आए।

उस समय मेवाड़ भी बुरे दौर से गुजर रहा था। सूखे के कारण यहाँ पानी की भारी किल्लत हो गई थी। लेकिन उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने सहायता का हाथ बढ़ाया और पहले-पहल संवत् १७२१ में उन्होंने काँकरोली के आसोटिया गाँव में मंदिर का निर्माण कराया। संवत् १७२७ में द्वारकाधीश प्रभु पहले सदरी में बिराजे, फिर भाद्रपद शुक्ल सप्तमी को ठाकुरजी आसोटिया के नए मंदिर में विराजने लगे। संवत् १७५१ में यहाँ भारी वर्षा के कारण मंदिर जलमगन हो गया और पानी में एक टापू सा दिखाई देने लगा। ऐसी परिस्थिति में महाराजजी ठाकुरजी को सुरक्षित स्थान देवलमंगरी ले गए, जहाँ ठाकुरजी मात्र तीन दिन बिराजे। इन परिस्थितियों को देखते हुए महाराज कुमार श्री अमर सिंहजी ने नए मंदिर के निर्माण के लिए पहाड़ी पर जमीन निश्चित कर दी। जब यहाँ मंदिर बनकर तैयार हो गया, तब इसका नाम 'गिरधरगढ़' रखा गया। संवत् १७७६ में चैत्र कृष्ण पक्ष की नवमी को भगवान् द्वारकाधीश इस नए मंदिर में विराजे और आज भी यहाँ पर आने वाले अपने भक्तों का कल्याण कर रहे हैं।

समय-समय पर इस मंदिर का कुछ-न-कुछ निर्माण कार्य होता रहा और संवत् १९८० में मंदिर वर्तमान स्वरूप में बनकर तैयार हुआ। सर्वांग सुंदर हवेलीनुमा यह मंदिर प्रसिद्ध राजसमंद झील के किनारे शान से खड़ा है। इसका स्थापत्य नाथद्वारा में स्थित श्रीनाथजी के मंदिर 'नंदालय' की तरह ही है। इसके निर्माण में संगममर पत्थर, ईंट तथा चूने का उपयोग हुआ है। देश के कोने-कोने से कृष्णभक्त यहाँ दर्शनों के लिए वर्ष भर आते रहते हैं। यहाँ प्रात: सात बजे मंगला, आठ से शृंगार दर्शन, नौ बजे से ग्वालदर्शन, साढ़े दस बजे राजभोग दर्शन, अपराह्न में चार बजे से उत्थापन दर्शन, फिर भोग दर्शन, आरती तथा सायं सात बजे शयन दर्शन होते हैं। समय-समय पर यहाँ कई उत्सव मनाए जाते हैं। होली, दीपावली, रामनवमी, जन्माष्टमी, अक्षय तीज को विशेष आयोजन होते हैं, तब यहाँ भक्तों की भारी भीड़ होती है।

काँकरोली की सड़कों-गलियों को पार करते हुए हमारी टैक्सी मंदिर की पार्किंग में आ पहुँची। अभी दस बजे हैं। अंदर जाने पर पता चला कि राजभोग के दर्शन १०:३० बजे खुलेंगे। तब तक हम मंदिर

के बाईं ओर सीढ़ियाँ उतरकर राजसमंद झील देखने आ गए हैं। इसमें मछलियाँ बहुतायत में हैं। दर्शनार्थी इनको कुछ-न-कुछ खिला रहे हैं। हमने भी मछली दाना खरीदकर उन्हें खिलाया। जैसे ही दाना पानी में फेंकते हैं, मछलियों में छीना-झपटी होने लगती। वे पानी से ऊपर उछल जाती हैं। मछलियाँ बहुत जागरूक होती हैं। इनसान से वे सुरक्षित दूरी बनाकर रखती हैं। बिल्कुल किनारे पर दाना गिराने पर वे वहाँ तक आने में परहेज करती हैं। पानी के थोड़ा अंदर डालने पर झुंड-की-झुंड मछलियाँ दानों पर टूट पड़ती हैं। महाराणा राजसिंह द्वारा बनवाई गई इस विशाल झील का ओर-छोर दिखाई नहीं पड़ रहा है। झील के तल से मंदिर कई मंजिल की ऊँचाई पर है। यहाँ से लौटकर मंदिर में दर्शनों की पंक्ति में लगे। मंदिर के प्रवेश द्वार पर दोनों ओर हाथी सवार और शेर-बाघों के सुंदर सजीव चित्र बनाए गए हैं। मंदिर में दर्शन खुले, सब लोग दर्शनों के लिए आगे बढ़े। गर्भगृह में भगवान् द्वारकाधीश की मनोहारी मूर्ति विराजमान है, इनकी अलौकिक छवि श्रद्धालुओं को अपने आकर्षण में बाँध लेती है। यहाँ दर्शन कर अब हम ने बाईं ओर अंदर के कमरे में विराजमान मथुरादास प्रभु के दर्शन किए। पूरा मंदिर बहुत सुदृढ़ और भव्य है। ठाकुरजी को दंडवत् प्रणाम कर अब हम काँकरोली में ही 'नौ चौकी' स्थल को देखने आए हैं।

यहाँ पर बहुत सी महिलाएँ मछलियों के चारे के रूप में आटे की गोलियाँ बेच रही हैं और सभी की सभी यहाँ आने वाले दर्शनार्थियों की बड़ी मनुहार करती हैं। हमने भी आटे की गोलियाँ खरीद लीं। 'नौ चौकी' राजसमंद जिले के दर्शनीय स्थलों में से एक है। इसका निर्माण महाराणा राजसिंह ने कराया। इसकी विशेषता यह है कि इस राजसमंद झील में उतरने के लिए हर नौ सीढ़ियों के बाद एक बड़ी चौकी या चौखटा बनाया गया है, इसीलिए इसका नाम 'नौ चौकी' पड़ा है। यहाँ हर निर्माण नौ के जोड़ से बना है, यही इसकी विशेषता है। सीढ़ियाँ नीचे उतरकर हमने मछलियों को आटे की गोलियाँ खिलाईं। रिचा-पीयूष ने यहाँ खूब फोटो खींचे। यहाँ के दाहिने सिरे पर ऊँची पहाड़ी पर एक मंदिर दिखाई पड़ रहा है। बड़ा मनोरम दृश्य है, यहाँ की सुंदरता दर्शनीय है।

यहीं झील के बिल्कुल किनारे स्थित एक इमारत में महाराणा राजसिंह पेनोरमा है। इसका प्रति व्यक्ति पंद्रह रुपया टिकट लगता है। महाराणा राजसिंह बहुत प्रजापालक राजा हुए। यहाँ पाँच कमरों में महाराणा राजसिंह के शासन काल, उनके त्याग, देशरक्षा के लिए किए गए युद्ध, मंत्रियों के साथ मंत्रणा, हाड़ी रानी द्वारा अपना शीश काटकर किया गया बलिदान, महाराणा की कुलदेवी, मुगलों से युद्ध आदि की सुंदर झाँकियाँ मेवाड़ की गौरवगाथा बता रही हैं। सायं को यहाँ लाइट-साउंड शॉ भी दिखाया जाता है। यह सब देखने और देश के लिए राणाओं द्वारा की गई कुर्बानियों को सराहते हुए हम गाड़ी में बैठे और गोवर्धनजी ने गाड़ी नाथद्वारा की ओर दौड़ा दी। पहले उन्होंने नाथद्वारा के गोवर्धन पर्वत के दर्शन कराए। पर्वत पर गाड़ी से ही जाना पड़ता है, कुछ लोग पैदल भी जा रहे हैं। इस पर्वत के ऊपर से पूरे नाथद्वारा का नजारा बड़ा साफ दिखता है, नीचे बहती यहाँ की यमुना अर्थात् बनास नदी पतली धार सी दिखाई पड़ रही है। यहाँ से अब हम नाथद्वारा में भगवान् शिव की जो विशाल मूर्ति बन रही है, उसके पीछे से होकर 'गणेश टेकरी' देखने आ गए हैं। यहाँ सफेद संगमरमर का गणेशजी का बड़ा ही भव्य मंदिर है। मंदिर के चौकोर प्रांगण में ढलान की ओर संगमरमर की छतरियाँ बनी हैं, जहाँ से पूरे नाथद्वारा का नजारा लिया जा सकता है।

यहाँ से कुछ सीढ़ियाँ उतरकर पहाड़ की ढलान को चौरस बनाकर फव्वारे और बच्चों के लिए झूले लगे हैं; फव्वारे में शिव की मूर्ति लगी है, यहाँ से बाईं ओर सीढ़ियाँ उतरकर सुंदर उपवन है, वृक्षों को बिल्कुल यथास्थिति में रख छोटे-छोटे ताल बनाए हैं। छोटी सी टेकरी पर हनुमान मंदिर है, इसके नीचे एक सुंदर तालाब है, जिसमें बच्चे किलोल कर रहे हैं। पहाड़ के पूरे ढलान को बड़ी तरतीब से पर्यटन-स्थल के रूप में ढाला गया है, जिधर ढलान है, उधर ही उतरने के लिए सीढ़ियाँ बना दी गई हैं। पूरे स्थल को देखते हुए हम सीढ़ियों से ढलान की ओर सड़क पर उतर गए; गोवर्धनजी गाड़ी लिये हमें वहीं मिल गए और तुरत-फुरत गाड़ी में बैठ हल्दीघाटी की ओर चल पड़े। सबसे पहले हम हल्दीघाटी स्थित 'बादशाह बाग' पर रुके। मेवाड़ के इतिहास में यह बाग अपना विशेष स्थान रखता है। यहाँ के खुले मैदान में मुगलों की सेना ने पड़ाव डाला था। २१ जून, १५७६ के दिन राणाप्रताप की राणबाँकुरी सेना का पहली बार यहीं मुगल सेना से मुकाबला हुआ। जिसमें प्रताप की सेना ने मुगल सेना के छक्के छुड़ा दिए और मुगल सेना में भगदड़ मच गई थी। जो बाद में यहाँ से तीन किलोमीटर दूर खमनोर गाँव में इकट्ठी हुई और जहाँ हल्दीघाटी का इतिहास प्रसिद्ध युद्ध हुआ। यह घास का सपाट मैदान है, इसके पीछे ऊँची-नीची पहाड़ियाँ हैं। यह बादशाह बाग राणाप्रताप की मुगलों पर प्रथम विजय की याद दिलाता है।

राजपूती सेना पर गौरवान्वित होते हुए अब हम हल्दीघाटी में ही स्थित महाराणा प्रताप संग्रहालय देखा, फिर स्वामिभक्त चेतक की समाधि। इसके बाद यहाँ से वापस लौट नाथद्वारा-उदयपुर राजमार्ग पर वल्लभाचार्य आश्रम देखा, फिर भगवान् श्रीनाथजी की गऊशाला देखने गए। यहाँ से हमारी गाड़ी मावली स्टेशन के लिए चल पड़ी। काफी समय रहते ही गोवर्धन भाई ने हमें स्टेशन पर उतार दिया। अपने ठीक समय पर चेतक एक्सप्रेस प्लेटफार्म नं. दो पर आकर रुकी और हम अपनी बोगी में चढ़ अपनी बर्थों पर बैठ गए। सबसे पहले हमने भोजन किया, फिर चित्तौड़गढ़ स्टेशन आने पर मैं बच्चों के लिए पोहा तथा चाय ले आया। लगभग नौ बजे हम बिस्तर लगाकर सो गए। भोरे-भोर करीब चार बजे गाड़ी गुड़गाँव पहुँच गई। हमने जागकर अपना सामान समेट लिया और लगभग ५:१५ पर हम दिल्ली कैंट स्टेशन उतर गए।

हालाँकि यात्रा में बड़ी दौड़ा-दौड़ी रही, परंतु बच्चों ने खूब आनंद किया। ठीक एक सप्ताह बाद ही देश पर कोरोना का कहर टूट पड़ा। पूरे देश में लॉकडाउन लागू हो गया। इस नाते यह यात्रा और भी स्मरणीय बन गई।

जी-३२६, अध्यापक नगर,
नांगलोई, दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ९८६८५२५७४१

आमने-सामने

• ओमप्रकाश शर्मा 'प्रकाश'

वह अच्छा विद्यार्थी था। बी.ए. ऑनर्स की कक्षा में वह छोटा, मासूम सा विद्यार्थी पढ़ने में भी ठीक-ठाक था। वैशिष्ट्य यह था कि वह बहुत अच्छी गजलें लिखता था। 'पास-आउट' हो जाने के बाद भी वह मेरे मन-मस्तिष्क में बसा रहा। कॉलेज से निकलने के बाद भी वह गजलें लिख-लिखकर 'सर' को भेजता रहा। प्राध्यापक हर गजल पर उसे प्रोत्साहित करता। एक दिन पूछा, 'तुम्हारे पिताजी क्या करते हैं?'

'सर, साबुन की दुकान है।'

'क्या तुम भी दुकान पर बैठते हो?'

'हाँ सर, बैठता ही हूँ। जब तक आगे कुछ तय नहीं होता तो दुकान पर बैठने के अलावा और चारा ही क्या है?'

साबुन की दुकान और गजलें लिखना कुछ बात जुड़ती नहीं थी। कभी-कभी मुझे संदेह होता कि गजलों में प्रयुक्त ठेठ उर्दू के शब्द उसे कैसे आते हैं? कहीं इधर-उधर से पढ़-उतारकर तो नहीं भेज रहा?

मैंने पूछा एक दिन। 'तुम्हें उर्दू के इतने शब्द कैसे पता हैं? तुमने कहीं पढ़ी है?'

'नहीं सर, मेरे दादाजी हैं, उन्हें शेर-ओ-शायरी का बहुत शौक है। पाकिस्तान में उन्होंने उर्दू पढ़ी थी। वहाँ शिक्षा का माध्यम उर्दू ही था। उन्हीं की 'गाइडेंस' है।'

कई बरस बीत गए।

सुदीप मेरे मन-मस्तिष्क के किसी कोने में पलता-पनपता रहा, अनजाने, अनायास रूप से। सुदीप··· यही नाम था उसका। कई और बरस बीत गए।

अब मैं अवकाश ग्रहण कर चुका हूँ।

एक दिन उस प्रिय विद्यार्थी को खोज निकालने का मन बना लिया।

कॉलेज के पुराने रिकॉर्ड के पन्नों की गर्द छानकर मैंने उसका पता नोट किया-१६१५, अकबरपुरी, जे.जे. कॉलोनी यानी झुग्गी-झोपड़ी कॉलोनी।

मेरे मन में अजीबो-गरीब तस्वीरें बन-मिट रही थीं। कितनी भाव-लहरियाँ उठ-गिर रही थीं। उसे कैसा लगेगा, जब इतने वर्षों बाद उसका वृद्ध प्राध्यापक उसके सामने अकस्मात् प्रकट हो जाएगा? मुझे कैसा लगेगा, जब वह सौम्य, मासूम सा विद्यार्थी अब बड़ा होकर मेरे सामने सचमुच में खड़ा होगा। अभिभूत हो जाएगा। हो सकता है, पैरों पर गिर पड़े। वह तब भी बहुत काव्यमय व्यक्तित्व वाला था।

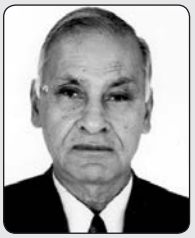

रामलाल आनंद कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय) में बत्तीस वर्षों तक अध्यापन करने के पश्चात् रीडर (एसोसिएट प्रोफेसर) के पद से अवकाश ग्रहण। एम.ए. कक्षाओं के अध्यापन और शोध-निर्देशन का भी अनुभव। अब तक आठ पुस्तकें प्रकाशित। पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कविताएँ, यात्रा-वृत्तांत आदि प्रकाशित।

कॉलोनी बहुत गंदी थी। जगह-जगह कूड़े के ढेर थे। खुली नालियों में और कहीं-कहीं नालियों के ऊपर भी बालकों की बिष्ठा ठहरी हुई थी। मक्खियों के झुंड-के-झुंड जहाँ-तहाँ चिपके पड़े थे। हाथों पर दो-चार मच्छर काट गए। मैंने खद को कोसा। बेकार ही यहाँ आया। क्या लेना उसे उस विद्यार्थी से? कितने आते हैं, चले जाते हैं।

वह वार्ड नं. १६ में रहता था। मैं ढूँढते-ढूँढते परेशान हो गया। आखिर एक से पूछ ही लिया, 'भाई साहिब, ये वार्ड नं. १६ किधर है?'

'वार्ड नं. १६ तो आप उधर पीछे छोड़ आए बाबूजी।' 'लेकिन वहाँ के लोगों ने तो मुझे इधर भेजा है। तो पीछे होगा··· पार्क के पीछे।' मैं पार्क में से होता हुआ वार्ड १६ में पहुँचा। वार्ड १६ तो बहुत बड़ा है भाई साहब। कितना नंबर पूछ रहे हैं? मैंने नंबर बताया तो बोले, वो दुकान बंद कर गए हैं।

'अब कहाँ गए हैं?' 'मुझे नहीं पता··· बहुत साल पहले की बात पूछ रहे हैं आप!'

'हाँ··· आँ···आँ···' मैंने दीर्घ विश्वास लेकर कहा, 'तुम्हारे घर में कोई बुजुर्ग हैं? शायद उसे पता होगा।'

'हाँ, मेरी दादी है। जरा बुला दो या पूछ कर बता दो। कोई जरूरी काम है?' उसने पसीने से लथ-पथ मेरी काया देखकर पूछा। 'हाँ··· नहीं··· नहीं··· काम तो कुछ खास नहीं।'

उसकी दादी ने बाहर निकलकर बताया कि वे सब एल ब्लॉक में चले गए थे। सुदीप के भाई ने वहाँ राशन का डिपो खोला था।

हारे-थके शरीर किंतु उत्साह और जिज्ञासा भरे मन से मैं एल ब्लॉक की ओर चल पड़ा।

एक से भी ज्यादा का समय हो गया था। चमकीली धूप थी। कमीज

के नीचे पसीने की धाराएँ बह रही थीं।

सुदीप का बड़ा भाई राशन तौल-तौलकर दे रहा था। बी.पी.एल. कार्डधारियों की लंबी लाइन थी।

मैंने कहा, 'मैं सुदीप से मिलना चाहता हूँ।'

'सुदीप तो यहाँ नहीं। पीछे घर है। वहाँ होगा। कोई काम हो तो बुलाऊँ।'

मंजिल इतनी निकट है इस अहसास से मन पुलकित हो गया। काफी सीमा तक थकावट मिट गई।

उसने घर के सामने खड़े होकर सुदीप को पुकारा। वह निकला। दहलीज पर ३०-३५ वर्ष का एक अधेड़ खड़ा था।

मैंने अपना नाम और कॉलेज बताया। वह एकदम पहचान गया, लेकिन वह तुरत-फुरत न आगे बढ़ा, न उसने कोई तीव्र प्रतिक्रिया ही दिखाई। कुछ सोचता-सा बस खड़ा रहा। 'कहिए सर, किस तरह आए?' उसने ठंडे लहजे में पूछा। मैं सिर्फ तुम्हें मिलने आया हूँ। मुझे कोई काम नहीं है। मुझे आपसे क्या काम हो सकता है भला? 'नहीं सर, कोई तो काम होगा! ऐसे इतनी दूर धूप में इतने बरसों बाद कौन आता है? जरूर किसी कारण से आए होंगे। आप कुछ छिपा रहे हैं।'

मैं अवाक् था; निःशब्द··· कुछ आहता सा···। वह मूर्तिवत् था। मैं भी मूर्तिवत् था। उसकी आँखों में दुनियादारी के अनबूझे सवाल तैर रहे थे। अविश्वास के एक धक्के से मेरा मन चूर-चूर हो गया था। मेरी आर्द्र आँखों में उसके सवालों का जवाब नहीं था।

सा.अ.
सी-४, बी/११० (पॉकेट-१३)
जनकपुरी, नई दिल्ली-११००५८
दूरभाष : ९८७०१०३४३३

गगन गुलाल मलता है···

कविता

• व्यासमणि त्रिपाठी

जाने-माने लेखक। लगभग एक दर्जन से ज्यादा पुस्तकों के साथ लेख, कहानियाँ, कविताएँ और समीक्षाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा आयोजित दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन में 'विश्व हिंदी सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

सिर्फ होली बहाती है

उल्लास का सागर हिलोरें मारता प्रतिक्षण,
निलय नक्षत्र से भी प्रमद आवाज आती है।
किरण खोलती घूँघट मधुर कमनीय कलियों का,
गाती गीत उन्मद भ्रमर की पाँत आती है॥

किसलय अरुणिमा का नया अंदाज तो देखो,
कोमल करों से किस तरह प्रिय को बुलाती है।
अभी तक मौन थी जो न जाने किस उदासी में
वही पिक फाग में अब नया सरगम सुनाती है॥

भौंरों के गुन-गुन में स्वर अपना मिलाकर जो,
चुनरी ओढ़कर पीली अंबर को लुभाती है।
धरा खेलती होली प्रिय के संग फागुन में
गगन गुलाल मलता है वह भूरज उड़ाती है॥

भावनाएँ सुप्त थीं दुबकी हुई जो शीत में,
मधुरता फिरा कर उष्णता उनको जगाती है।
तरु लता तृण-गुल्म में एक हो जो बह रही,
वह वारुणी की धार सिर्फ होली बहाती है॥

कोरोना के साये में होली

यों ही रही सन् बीस की होली
उल्लास उमंग रहा बस फीका,
अनेक थे भाव थी बात अनेक
पर हो न सका कुछ भी मन, जी का।
अँगिया चुनरी नहीं भीग सकी
मुख, माथ लगा न गुलाल व टीका,
कोरोना का खौफ रहा इतना
कि हाथ भी छू न सकी वह पी का॥

पिय आने की बात सुनी जब से
कलि कुंद समान रही मुसकाई,
करनी थी बात पिया संग देर
पर एक नहीं जिह्वा पर आई।
दुष्ट कोरोना ने जैसा किया
कहे पर भी न कोई पतिपाई,
आलिंगन, चुंबन तो दूर रहा
वह छू न सकी पिय की परछाईं॥

सा.अ.
एन.जी.-२२, टाइप-४, जंगलीघाट,
पोर्टब्लेयर, अंडमान-७४४१०३
दूरभाष : ९४३४२८६१८९
tripathivyasmani@gmail.com

'तुळु' भाषा की दो कविताएँ

तुळु भाषा कर्नाटक के तटीय प्रदेश (मंगलुरु, उडुपी आदि) में प्रचलित है, जिसे कर्नाटक की प्रमुख व प्रथम भाषा 'कन्नड़' के बाद का स्थान प्राप्त है। द्रविड़ भाषा समूह में भी तुळु भाषा शामिल है। तटीय कर्नाटक के 'यक्षगान-बयलाट', 'भूतारा धना', 'सिरि पाड्दन' आदि कला तथा आराधना से संबंधित प्रकारों को देश-विदेशों में लोकप्रिय बनाने में तुळु भाषा की अहम भूमिका है।

कन्नड़ के अवकाश प्राप्त प्राध्यापक डॉ. के. चिन्नप्पगौडा, जो तुळु भाषा के हैं, साथ ही तुळु भाषा के कवि भी हैं। 'भूत अराधाना' के क्षेत्र में व्यापक अनुसंधान कार्य किया है। पाल्ताडी रामकृष्ण आचार भी तुळु भाषा के जानेमाने कवि तथा लेखक हैं। तुळु भाषा में इनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कर्नाटक सरकार द्वारा स्थापित 'तुळु साहित्य अकादेमी' के पूर्वाध्यक्ष हैं। अवकाश प्राप्त पाल्ताडी रामकृष्ण आचार तुळु भाषा व साहित्य को समृद्ध बनाने में कार्यरत हैं। यहाँ पर उपर्युक्त दो कवियों की तुळु भाषा की दो कविताओं का हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं।

क्या बुद्ध रोया!

मूल : **पाल्ताडी रामकृष्ण आचार**

अनुवाद : **एच.एम. कुमारस्वामी**

बुढ़ापा रुग्ण मृत्यु को देख रो उठा सिद्धार्थ
त्यागकर गाँव-घर जा बैठे तुम कानन में
पीकर झरने का पानी खाया तुमने जंगल के फल
बैठकर बरगद के नीचे तपस्या की
शांतिमंत्र प्राप्त कर बने बुद्ध तुम जब
बंद हुआ तुम्हारा रोना तब
चमक उठी मुसकराहट तुम्हारे मुख पर।

इच्छाओं के दास बनेंगे जो, होंगे धोखे का शिकार
इच्छा व धोखा त्याग दे दोनों को, तो हिंसा को स्थान नहीं
बुद्ध के शुद्ध मन व मुग्ध मुँह को देख
मारे खुशी के लोग बन गए पागल
उद्घोषित कर बैठे बुद्धं शरणं गच्छामि।

किसा गोतमी बच्ची के शव को लपेटकर
आई तुम्हारे पास
और पूछी उसने तुमसे
मृत्यु को रोकने असरदार दवा क्या है?
कहा तुमने तब···बिन मृत्यु के घर से लाओ सरसों
गौतमी की समझ में आयी तब पैदा जो हुआ है मरण सहज ही है उसे
जातस्य मरणं ध्रुवम्।

उस दिन तुम गए अंगुलिमाला को तलाशने
तुम्हारे सिर काटने वह जो आया, स्वयं झुकाया सिर तुम्हारे सामने
आज कांदहार में उमरखान आया तुम्हें खोजते
धर्मांध लॉडेन चकनाचूर कर दिया तुम्हें
तुम्हारी स्निग्ध हँसी आज तुम्हारी रक्षा नहीं कर पाई
तुम्हारी तपस्या का फल कोई निकला नहीं
सारी दुनिया हँसी मगर तुम्हे दंडित करनेवालों को
नहीं हुआ कुछ नहीं असर

दागकर गोली उड़ा दिया तुम्हारे सिर को
बम रखकर चीर डाला तुम्हारे पेट को
बंदूक गोली बारूद से चकनाचूर कर डाला तुम्हें
तुम्हारी पावन मिट्टी को बनाया उन्होंने श्मशान
इतना होने पर भी यह तथागत रोया नहीं
होंठ फटते रहे तुम हँसते ही रहे
काश, पागल वे, क्या कर रहे हैं? सोचे नहीं;
मालूम ही नहीं रहा उनको
कहते-कहते ही तुम हो गए विलीन मिट्टी में
खामखाह बरबाद किया तुम्हें उन्होंने।

फिर भी तुमने बहाए नहीं आँसू
खिसकते आते रहे पत्थरों के बीचोबीच से
सुनाई दे रही थी तुम्हारी आवाज मंद-मंद···

सुपरिचित लेखक। जाने-माने अनुवादक। कुल २४ पुस्तकें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा ९०१८ का 'सौहार्द सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

हिंसा की दवा नहीं हिंसा
बरसाओ करुणा उनके ऊपर।

कहाँ गए तुम्हारे शिष्य सारे
क्या चुप बैठे गए समझकर कि यही तुम्हारा आदेश है
बुद्धं शरणं गच्छामि कहकर मूँदे क्या आँखें वे सारे
संघं शरणं गच्छामि कहकर सो गए क्या वे सारे।

यह थिरकना क्यों?

मूल : **के. चिन्नप्पगौडा**
अनुवाद : **एच.एम. कुमारस्वामी**

यह थिरकना क्यों रे तेरा और मेरा
यह थिरकना क्यों?
गंध वस्त्र को उतार साफ-सुथरे धारण कर
बजाते ढोल पवित्र पूजा वेदिका के सामने
पकड़कर सुपारी-पान साथ ही दिए हुए चावल हाथ में
बीती कहानी को ही बार-बार दुहराते मरते तुम।
यह थिरकना क्यों रे तेरा और मेरा
यह थिरकना क्यों?

लीप-पोतकर मुँह पर चमकीले पीले रंग को
बाँधकर पाँवों में भारी मंजीर छनकनेवाले
पकड़कर हाथों में धारदार पवित्र खड्ग भाँजते सीधे
जलते मशालों को लगाते छाती पर
चिनगारी उगलती आग में कूद जाओगे तुम।
यह थिरकना क्यों रे! तेरा और मेरा
यह थिरकना क्यों?

करते उद्घोषित ऊँची आवाज में भूत* की जन्म कहानी
भूत के आविर्भाव की कथा को फिरोकर क्रमबद्ध हर बार
धारण कर भूत का भेष नाचते-चीखते भूत के ही जैसे
होकर खड़े मुखिया के महल के बाहरी अहाते के कोने में।
यह थिरकना क्यों रे! तेरा और मेरा
यह थिरकना क्यों?

उत्सव त्योहार छोटे-बड़े, मुर्गबाजी या हो मेला आदि
भेस डालकर स्वाँग रचाते
भेस डालकर पेट बाँधकर थिरकते तुम
छूटने के बाद माया, पवित्र वेदिका से हटकर
लौटोगे तुम भ्रमरहित वास्तव को मानकर हार
तो यह थिरकना क्यों रे तेरे और मेरे
यह थिरकना क्यों रे! तेरा और मेरा
यह थिरकना क्यों?

११०, बी.ई.एम.एल, २ स्टेज, वाटर टैंक के नजदीक,
देवप्रसाद लेआउट (राजराजेश्वरी नगर),
मैसुरु-५७००३३ (कर्नाटक)
दूरभाष : ६३६४२२१४०५
drhmkthani@gmail.com

**भूत : भूत या दैव कर्नाटक के तटीय प्रदेश 'तुळुनाडु' में पाए जानेवाले जानपद (Folk) आराधना के दैव हैं, जिन्हें किसी दु:खांत वीर या पुरुष आदि के अवतार अथवा उनकी आत्मा का रूप मानकर पूजा जाता है। विविध प्रकार के भूत या दैव के वार्षिक नेमोत्सव (पूजा) का आयोजन किया जाता है। भूत या दैव का निर्दिष्ट वेश धारण करनेवाले ज्यादत निचले वर्ग के ही होते हैं, जिनकी यह वृत्ति परंपरागत होती है।*

गांधी-चिंतन और भारतीय समाज

● राजीव गुप्ता

वर्तमान समय संचार-क्रांति का है। संचार-क्रांति के कारण लोगों के जीवन के हर क्षेत्र में परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन एकदम से अचानक नहीं आया है, अपितु इस परिवर्तन को सबसे पहले एक संक्रमण काल के दौर से गुजरना पड़ा है। हम यह जानते हैं कि परिवर्तन संसार का नियम है। परिवर्तन शब्द का अर्थ होता है—बदलाव। परिवर्तन प्रकृति का एक महत्त्वपूर्ण गुण है। परिवर्तन को मुख्यत: आंतरिक और बाह्य रूपों में समझा जा सकता है। आंतरिक परिवर्तन संरचनात्मक होता है, इसका संबंध परिवार, विवाह, नातेदारी के परिवर्तन से होता है। सामाजिक परिवर्तन ही समाज में भिन्नता को जन्म देता है। जेम्स के अनुसार, 'सामाजिक बदलाव वह शब्द है, जो कि सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक अंतर्क्रियाओं या सामाजिक संगठन के किसी पहलू में होने वाली भिन्नताओं या परिवर्तनों हेतु इस्तेमाल किया जाता है।'

शोभिता जैन भारतीय समाज की विविधता को समझाते हुए लिखती हैं—नातेदारी-रिश्तेदार जैसे शब्दों के अर्थ समझने में बहुत आसान लगते हैं, परंतु इस शब्द के अर्थ को उस समय समझने में बहुत कठिन होता है, जब हमें यह पता चलता है कि उसके पड़ोसी की धारणाएँ उसकी धारणाओं से बिल्कुल भिन्न हैं। उदाहरण के लिए हिंदी भाषी क्षेत्र में चाचा, मौसी, मामा तथा बुआ के बच्चों को आपस में भाई-बहन माना जाता है और उनके बीच वैवाहिक संबंधों की मनाही है। दूसरी ओर द्रविड़ परिवार की भाषाओं को बोलने वाले क्षेत्रों में मामा तथा बुआ के बच्चों के बीच वैवाहिक संबंध होना सामान्य सी बात है। इस प्रकार अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि भारत एक विविधतापूर्ण देश है और यहाँ समय-समय पर सामाजिक परिवर्तन होता रहा है। कोई भी परिवर्तन चाहे वह सामाजिक अथवा कोई अन्य परिवर्तन हो, एकदम से अचानक नहीं हो जाता है, बल्कि उसे एक संक्रमण काल के दौर से गुजरना पड़ता है।

संक्रमण काल से अभिप्राय एक ऐसे संधि-काल से है, जो दोनों स्थितियों के बीच की स्थिति होती है। उदाहरण के तौर पर हम समझ सकते हैं कि दिन और रात्रि के बीच का समय तथा रात्रि और दिन के

सुपरिचित लेखक। अब तक दर्जनों पुस्तकों का लेखन, संपादन व संकलन इनके कई शोधपत्रों का प्रकाशन हुआ है। समकालीन विषयों पर दैनिक अखबारों में निरंतर आलेखों का प्रकाशन होता रहता है।

बीच के समय को संधि काल कहा जाता है। उसी प्रकार प्रत्येक देश में व्याप्त प्रत्येक व्यवस्था को एक संक्रमण काल के दौर से गुजरना पड़ता है। भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में यदि हम समझना चाहे तो हम भारत के कुछ हिस्सों में प्रचलित सती प्रथा जैसी कुरीति का उन्मूलन एकदम से नहीं हो गया, अपितु कानून बनाकर तथा समाज को उस कुरीति के खिलाफ जागरूक करके धीरे-धीरे उस प्रथा का उन्मूलन कर दिया गया। इसी प्रकार से अतीत में हमें ऐसे कई अन्य उदाहरण और भी मिल जाएँगे जो कालांतर में धीरे-धीरे समाप्त होते गए।

अभी तक प्राप्त जानकारी के अनुसार भारतीय सभ्यता हड़प्पा काल, वैदिक काल, महाजनपद काल, मौर्यकाल, गुप्तकाल के विभिन्न संक्रमण कालों और विभिन्न विविधताओं से गुजरती हुई वर्तमान की स्थिति तक पहुँची हैं। जैसे-जैसे भारत में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन होते गए, यहाँ विविधताएँ अपना स्थान बनाती गईं। परिणामत: संसार के अन्य देशों की अपेक्षा आज भारत में सर्वाधिक विविधता विद्यमान है और भारत एक सर्वाधिक विविधतापूर्ण देश है। आज भारत में उपस्थित सामाजिक विविधताएँ भी किसी-न-किसी संक्रमण काल से होकर गुजरी हैं। भारत के भौगोलिक विविधताओं के कारण यहाँ पर उपस्थित जलवायु में भी विविधता है। इन जलवायु विविधताओं के कारण यहाँ के लोगों के रहन-सहन, खान-पान और पहनावें तक में विविधता है। इसके विभिन्न भागों में भौगोलिक अवस्थाओं, निवासियों और उनकी संस्कृतियों में काफी अंतर है। कुछ प्रदेश अफ्रीकी रेगिस्तान जैसे तप्त और शुष्क हैं तो कुछ ध्रुव प्रदेश की भाँति ठंडे हैं। कहीं वर्षा

का अतिरेक है तो कहीं उसका नितांत अभाव है। तमिलनाडु, पंजाब और अरुणाचल प्रदेश के लोगों को एक साथ देखकर कोई उन्हें एक नस्ल या एक संस्कृति का अंग नहीं मान सकता।

देश के निवासियों के अलग-अलग धर्म, विविधतापूर्ण भोजन और वस्त्र उतने ही भिन्न हैं, जितनी उनकी भाषाएँ या बोलियाँ। इस प्रकार हम देखते हैं कि जलवायु विविधता के कारण एक स्थान के व्यक्ति दूसरे स्थान के व्यक्ति से प्रभावित होता है। सरल शब्दों में, गरमी के दिनों में अधिकांश लोग पहाड़ी क्षेत्रों और समुद्री क्षेत्रों में पर्यटन हेतु जाते हैं। पर्यटकों की सुविधा को ध्यान में रखकर उस क्षेत्र के लोग अपने व्यवसाय में तुलनात्मक परिवर्तन करते हैं। जिसके कारण उस क्षेत्र के व्यक्ति प्रत्येक क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक संक्रमण काल के दौर से गुजरते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं भारत के शहरों से शुरू हुआ संक्रमण का दौर धीरे-धीरे गाँवों तक पहुँचता है तथा संक्रमण काल के दौर से गुजरने के बावजूद अपने देश के प्रति लोगों की प्रतिबद्धता और अधिक मजबूत हुई है। इस कोटि की विभिन्नता के बावजूद संपूर्ण भारत एकता और अखंडता के सूत्र में निबद्ध है। इस सूत्र की अनेक विधाएँ हैं, जिसकी जड़ें देश के सभी कोनों तक पल्लवित और पुष्पित हैं। बाहर भिन्नताएँ और विविधताएँ भौतिक हैं, किंतु भारतीयों के अभ्यंतर में प्रवाहित एकता को अजस्र धारा भावनात्मक एवं रोगात्मक है। इसी ने देश के जन-मन को एकता के सूत्र में पिरो रखा है।

भारत की एकता का यह भारतीय संस्कृति का स्तंभ है। भारतीय संस्कृति अति प्राचीन है और वह समय-समय पर अपनी विशिष्टताओं सहित विकसित होती रही है। इसके कुछ विशेष लक्षण हैं, जिन्होंने भारतीय एकता के सूत्र को और भी सुदृढ़ किया है। भारतीय संस्कृति की धारा अविच्छिन्न रही है। यह धर्म, दर्शन और चिंतन प्रधान रही है। यहाँ धर्म का अर्थ न 'मजहब' है और न 'रिलीजन' है। भारतीय संस्कृति का यह धर्म अति व्यापक, उदार एवं जीवन के सत्यों का एक प्रकाश-पुंज है। भारतीय संस्कृति का एक अलौकिक तत्त्व इसकी सहिष्णुता है। यहाँ सहिष्णुता का सामान्य अर्थ सहनशीलता, नहीं वरन् गौरवपूर्ण शांत विशाल मनोभाव है, जो स्वकीय-परकीय से ऊपर और समष्टिवाचक है। यह जड़ अथवा स्थिर नहीं बल्कि सचेतन और गतिशील है। इसने समय-काल के अनुरूप अपना कलेवर बदला ही नहीं, वरन् उसे अति ग्रहणशील बनाया है। यह एकांगी नहीं, सर्वांगीण है। इसके सब पक्ष परिपक्व, समुन्नत, विकसित और संपूर्ण हैं। इसमें न कोई रिक्तता है और न संकीर्णता है। भारतीय संस्कृति की इन्हीं विशेषताओं ने इस देश को एक सशक्त एवं संपूर्ण भावनात्मक एकता के सूत्र में बाँध रखा है।

हिंद स्वराज में गांधी भारतीय सभ्यता के बारे में कहते हैं, "जो सभ्यता हिंदुस्तान ने दिखाई है, उस सभ्यता को पाने में दुनिया में कोई नहीं पहुँच सकता। जो बीज हमारे पुरखों ने बोए हैं, उनकी बराबरी कर सके ऐसी कोई चीज देखने में नहीं आई। रोम मिट्टी में मिल गया, ग्रीस का सिर्फ नाम ही रह गया, मिस्र की बादशाही चली गई, जापान पश्चिम के शिकंजे में फँस गया और चीन का कुछ भी नहीं कहा जा सकता। लेकिन गिरा-टूटा जैसा भी हो, हिंदुस्तान आज भी अपनी बुनियाद में मजबूत है। जैसा रोम और ग्रीस गिर चुके हैं, उनकी किताबों से यूरोप के लोग सीखते हैं। उनकी गलतियाँ वे नहीं करेंगे, ऐसा गुमान रखते हैं। ऐसी उनकी कंगाल हालत है, जबकि हिंदुस्तान अचल है, अडिग है। यही उसका भूषण है। हिंदुस्तान पर आरोप लगाया जाता है कि वह ऐसा जंगली, ऐसा अज्ञान है कि उससे जीवन में कुछ फेरबदल कराए ही नहीं जा सकते। यह आरोप हमारा गुण है, दोष नहीं। अनुभव से जो हमें ठीक लगा है, उसे हम क्यों बदलेंगे? बहुत से अकल देने वाले आते-जाते रहते हैं, पर हिंदुस्तान अडिग रहता है। यह उसकी खूबी है, यह उसका लंगर है।"

भारत में सदैव राजनीतिक एकता रही है। राष्ट्र व सम्राट्, महाराजाधिराज जैसी उपाधियाँ, दिग्विजय और अश्वमेध व राजसूय यज्ञ भारत की जाग्रत राजनीतिक एकता के द्योतक रहे हैं। महाकाव्य-काल, मौर्यकाल, गुप्तकाल और उसके बाद मुगलकाल में भी संपूर्ण भारत एक शक्तिशाली राजनैतिक इकाई रहा है। यही कारण है कि देश के भीतर छोटे-मोटे विवाद, बड़े-बड़े युद्ध और व्यापक उथल-पुथल के बाद भी राजनैतिक एकता का सूत्र खंडित नहीं हुआ। सांप्रदायिकता, भाषावाद, क्षेत्रीयता और ऐसे ही अन्य तत्त्व उभरे और अंतरराष्ट्रीय शक्तियों ने उनकी सहायता से देश की राष्ट्रीय एकता को खंडित करने का प्रयास किया किंतु वे सफल नहीं हो पाए। भारत दुनिया के कई धर्मों और भाषाओं के पुनर्मिलन का एक स्थान है। यहाँ धर्म के संबंध में इसकी सीमा का कोई अंत नहीं है। विभिन्न संस्कृतियों के साथ दुनिया भर के लोग शांतिपूर्ण ढंग से रह रहे हैं। यहाँ हिंदू, जैन, बौद्ध, सिख, पारसी, यहूदी, मुसलिम समेत सभी धर्मों के लोग एक-दूसरे के साथ मिल-जुलकर रहते हैं और हर्षोल्लास के साथ सभी त्योहारों को मनाते हैं।

कई नस्लीय तत्त्वों से बनी भारतीय लोगों में उनके बीच कई भाषाएँ और बोलियाँ हैं। प्रत्येक क्षेत्र के लोगों की अपनी बोलियाँ हैं और स्थानीय लोग अधिकांशत: अपनी बोलियों में ही वार्त्तालाप करते हैं। उत्तर भारत में अधिकांशत: लोग हिंदी भाषा में बोलते हैं, वहीं दक्षिण भारत में तमिल, मलयालम, तेलुगू और कन्नड़ जैसी भाषाओं का उपयोग करते हैं। इसके अलावा गुजरात में गुजराती, पश्चिम बंगाल में बंगाली, ओडिशा में उड़िया भाषा तथा पूर्वोत्तर की जनजातियों की अपनी भाषाएँ हैं। अंग्रेजी भाषा का प्रचलन भी आजकल बहुत हो रहा है। देश के विभिन्न हिस्सों में जाति और पंथ के बावजूद भारतीय सामाजिक रीति-रिवाज और परंपराओं को देखते हुए उनमें एकता की भावना होती है। इसने भारत में 'विविधता में एकता' के संदेश को जीवित रखा हुआ है। विभिन्न परंपराओं और संस्कृति के बाद जो भारत में विविध समाज विकसित हुए हैं, वहाँ एकता की भावना है, जो भारत के लोगों को एक साथ बाँधे रखती है। यह मूल एकता सभी भारतीय जनजातियों और जातियों के मध्य देखी जा सकती है।

भारत की विविधता के संबंध में गांधी ने कहा, "जब तक हम एकता के सूत्र में बँधे हैं, तब तक मजबूत हैं और जब तक खंडित हैं, तब

तक कमजोर हैं।" गांधी का मानना था कि यदि सारे उपनिषद् तथा हमारे अन्य सारे धर्म-ग्रंथ अचानक नष्ट हो जाएँ और ईशोपनिषद् का केवल पहला श्लोक हिंदुओं की स्मृति में कायम रहे तो भी भारतीय संस्कृति सदा जीवित रहेगी। गांधी सदा ही भारतीय चिंतन के अनुरूप 'सर्वजन हिताय' और सर्वे भवन्तु सुखिन: के पोषक रहे हैं। रिचार्ड निल्दान के अनुसार, 'हमारी एकता के कारण हम शक्तिशाली हैं, परंतु हम अपनी विविधता के कारण और भी अधिक शक्तिशाली हैं।'

विभिन्न अध्ययनों से हम यह पाते हैं कि प्रत्येक समाज में व्यक्तियों के विभिन्न समूह एवं स्तर पाए जाते हैं, जिनका सामाजिक स्तर एक समान नहीं होता है। व्यक्ति सभी समूहों का सदस्य नहीं हो सकता है और इसलिए कई बार वह एक समूह की सदस्यता को त्यागकर दूसरे समूह की सदस्यता लेता है, जिसके कारण समाज में एक गतिशीलता की उत्पन्न होती है। गतिशीलता से अभिप्राय विभिन्न प्रकार के समूहों के बीच लोगों के आने-जाने की अनवरत प्रक्रिया से है। फेयरचाइल्ड के अनुसार, सामाजिक गतिशीलता से अभिप्राय व्यक्तियों की एक समूह से दूसरे समूह की गति से है। विभिन्न अध्ययनों से हम पाते हैं कि अनिवार्य रूप से मानव के सामाजिक जीवन में परिवर्तन तथा उसमें गतिशीलता होती है।

मानव सभ्यता के विकास की कहानी संक्रमण काल के विभिन्न आयामों से होकर गुजरी है। आदिमानव से लेकर वर्तमान मानव के विकास की कहानी भी परिवर्तनों के विभिन्न चरणों से ही होकर गुजरी है तथा प्रत्येक परिवर्तन एक संक्रमण काल से होकर गुजरे हैं। परंतु हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि सभी प्रकार के परिवर्तनों को प्रगति नहीं कहा जा सकता है। आजादी के बाद से भारतीय समाज में निरंतर परिवर्तन होता रहा है और आज भी हो रहा है। लेकिन आज भी भारतीय समाज में जातिवाद, गरीबी और बेरोजगारी का बढ़ना, वर्ग-असमानता में वृद्धि, राजनीति में अपराधियों की संख्या में वृद्धि, किसानों की बेहाली, महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व न मिलना, धार्मिक कट्टरता में वृद्धि, अधिक उम्र में विवाह करना, तलाकों की संख्या में वृद्धि, वृद्धाश्रमों में वृद्धि, पलायन की समस्या, बच्चों और युवाओं को इंटरनेट की लत लगना इत्यादि कई ऐसी सामाजिक समस्याओं के कारण भारत आज अपने एक संक्रमण काल से गुजर रहा है, परंतु निश्चित तौर पर वर्तमान परिस्थिति में हम यह कह सकते हैं कि संक्रमणकालीन भारतीय समाज की विभिन्न चुनौतियों का समाधान गांधीवादी दृष्टिकोण से ही किया जा सकता है।

बरकतउल्ला विश्वविद्यालय,
भोपाल, मध्य प्रदेश
दूरभाष : ०९८११३९३४०६
vision2020rajeev@gmail.com

फागुन आया

हाइकु

• इंद्रा रानी

महुआ मन
मादकता से भरा
होली मिलन।

होली आई है
मेलजोल दिलों का
करवाने को।

नई कोंपलें
उमंग लिये संग
आस बढ़ाती।

फागुन आया
झोली में भरकर
खुशी अपार।

होली त्योहार
मन अनमना सा
विदेशी पिया।

कूके कोयल
आम की डाली पर
मन बाबला।

प्रेम पे रंग
मत डालो व्यंग्य का
चटके रिश्ते।

बजे मंजीरे
ढोलक ढप-ढप
सुहानी रातें।

टेसू सेमल
दहक रहे सब
फागुन आया।

रंग ऐसा दो
सुवासित तन हो
हर्षित मन।

सरसों फूल
डाली ओढ़ झूमती
पीली चादर।

व्यस्त जीवन
होली भर दे रंग
उमंग लौटे।

५२४, पॉकेट-५, मयूर विहार फेज-१,
दिल्ली-११००९१
दूरभाष : ८३६८२६९६०८

हास्यकवि की फागुनी बाइट

• सूर्यकुमार पांडेय

लोकप्रिय हास्यकवि एवं वरिष्ठ व्यंग्य-स्तंभकार। गद्य और कविताओं की कुल २९ पुस्तकें प्रकाशित। बाल कविता और अन्य विधाओं में भी उल्लेखनीय साहित्य-सृजन। भारत सरकार के सूचना और प्रसारण मंत्रालय का 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

चिर युवा हैं अपने पांडेजी। हास्य कविताई के शौकीन हैं। पूनम पांडे और चुलबुल पांडे के बीच के जीव हैं। खुले दिमाग के हैं। साहित्य के थाने में इन दिनों ऑन ड्यूटी हैं। इस फागुन में सर्वत्र पांडेजी की सीटी बज रही है। वह हर किसी से कहते घूम रहे हैं—'ये अपने इश्क का बरतन अभी भी गरम है प्यारे, भला यह दाल कब अपनी गलाना छोड़ देता है! बदन होता है बूढ़ा, दिल की फितरत कब बदलती है, पुराना कुकर क्या सीटी बजाना छोड़ देता है?'

कल कविवर पांडेजी होली के इस मस्त-मस्त मौसम में छान-छूनकर बैठे थे। तभी एक लोकल न्यूज चैनल के बंदे आ गए। पांडेजी मीडिया का मुँह देखते ही कुछ ऐसा चहक उठे, जैसे किसी नव यौवना का मुखड़ा देख लिया हो। कैमरे की लाइट चेहरे पर चमकी, तो भीतर तक फागुन-फागुन हो गए। पत्रकार ने बाइट लेने की इच्छा प्रकट की। कविवर अपने नीचे के होंठ काटने लग गए। मुसकराते हुए बोले, पूछो प्यारे! आज जो भी पूछना चाहो, पूछ लो। खुलकर बातें करूँगा।

पत्रकार अचरज से भर गया। वह पांडेजी का पोपला मुँह निहारने लगा। बोला, 'लगता है, इन दिनों आपकी उमर की गाड़ी को बैकगियर लग गया है। आप तो योग करने की उमर में इश्क की दवाई बेच रहे हैं!'

पांडेजी ने छूटते ही कहा, 'न संन्यास का मन, न वैराग्य का व्रत। अभी वह ही हरकत, वो हिम्मत, वो चाहत। बुढ़ापे में छेड़ो न किस्सा-ए-उल्फत। जवानी की आदत यथावत् सलामत।'

उस पत्रकार ने कहा, 'पांडेजी, आपकी बातें सुनकर ऐसा लगता है, गोया आप जवानी के दिनों में आज से भी अधिक रसिक प्राणी रहे होंगे।'

पांडेजी बोले, 'रहे होंगे से तुम्हारा क्या मतलब है? आज भी हैं। पांडेजी का फ्रंट न देखो। भीतर जो बहता करंट, वो देखो। हाई वोल्टेज वाली इलेक्ट्रिसिटी सतत प्रवाहित हो रही है। पतझड़ में भी बहार की रखता हूँ तमन्ना, देखी जहाँ हरियाली, उसी ठौर रुका हूँ। यह पूछो मत, कितने वसंत देख चुका मैं, यह पूछो कि कितनी वसंती देख चुका हूँ?'

पत्रकार बोला, 'कमाल करते हैं आप! इस उम्र में लोग यादों के सहारे जिया करते हैं और एक आप हैं कि इश्क का गुलाल लेकर गली-गली घूमने की चाहत पाले हुए हैं।'

'उन यादों की बात करके पुराने जख्म हरे कर दिए तुमने,' पांडेजी बोले, 'यादों के हाई-वे पर, वह दौड़ा रही है मुझको, रुकने भी नहीं देती कि तेल भरा लूँ। वह है कि मेरे दिल से निकलती ही नहीं है, मैं सोचता हूँ, हार्ट ट्रांसप्लांट करा लूँ!'

पत्रकार ने कहा, 'पांडेजी, मुझे तो ऐसा लगता है, जैसे आप 'हम दिल दे चुके सनम' जैसी फिल्मों के जमाने के चोट खाए हुए आशिक हैं।'

पांडेजी मिलावटी मावे की बनी हुई गुझिया वाली नकली गंभीरता ओढ़ते हुए कहने लगे, 'किस्से सदैव से रहे, दिल के, कमाल के। रखता भी तो कब तक भला इसको सँभाल के! बॉडी के हैंडसेट का, क्या अचार डालूँ मैं, जो दिल का सिम था, ले गया कोई निकाल के।'

'परंतु लीवर और किडनी तो सही-सलामत हैं न पांडेजी?' पत्रकार ने उनके मुखड़े पर तसल्ली का अबीर मलते हुए पूछा।

'क्या खाक सही-सलामत हैं,' पांडेजी ठहाके लगाते हुए बोल पड़े, 'रखा था जिसके वास्ते, यह दिल सँभाल के, वह आएगी, ले जाएगी झोली में डाल के। वह आई, बोली, अंग-अंग देखभाल के। प्रियतम, ये बॉडी पार्ट्स हैं सच में कमाल के। उसने कशीदे काढ़े ऐसे रूप-जाल के। झाँसे में मैं भी आ गया, तब उसकी चाल के। रस्ते दिखाए उसने मुझको अस्पताल के। दिल छोड़ गई, ले गई किडनी निकाल के।'

और इससे पहले कि वह पत्रकार स्वयं कैमरे के सामने आकर कहता कि 'और अभी आप सबके सामने थे सदाबहार हास्यकवि पांडेजी। होली की फुल मस्ती में अपनी रामकहानी सुनाते हुए···।' पांडेजी ने गाना शुरू कर दिया था, 'पांडेजी पर चढ़ गई, ऐसी भंग-तरंग। गया बुढ़ापा खड्ड में, अंग-अंग है यंग। जोगीरा सारारारा।'

सा अ

५३८क/ ५१४, त्रिवेणी नगर द्वितीय,
लखनऊ-२२६०२० (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४५२७५६०००
pandeysuryakumar@gmail.com

नहीं चाहिए बेटी

● गिरीश पंकज

रायपुर के शंकरनगर में रहने वाले दयाशंकर और सुवर्णा चतुर्वेदी की इकलौती बेटी प्रज्ञा का विवाह धूमधाम से हुआ। पंचतारा होटल 'डेमो द आर्क' में। दामाद राहुल मेकवैल कंपनी में मैकेनिकल इंजीनियर है। एक करोड़ का पैकेज है। अभी कनाडा में रहता है। दो साल बाद भारत आ जाएगा। यही सोचकर दयाशंकर विशेषकुमार के बेटे अभिजीत के साथ शादी कर दी कि उनकी बेटी दो साल बाद ही सही, उनकी आँखों के सामने तो रहेगी। वर-पक्ष भी काफी संपन्न मिला था। सबने कहा, 'लड़की के तो भाग ही खुल गए। जोड़ी भी कितनी सोणी है। लड़का पाँच फुट आठ इंच का, तो लड़की की हाइट भी पाँच फुट सात इंच।'

शादी की रस्म होने के बाद चतुर्वेदी परिवार ने नम आँखों के साथ बेटी को विदा किया।

विदा के समय विशेषकुमार ने दयाशंकर के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "दयाशंकरजी, आपकी बेटी अब हमारी बेटी है। इसका हम पूरा ध्यान रखेंगे। और मैंने अभिजीत से भी कह दिया है कि वहाँ मन लगाकर कंपनी का काम करो। दो साल के डेपुटेशन पर गए हो। बाद जब इंडिया लौटोगे, उसके बाद ही दो से तीन होने की सोचना।"

दयाशंकर ने प्रसन्न होकर कहा, "आपने बिल्कुल सही सुझाव दिया है। परदेस में कैसी स्थिति बनती है, क्या पता। इसलिए समझदारी तो यही है कि दो साल तक इंतजार किया जाए। और इन दो सालों में लाइफ को इन्ज्वाय करें। कनाडा के बाहर भी घूमें-फिरें। दो साल कैसे बीत जाएँगे, पता ही नहीं चलेगा। भारत आने के बाद तो दो से तीन क्या, मैं तो कहता हूँ चार भी होना चाहिए। एक लड़का और एक लड़की। बैलेंस बना रहेगा।"

अभिजीत ने मुसकराकर कहा, "एक बच्चा ही ठीक है, पापाजी। संख्या मत बढ़ाइए। हम दो, मगर हमारा एक। कंट्री के पॉपुलेशन कंट्रोल में हमारा कुछ तो कंट्रीब्यूशन रहे।"

अभिजीत की बात सुनकर दयाशंकर जोर से हँस पड़े और बोले, "ठीक है बेटे। तुम समझदार हो। आज के समय में 'वन इज फन' चल रहा है।"

"लेकिन विशेषजी, एक ही आग्रह है। प्रज्ञा की डिलीवरी मायके में ही तो आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।"

सुपरिचित लेखक। तीस व्यंग्य-संग्रह, दस उपन्यास, चार कहानी-संग्रह सहित नब्बे पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। रमणिका फाउंडेशन सम्मान, जगतराम आर्य स्मृति सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

विशेष कुछ सोचते रहे, फिर मुसकराकर बोले, "जैसी आपकी मरजी। हम तो अपने यहाँ बिलासपुर में ही सोच रहे थे, लेकिन कोई बात नहीं। जैसे हमारे यहाँ होती, वैसे आपके यहाँ। एक ही बात है।"

बेटी की विदाई हो गई।

कुछ दिन तो जैसे काट खाने वाले रहे। इकलौती बेटी के चले जाने के बाद दयाशंकर और सुवर्णा उदास हो गए। जब भी दोनों बैठते तो शादी का एलबम निकालकर देखने लगते।

उस दिन दयाशंकर कहने लगे, "प्रज्ञा के कारण घर में कितनी रौनक रहती थी, है न। आज के समय में ऐसी संस्कारित बेटी का होना सौभाग्य की बात है। मॉडर्न दौर में भी वह अपनी मर्यादा का कितना ध्यान रखती थी। समय पर घर आना, भारतीय खाने को पसंद करना। जींस और टॉप तो दिखाने के लिए कभी-कभार पहन भी लेती थी, लेकिन सलवार-कुरता और चुन्नी के बिना उसे चैन नहीं पड़ता था। घर आती तो फौरन सलवार-कुरता पहनकर ही रिलेक्स फील करती थी। सहेलियों के तानों से बचने के लिए कभी-कभी फटी जींस भी पहनती रही, लेकिन बेमन से। हमने उसको लड़के की तरह ही पाला। लड़का-लड़की एक समान। प्रज्ञा ने भी एक बार कहा था, 'शादी के बाद मैं तो एक सुंदर-प्यारी सी लड़की की माँ बनना ही पसंद करूँगी। लड़के बड़े बदतमीज होते हैं।'

इतना सुनकर सुवर्णा बोली, "प्रज्ञा की इस सोच के पीछे कुछ कारण थे। आजकल हम देख तो रहे हैं कि अनेक शातिर लोग कैसे-कैसे गुल खिला रहे हैं। लड़कियों से बलात्कार की घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं। वासना के भेड़िए मासूम बच्चियों को भी अपनी हवस का शिकार बना रहे हैं। ऐसी खबरें देखकर कोई भी विचलित हो सकता है।"

"सच कहा, इस समय को देखकर चिंता होने लगती है। लेकिन हमने कभी भी लड़का-लड़की का कोई भेद नहीं किया। अपनी लड़की

हो गई, तो उसी में खुश रहे। यह सोचा ही नहीं कि एक और संतान हो जाए, शायद लड़का। जो भी था तकदीर में, उसे स्वीकार किया।"

दयाशंकर इतना बोलकर कुछ गंभीर हो गए तो सुवर्णा अचानक हँस पड़ी। दयाशंकर सुवर्णा की ओर देखने लगे कि अचानक इसे क्या हो गया। सुवर्णा बोली, "बस ऐसे ही हँसी आ गई। आजकल तो पता नहीं कैसी हवा चली है। जिसे देखो, फटी जींस पहनकर घूमने में अपनी शान समझता है। वह भी ब्रांडेड। हद है। मेरी समझ में नहीं आता कि हम आधुनिक होने के चक्कर में नकलची बंदर क्यों बनते जा रहे हैं? पश्चिमी पहनावा हमें कितना भाने लगा है। भले ही शरीर का एक्सपोजर हो रहा हो, लेकिन लड़कियाँ वही पहनेंगी, लेकिन अब किसी को कुछ बोल भी तो नहीं सकते न? प्रज्ञा भी पहनती थी तो हम भी मौन ही रह जाते थे। कुछ बोलते तो उसको बुरा लगता।"

"हाँ, सही कह रही हो तुम, मुझे तो फूहड़ पहनावे कभी पसंद नहीं आए, लेकिन अब क्या किया जा सकता है। अब शालीन कपड़ों वाला दौर खत्म। उस दिन अपना भतीजा जो पैंट पहनकर आया था, उसे तुमने भी देखा। घुटने के नीचे तक तार-तार और शान से बता रहा था कि पाँच हजार रुपए में खरीदी है। लंदन की किसी ब्रांडेड कंपनी का नाम ले रहा था। ऐसे तो पागल लोग हैं अपने यहाँ। अपना भारत अब इंडिया हो गया है। अब यहाँ हिंदी नहीं, अंग्रेजी का चलन है। भाषा के साथ उसके संस्कार भी तो आते हैं। खैर, अब तो कुछ हो नहीं सकता। यही सब चलेगा और हम लोग मन मसोसकर रह जाएँगे।"

इतना बोलकर दयाशंकर भी जोर से हँसे और बोले, "अब चाय तो पिला दो। और बिटिया के लिए शुभकामनाएँ करो कि वह सुखी रहे।"

सुवर्णा चाय बनाने चली गई। तभी प्रज्ञा का फोन आ गया। मोबाइल की वीडियो कॉलिंग। कनाडा पहुँचने के बाद से लगभग प्रतिदिन उसका फोन आता ही है। आज वह ओटावा का अपना घर दिखा रही थी। भव्य था। काफी बड़ा। दो प्राणी और इतना बड़ा घर। बाहर शानदार बागीचा। प्रज्ञा और अभिजीत ने जी भरकर बातें कीं।

बीच-बीच में वाट्सऐप पर भी बातें होती रहीं। फेसबुक में प्रज्ञा ने अपना पेज बना रखा था। उसमें भी वह अकसर अभिजीत के साथ सैर-सपाटे की तस्वीरें पोस्ट करती रहती। एक दिन दयाशंकर बोले, "कितनी जल्दी दो साल बीतें और प्रज्ञा स्वदेश लौटकर आ जाए।"

सुवर्णा हँसते हुए बोली, "अभी एक महीना भी नहीं बीता है और तुम दो साल बीतने का इंतजार कर रहे हो। कमाल है। धीरज रखो, दो साल बीतने में कम-से-कम दो साल दो लगेंगे ही।"

"वैसे दो साल बहुत होते हैं न? यहाँ तो पल-पल भारी पड़ रहा है। सोचो, सात सौ सत्तर दिन। उफ, कैसे बीतेंगे ये दिन!"

"तुम बेकार में तनाव पालते हो। जैसे एक महीना बीता है, वैसे दो साल भी बीत जाएँगे। जैसे हमारी शादी के चालीस साल बीत गए, वैसे प्रज्ञा के दो साल बीत जाएँगे। मैं सब समझ रही हूँ, तुमको नाना बनने की बेताबी है न। बन जाओगे, बस दो साल इंतजार करो। मुझे भी नानी बनने का सुख लेना है, लेकिन अभी तो केवल इंतजार, बस इंतजार।··· न्यूज लगा दूँ, देखोगे?"

"हाँ, लगा दो। देखें तो देश में चल क्या रहा है।"

सुवर्णा ने टीवी चालू किया और अपने काम पर लग गई। दयाशंकर हाथ में रिमोट लेकर बैठ गए। एक चैनल चालू किया तो देखा, खबर चल रही है, "मंदिर में मासूम लड़की से बलात्कार के बाद हत्या।"···

कुछ देर तक दयाशंकर खबर देखते रहे फिर उन्होंने चैनल बदल दिया। दूसरे चैनल पर खबर चल रही थी, "स्कूल में बच्चे की निर्मम हत्या।"···

"दिल्ली में मदरसे में मासूम से बलात्कार। मौलवी पकड़ा गया।"···

दयाशंकर तनाव में आते गए और चैनल बदलते गए। लेकिन जिस चैनल को देखते, वहीं बलात्कार की एक-न-एक खबर चल रही होती।

"बहादुरगढ़ में नौ साल की बच्ची के साथ रेप।"···

"उन्नाव में मासूम से बलात्कार के बाद हत्या।"···

दयाशंकर चीख पड़े, "यह क्या कमीनापन हो रहा है?" फिर उन्होंने टीवी बंद ही कर दिया और रिमोट को जोर से पटकते हुए चिल्लाए, "अब मुझे टीवी देखने के लिए मत कहना। जब भी देखता हूँ, ये चैनल वाले बलात्कार की खबरों को विस्तार से दिखाते रहते हैं। ऐसा लग रहा है, इस देश में अभी बलात्कार की घटनाएँ ही अधिक हो रही हैं। कुछ और अच्छे काम हो ही नहीं रहे? हद है।"

सुवर्णा बोली, "यह मीडिया है। इसे टीआरपी से मतलब है। सनसनी फैलाने में इसे बड़ा मजा आता है। इसीलिए ये लोग हिंसा, बलात्कार की खबरें अधिक दिखाते हैं। इनको देख-देखकर लोग दहशत में आने लगे हैं। माता-पिता बच्चों को स्कूल भेजने में डरने लगे हैं। छोटी बच्ची घर से बाहर निकलती है तो चिंता सताने लगती है कि उसके साथ कुछ गलत न हो जाए। कितना भयानक-डरावना हो गया है न हमारा समाज? अब तो बाहर निकलने में डर लगता है। बाहर-तो-बाहर, अब तो घर पर रहते हुए भी डर लगता है कि कौन कब आकर लूटकर ले जाए या गोली मार दे। पिछले महीने पड़ोस के गुप्ताजी के साथ क्या हुआ। बदमाश आए और लूटपाट करने के बाद उनको गोली मारकर चले गए। और अब बलात्कार के हादसे।"

"सच बोल रही हो। यह सब इंटरनेट आने का नतीजा है।"

"तुम भी पागलों जैसी बात कर रहे हो?" सुवर्णा भड़क गई, "अरे, ये सब उसके कारण नहीं हो रहा। असली जड़ है हम अपने जीवन-मूल्यों को भूलते चले जा रहे हैं। लेकिन मैं इस बात को मानूँगी कि मोबाइल में जब से इंटरनेट की सुविधा आम हुई है, तब से अपराध का मामला बढ़ा है। तरह-तरह के अश्लील वीडियो लोग आसानी से देख रहे हैं। मूर्ख लोग अधिक देखते हैं और उत्तेजित होकर बलात्कार करते हैं। हालत यह है कि क्या बच्ची और क्या बूढ़ी। लोग इतने पतित हो गए हैं कि गाय और बकरी के साथ भी रेप कर रहे हैं।"

"लेकिन यह तो मानोगी न कि जड़ तो इंटरनेट ही है। लोग उसका पॉजिटिव इस्तेमाल ही नहीं कर रहे हैं।"

"करने वाले तो कर ही रहे हैं। कुछ भेड़िए, वहशी नहीं कर रहे तो उसमें इंटरनेट का क्या दोष?"

"तुम ठीक कह रही हो, सुवर्णा।" दयाशंकर बोले, "लेकिन अब मैं टीवी चैनल तो देखने से रहा। बेहतर होगा, कोई मनोरंजक सीरियल देखें या फिल्म। किस नंबर पर फिल्में आती हैं? लेकिन दिक्कत यही है कि वहाँ पाँच-पाँच मिनट तक विज्ञापन आते हैं। फिल्म देखने का मजा ही किरकिरा हो जाता है।"

"क्या करोगे? इसे तो झेलना ही पड़ेगा। धंधे का सवाल है। उसी से तो चैनल वालों की कमाई होती है। चलो, लगा देती हूँ। किसी चैनल में पुरानी फिल्म 'औलाद' आने वाली थी। हाँ, ओल्ड-गोल्ड में। वही लगा देती हूँ। जीतेंद्र, बबीता और महमूद हैं। मजेदार फिल्म है। एक-से-एक गाने है इसमें।"

"हाँ, याद है। बचपन में दो बार देखी थी। कुछ दृश्य और दो-तीन गाने तो मुझे अब तक याद हैं, 'जोड़ी हमारी जमेगा कैसे जानी, हम तो हैं अँगरेजी, तुम लड़की हिंदुस्तानी', अरमाँ था हमें जिनका वो प्यार के दिन आए' और 'कब तक हुजूर रूठे रहोगे, ले के गुस्से में प्यार बलमजी, अब तो हँसो।" इतना बोलकर दयाशंकर गाना गुनगुनाने लगे।

सुवर्णा भी स्वर-से-स्वर मिलाने लगी। गीत में डूबने के बाद दोनों खुलकर हँसे। सारा तनाव जाता रहा।

"पुराने गीतों का जो संगीत है, वह सीधे आत्मा तक उतरता है।"

"आजकल के तो कानफाड़ू संगीत को सुनकर गुस्सा आने लगता है, लेकिन चुपचाप सहना पड़ता है। चलो, अब से अपन ओल्ड-गोल्ड में पुरानी फिल्में ही देखा करेंगे। वैसे अब तो यू-ट्यूब में भी देख सकते हैं।"

"हाँ, अब तो काफी सुविधाएँ हो गई हैं। रिटायरमेंट के बाद अपन यही तो कर रहे हैं। खाओ, पीयो और आराम करो।"

"लेकिन अपनी सेहत पर ध्यान दिया करो। पैंसठ के हो रहे हो। पहले तुम सुबह-सुबह घूमने जाया करते थे। अब बंद कर दिया है। उसे फिर शुरू करो। शाम को 'सियान सदन' भी चले जाया करो। वहाँ तुम्हारे कुछ मित्र मिल जाएँगे। मैं तो घर पर ही इतने काम कर लेती हूँ कि मेरी कंप्लीट एक्सरसाइज हो जाती है। घर पर रहने वाली मेहनतकश महिलाओं को जिम जाने की जरूरत ही नहीं पड़ती। तुम अपना खयाल रखो।"

"जी मैडम, जैसी आपकी आज्ञा।" इतना बोलकर दयाशंकर हँसे और सुवर्णा का अपनी बाँहों में भरकर चूम लिया। सुवर्णा खिलखिला पड़ी और अपने को अलग करते हुए कहा, "कभी-कभी तुमको जवानी सूझने लगती है।"

दयाशंकर बाले, "बंदर कितना भी बूढ़ा हो जाए, गुलाटी मारना नहीं भूलता।"

दो साल बीतने वाले ही थे। अभिजीत की वापसी का समय पास आ रहा था। इस बीच प्रज्ञा गर्भवती हो गई थी। डिलीवरी के लिए उसे रायपुर ही आना था। लेकिन जीवन में कब क्या घटित हो जाए, कुछ कहा नहीं जा सकता। कंपनी ने अभिजीत को आदेश दिया कि 'अभी और दो साल कनाडा में ही रहना होगा'।

अब?

इस फरमान के बाद सब चिंतित हो गए। क्या अभिजीत नौकरी छोड़ दे?··· क्या कंटीन्यू करे? ···तो फिर प्रज्ञा का क्या होगा? ···वह तो अब माँ बनने वाली है?

अंततः तय यही हुआ कि प्रज्ञा रायपुर आ जाए। माता-पिता के साथ रहे। यहीं डिलीवरी हो जाए, फिर बच्चे की देख-रेख करते-करते तो वैसे भी दो साल निकल जाएँगे। उसके बाद अभिजीत को भारत भेज ही दिया जाएगा।

अभिजीत भी इस प्रस्ताव से सहमत था। वह कंपनी से एक सप्ताह की छुट्टी लेकर रायपुर आया और प्रज्ञा को उसके माता-पिता के हवाले छोड़कर वापस चला गया। अभिजीत के माता-पिता भी रायपुर आए। दोनों परिवार के लोग दो दिन तक साथ रहे।

प्रज्ञा मायके में आकर बेहद खुश थी। उसकी पुरानी सहेलियाँ उससे मिलने आती रहीं। पास-पड़ोस की महिलाएँ भी समय-समय पर घर आकर प्रज्ञा का हालचाल लेती रहीं।

उस दिन शाम का समय था। टीवी चल रहा था, समाचार वाचक खबरें सुना रहा था, "मानवता को शर्मसार करने वाली खबर इंदौर से आ रही है, जहाँ छह माह की नवजात बच्ची से एक वहशी ने रेप किया।"

इतना सुनते ही प्रज्ञा सन्न रह गई। खबर को ध्यान से देखने लगी। एंकर ने इंदौर की घटना के साथ-साथ अब नाबालिगों से बलात्कार की घटनाओं की सूची पेश करने लगा, "अभी पिछले दिनों ही मेरठ में सात साल की बच्ची बलात्कार की शिकार बनी। झारखंड में एक मासूम बच्ची के साथ कुकर्म करके उसकी हत्या कर दी गई। कठुआ में सात साल की बच्ची की बलात्कार के बाद हत्या के बाद से तो जैसे देश के अनेक हिस्सों में लगभग रोज बलात्कार की घटनाएँ बढ़ती ही जा रही हैं। कल ही उड़ीसा के जाजपुर में दस साल की लड़की से बलात्कार की वारदात सामने आई है। हमारे असम संवाददाता ने बताया कि वहाँ के धुबड़ इलाके में सात साल की बच्ची एक दरिंदे की हवस का शिकार बनी। ···ऐसा लगता है, यह देश रेपिस्तान बनता जा रहा है।"

इतना सुनने के बाद प्रज्ञा ने फौरन टीवी बंद कर दिया। वह बुरी तरह घबराने लगी।·· उसे महसूस हुआ जैसे कोई अनहोनी घटित होने वाली है। उसने अपने इस अहसास को माँ से भी शेयर नहीं किया। लेकिन बहुत देर तक वह बेचैन रही। उस वक्त उसके पास कोई था भी नहीं। पिता बाहर गए हुए थे और माँ रसोई में कुछ बना रही थी। प्रज्ञा दुखी हो गई। सोचने लगी, अचानक देश को यह क्या हो गया है? बलात्कार की इतनी घटनाएँ? छह महीने की बच्ची को भी लोग नहीं छोड़ रहे। उसने तय किया कि अब टीवी देखेगी ही नहीं। कल से केवल अखबार पढ़ेगी। दूसरे दिन सुबह अखबार उठा लिया तो पहले पन्ने पर उसकी नजर पड़ी।

"कवर्धा में बारह साल की बच्ची के साथ बलात्कार के बाद उसकी निर्मम हत्या।"

उसके ठीक बगल में एक दूसरी खबर छपी थी, "उड़ीसा में चार साल में पाँच हजार बच्चियों से बलात्कार की घटनाएँ।"

"सरकार ने विधेयक पास किया कि बारह साल की कम उम्र की बच्ची से रेप करने वाले को फाँसी पर लटकाया जाएगा।"

प्रज्ञा ने गुस्से में भरकर अखबार के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और जोर से चिल्लाई, "माँ, अब से ऐसे रद्दी अखबारों को मँगाना बंद कर दो।"

सुवर्णा दौड़कर आई, "क्या हुआ मेरी बच्ची?"

"माँ, आजकल अखबारों में बलात्कार की खबरें इतनी प्रमुखता के साथ क्यों छापी जाती हैं? टीवी वाले में विस्तार के साथ दिखाते हैं। हद है। इन खबरों को तो कुछ दबाकर दिखाना चाहिए या फिर अवॉइड ही कर दें। इनको देखो तो मन विचलित हो जाता है।"

इतना बोलकर प्रज्ञा रो पड़ी। माँ उसे चुप कराती रही, लेकिन प्रज्ञा बहुत देर तक सुबकती ही रही। माँ उसके लिए ठंडा पानी ले आई। पानी पीकर प्रज्ञा कुछ सामान्य हुई। माँ ने उससे ज्यादा बात नहीं की।

"प्रज्ञा, तू अपनी सहेली मंजू से बात कर लेना। न हो तो शाम को बुला ले। तू बाथरूम गई थी, तब उसका फोन आया था। वह भी मायके आई हुई है।"

"अच्छा, मंजू रायपुर आई है?" प्रज्ञा चहक उठी, "अभी उससे बात करती हूँ। हम दोनों में खूब पटती थी माँ। साथ-साथ पढ़े प्राइमरी से कॉलेज तक।"

"हाँ, मुझे पता है। तेरी पक्की सहेली है। बात कर लेना उससे।"

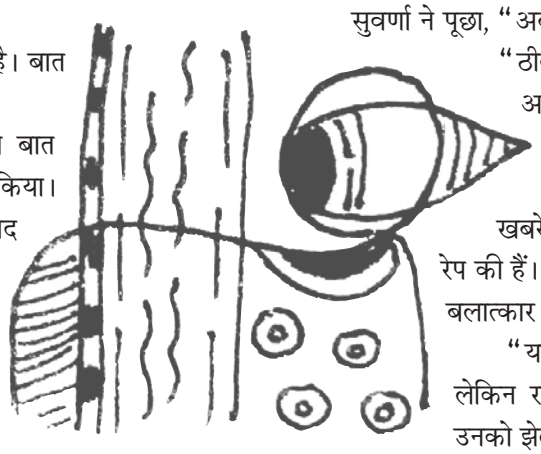

प्रज्ञा ने मंजू को फोन लगाया। उससे बात करती रही। मंजू ने शाम को आने का वादा किया। शाम को मंजू आई भी। दोनों सहेलियाँ वर्षों बाद एक-दूसरे से मिल रही थीं। जी भरकर बातें हुईं। कुछ देर बाद न जाने कैसे सुवर्णा ने टीवी चालू कर दिया। उस वक्त विज्ञापन आ रहे थे। टीवी साइलेंट में था। कुछ देर बाद प्रज्ञा ने देखा, ब्रेकिंग न्यूज चल रही है।

"पटियाला में एक फौजी ने किया तीन साल की बच्ची से बलात्कार।"…

"बहादुरगढ़ में नौ साल की बच्ची बनी हवश का शिकार।"…

"मेरठ में अधेड़ ने किया मासूम से मुँह काला।"…

ब्रेकिंग न्यूज के ये शीर्षक देखकर प्रज्ञा फिर विचलित होने लगी। अचानक काँपने लगी। उसकी कँपकँपी बढ़ने लगी। धीरे-धीरे उसका पूरा शरीर काँपने लगा। ऐसा लगा, जैसे उसे फिट आ रहे हों। यह देखकर मंजू घबरा गई कि अचानक प्रज्ञा को यह क्या हो गया। उसने जोर से आवाज लगाई, "आंटी, देखिए तो …ये क्या हो रहा है?"

सुवर्णा दौड़कर आई तो प्रज्ञा की हालत देखकर चीख पड़ी, "ओह, मेरी बेटी, तुझे क्या हुआ?"

फिर उसे अपनी छाती से चिपटा लिया। धीरे-धीरे कंपन कम हुई और प्रज्ञा नॉर्मल हो गई। मंजू उसके लिए पानी ले आई। पानी पीने के बाद प्रज्ञा खामोश होकर एकटक टीवी को देखती रही। जहाँ अब विज्ञापन आ रहे थे। उसने टीवी की ओर इशारा किया। माँ कुछ समझ नहीं पाई कि वह क्या कहना चाह रही है। टीवी पर विज्ञापन आ रहे थे। प्रज्ञा की उँगली टीवी की तरफ उठी हुई थी। माँ ने टीवी बंद कर दिया। टीवी बंद होने के कुछ समय बाद प्रज्ञा ने इधर-उधर देखना शुरू किया और मंजू को देखकर रो पड़ी।

"क्या हुआ तुझे प्रज्ञा?" मंजू ने धीरे से पूछा।

"मुझे नहीं हुआ, इस देश को कुछ हुआ है।" प्रज्ञा के आँसू बह रहे थे। वह बोली, "टीवी चैनलों को कुछ हुआ है। इनके पास एक ही खबर रहती है क्या, बलात्कार की? अखबार भी देखो तो डर लगता है। पहले पन्ने पर बलात्कार की खबरें होती हैं। मेरे सामने जब ऐसी खबरें आने लगती हैं तो मैं घबरा जाती हूँ।"

"मैंने तो अब टीवी पर खबरें देखना ही बंद कर दिया है। ये चैनल वाले धंधेबाज हो गए हैं। खबरें कम विज्ञापन अधिक दिखाते हैं और जो समय खबरों के लिए होता हैं, उसमें बलात्कार की खबरें परोसते रहते हैं कि यहाँ बलात्कार, वहाँ रेप। कोई अच्छी खबर दिखाना ही पाप है इनके लिए। हद है।"

प्रज्ञा खामोश होकर मंजू को देखती रही।

सुवर्णा ने पूछा, "अब कैसा लग रहा है बेटा?"

"ठीक है माँ, चिंता की कोई बात नहीं। पता नहीं अचानक क्या हो गया था। अब तो मैं टीवी देखूँगी ही नहीं। कान पकड़ती हूँ। अति हो गई है। जब देखो, कही-न-कहीं से बलात्कार की खबरें ही आती रहती हैं। अनेक खबरें नाबालिगों से रेप की हैं। चार-पाँच साल की बच्चियों के साथ भी लोग बलात्कार कर रहे हैं। हैरत की बात!"

"यह दुनिया अब रहने लायक नहीं रही बेटा, लेकिन रहना तो पड़ेगा। बुरे लोग बढ़ते जा रहे हैं। उनको झेलना पड़ेगा। दुनिया में हम आए हैं तो जीना ही पड़ेगा।"

माँ की बात सुनकर प्रज्ञा के चेहरे पर हलकी सी मुसकान उभरी, "ठीक कह रही हो माँ। अच्छा मंजू, तू फिर आना। अच्छा लगा तुझ से मिलकर। तेरा तो एक बेटा है न?"

"हाँ रे, एक है। बड़ा शरारती। कभी आऊँगी उसे लेकर।"

"किस्मत वाली है तू कि तुझे बेटा हुआ। चिंता की बात नहीं। तू निश्चिंत रहना। उसके साथ कुछ नहीं होगा। चिंता तो मुझे होती है कि मेरी बच्ची के साथ क्या होगा? वह तो लड़की है न?"

"तुझे कैसे पता कि लड़की है? लड़का भी हो सकता है?"

"मुझे पता है कि हंड्रेड परसेंट लड़की है। देख न, मैं कितनी मोटी हो गई हूँ।… मेरा चेहरा भी पहले से कितना खिला-खिला सा नजर आने लगा है।… बार-बार मीठा खाने का मन करता है। इतने लक्षण तो पर्याप्त होते हैं न रे! मुझे पक्का यकीन है कि लड़की होगी। बस यही सोचकर मैं बहुत चिंतित रहती हूँ आजकल।"

सुवर्णा बोली, "तू फालतू बात तो कर मत। पगली, तू कोई

गॉयनोकोलॉजिस्ट है, जो पेट में क्या पल रहा है, जान गई? अल्ट्रासाउंड भी नहीं हुआ? फालतू बात मत कर। तेरे पेट में जो भी है, उसकी अच्छे से देखभाल करनी है, बस।"

"अब तो अल्ट्रासाउंड भी नहीं करवा सकते न। जुर्म है, लेकिन मैं तो महसूस कर रही हूँ न।" इतना बोलकर प्रज्ञा मुसकरा पड़ी। माँ के चेहरे पर भी मुसकान उभर आई।

मंजू ने 'टेक केयर, प्रज्ञा' कहते हुए विदा ली। सुवर्णा अपनी बेटी को अपनी गोद में लिटाकर उसे थपथपाती रही, जब तक दयाशंकर नहीं आ गए। सुवर्णा ने प्रज्ञा के साथ हुए हादसे की कोई चर्चा नहीं की। अगर दुबारा फिर ऐसा हुआ तो देखेंगे, यह सोचकर वह मौन रही।

दयाशंकर के आने के बाद सुवर्णा चाय बनाकर ले आई और उसके बाद बहुत देर तक माता-पिता बेटी के साथ गप्प-सड़ाके करते रहे।

दूसरे दिन सुवर्णा ने महसूस किया कि प्रज्ञा पहले की तरह प्रसन्न नजर नहीं आ रही। न उसने अखबार देखा और न टीवी। बस प्रेमचंद का उपन्यास 'गोदान' पढ़ती रही। माँ ने नाश्ता रखा तो चुपचाप नाश्ता कर लिया, फिर उपन्यास में खो गई।

सुवर्णा ने पूछा, "बेटी, तू आज कुछ गंभीर नजर आ रही है? तेरी तबीयत तो ठीक है न?"

"ठीक है माँ। यह उपन्यास पढ़ रही हूँ न।"

सुवर्णा कुछ बोली नहीं, लेकिन कल की घटना वह भूल नहीं पाई थी। प्रज्ञा का अचानक असामान्य हो जाना। उसका बुरी तरह काँपना उसे याद आ गया। उसने दयाशंकर से चर्चा की तो वे घबरा गए। बोले, "किसी डॉक्टर को दिखा देते हैं?... तुम कहो तो किसी से झड़वा देते हैं?"

सुवर्णा बोली, "अभी इसकी जरूरत नहीं। बाद में देखते हैं। मैं इसे ऑब्जर्व करती रहूँगी। वैसे रेग्युलर चेकअप के लिए अपने डॉ. राव को दिखाते रहते हैं। कल इसे ले चलते हैं।"

"हाँ, यह ठीक रहेगा। अभी तो प्रज्ञा से भी हम कुछ नहीं बोलते।"

शाम को सब टीवी के सामने बैठे थे। चाय पी रहे थे। प्रज्ञा अपने कमरे में लेटकर आराम कर रही थी। आज पता नहीं कैसे फिर दयाशंकर का मन हुआ कि खबरें देख ली जाएँ, इसलिए उन्होंने टीवी चालू कर दिया। किसी चैनल पर मंदिर-मस्जिद को लेकर फूहड़ बहस चल रही थी, तो किसी चैनल पर किसकी सरकार बनेगी, इस पर सिर-फुटौव्वल मची थी। एक चैनल पर आकर दयाशंकर रुक गए। समाचार वाचक बता रहा था, "एक दिल दहला देने वाली खबर आ रही है गुंटूर से। वहाँ एक नौ वर्षीय बच्ची से बलात्कार। बिस्किट का लालच देकर पचपन साल के अन्नम ने बच्ची को अपने पास बुलाया और उसके साथ बलात्कार किया। उधर गुजरात से भी ऐसी खबरें आ रही हैं, जहाँ दो साल की मासूम के साथ बलात्कार हुआ और उसकी हत्या कर दी गई। घटना है मोरबी की। आखिर क्यों हो रहे हैं बलात्कार? कब तक चलेगा यह सिलसिला। आज इसी पर चर्चा करेंगे हम लोग।"...

टीवी की आवाज प्रज्ञा के कानों तक पहुँच रही थी। अब वह दौड़कर बाहर निकली और जोर से चीखने लगी, "बंद करो ये टीवी।... फौरन बंद करो।... पागल हो जाऊँगी मैं।... मैंने पहले ही कहा था, टीवी मत चालू करना। ... इनको बलात्कार की खबरें ही सुनाना रहा है। बंद करो।" इतना बोलकर प्रज्ञा दहाड़ मार-मारकर रोने लगी।

दयाशंकर ने घबराकर टीवी बंद कर दिया और दौड़कर प्रज्ञा को सँभाला, "माफ करना मेरी बेटी। अब हम केबल कनेक्शन ही कटवा देंगे। न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। तू चिंता मत कर। इन भयावह खबरों से तुझे दूर ही रखेंगे मेरी बच्ची। मुझे माफ कर दे। मेरे कारण तुझे दुख पहुँचा।"

प्रज्ञा कुछ देर तक अपने फूले पेट को देखती रही, फिर रोने लगी और उस पर मुक्के से प्रहार करने लगी और वहीं धम्म से गिर पड़ी

यह देख सुवर्णा और दयाशंकर ने उसे सहारा देकर उठाया और सोफे पर बिठाया दिया। सुवर्णा बोली, "यह क्या कर रही है बेटी? तेरे पेट में तेरा स्वप्न पल रहा है। तेरी बेटी पल रही है। तू उसे पीट रही है?"

"माँ, मुझे बेटी नहीं चाहिए।... किसी भी सूरत में। मैं इस बेटी को जन्म नहीं दूँगी।... मुझे लड़का चाहिए। अभिजीत, सुन रहे हो न, मुझे लड़का चाहिए, लड़का।"

सुवर्णा बोली, "यह कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही है, बेटी। तू तो चाहती थी कि एक बेटी हो। और जब तू एक बच्ची की माँ बनने वाली है तो उल्टी बात कर रही है?"

"हाँ माँ, उल्टी बात कर रही हूँ। मुझे अब लड़की नहीं चाहिए।" प्रज्ञा बोली, "आखिर किसलिए लड़की को जन्म दूँ माँ, ताकि उसके साथ कोई रेप कर दे? फिर उसकी हत्या भी? आए दिन इस देश में यही हो रहा है। मैं तो माँ बनने वाली हर लड़की से कहूँगी, अगर तुम्हारे पेट में लड़की पल रही है तो उसे आने ही मत दो। इस देश में रोज न जाने कितनी बच्चियों से बलात्कार हो रहे होंगे। ...कुछ खबरें ही मीडिया तक पहुँच पाती हैं। इस रेपिस्तान में मैं जानबूझकर अपनी बच्ची को जन्म देकर क्या उन दरिंदों को सौंप दूँ? ...नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।... मैं यह पाप नहीं कर सकती। उससे अच्छा है, अभी इस अविकसित भ्रूण को विकसित होने ही न दूँ। चार महीने ही तो हुए हैं अभी। मैं अबॉर्शन कराना चाहती हूँ। अगर ऐसा नहीं हुआ तो मैं जहर खाकर अपनी जान दे दूँगी। बता देती हूँ।" इतना बोलकर प्रज्ञा फिर जोर-जोर से काँपने लगी और कुछ देर के बाद बेहोश हो गई।

उसे फौरन डॉक्टर राव के पास ले जाया गया। उसने जाँच के बाद बताया, "बलात्कार की घटनाओं को लगातार देख-सुनकर प्रज्ञा के मन में बुरा असर हुआ है। उसका भ्रूण भी डैमेज हुआ है। खून भी बह रहा है। मेरी मानें तो अबॉर्शन ही एक रास्ता है, वरना बेटी की जान को खतरा हो सकता है।"

"इस बारे में प्रज्ञा क्या कहती है, एक बार उसकी राय भी जरूरी है।"

मगर वह अभी बेहोश थी।

दयाशंकर और सुवर्णा उसके होश में आने का इंतजार करने लगे।

सा.अ.

सेक्टर-३, एचआईजी-२, घर नंबर-२,
दीनदयाल उपाध्याय नगर, रायपुर-४९२०१०
दूरभाष : ९४२५२१२७२०

किस बात पर बातें करें

● रवि ऋषि

सुपरिचित रचनाकार। बी.कॉम (ऑनर्स), श्रीराम कॉलेज ऑफ कॉमर्स, दिल्ली विश्वविद्यालय। वर्ष १९६९ में महात्मा गांधी जन्मशती दिल्ली अंतर विद्यालय भाषण प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कार से सम्मानित

(१)

कोई पूछे हाल तो हालात पे बातें करें
आप अपने आप से किस बात पे बातें करें

दूसरों के साथ रिश्तों की तिजारत कीजिए
आप जब हमसे मिलें जज्बात की बातें करें

जन्नतों का जिक्र है बेकार भूखों के लिए
दाल की बातें करें या भात की बातें करें

आज भी सहमा हुआ है झूठ से सच का वजूद
कौन है किससे यहाँ सुकरात की बातें करें

फैसला तो खेलने के बाद ही होगा हुजूर
क्यों अभी से जीत की या हार की बातें करें

(२)

कर के ऐलान या तैयारी कहाँ आती है
मौत को कोई अदाकारी कहाँ आती है

जब उन्हें देखें न वो देखते हम को देखें
अब हमें इतनी भी हुशियारी कहाँ आती है

इश्क में जीतना मुमकिन ही नहीं था अपना
प्यार तो आता है मक्कारी कहाँ आती है

दर्द तो दर्द के होने से पता चलता है
पोथियाँ पढ़के समझदारी कहाँ आती है

बेच के जिनको जमीर अपना मिला हो सबकुछ
उनके हिस्से में ये खुद्दारी कहाँ आती है

(३)

वैसा कभी नहीं उग पाया ऊँची मीनारों के बीच
वो जो चाँद उगा करता था खेतों खतवारों के बीच

कुछ तो लोग बनाते हैं कुछ चुपके से बन जाती हैं
कितनी दीवारें होती हैं घर की दीवारों के बीच

एक आसमाँ गिरवी रखा तब जाकर बस्ती चमकी
हमने तारे भी खोए हैं बिजली के तारों के बीच

बहुत जियादा चकाचौंध से भी आँखें थक जाती हैं
कभी-कभी अच्छा लगता है रहना अँधियारों के बीच

एक जगह पर बँधकर रहने से बंधन बँध जाते हैं
बात समझ में आई हमको जाकर बनजारों के बीच

(४)

तुम्हें भी चाहिए होगा हमारा प्यार अभी
कमर झुकी है दुआएँ हैं बरकरार अभी

अना के रास्ते अकसर कहीं नहीं जाते
अभी भी वक्त है उस शख्स को पुकार अभी

अब ऐसे घर नहीं होते वो खुद कहेगा ये
नया-नया सा है दिल में किराएदार अभी

जो प्यार तुमको मिला है वो बाँट दो आगे
चुका सको तो चुका दो सभी उधार अभी

बहुत सी ख्वाहिशें मारेगी जिंदगी खुद ही
न मन मसोस अभी तू न मन को मार अभी

ये तेरे पास ही शब भर रहेगा चाँद इसे
किसी गजल में किसी नज्म में उतार अभी

जिंदगी दे हमें दो चार दिनों की मोहलत
तुझसे तो जिंदगी भर होना है दो-चार अभी

२०२, ध्रुव अपार्टमेंट्स, आई.पी. एक्सटेंशन
दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ९८१०१४८७४४

ऑस्टिन (टेक्सास) की उल्लासपूर्ण होली

● हरि जोशी

भारतवर्ष की कई परंपराएँ और त्योहार विदेशों में बड़ी उत्सुकता, आश्चर्य और आकर्षण के केंद्र बने रहते हैं। वैसे तो प्रत्येक भारतीय को चार-छह महीने भारतवर्ष से बाहर रहने के बाद अपनी जन्मभूमि बहुत याद आती है, किंतु विदेशों में बसे भारतीय भी अपने मूल संस्कारों के सबसे बड़े वाहक, पोषक और रक्षक हैं। सर्वाधिक संतोष की बात यह है कि हिंदुस्तान के नागरिकों की छवि सामान्य तौर पर शांतिप्रिय और परिश्रमी व्यक्ति की मानी जाती है। विश्वपटल पर शांतिप्रियता, ईमानदारी और कर्मठता ही व्यक्ति को सम्माननीय और आत्मनिर्भर बनाती है।

विदेशों में जिस तरह हर स्थान पर भारतीय अपनी सामाजिक प्रथाएँ, धार्मिक परंपराएँ और आस्थाएँ सहेजकर रखते हैं, ठीक वैसे ही ऑस्टिन में प्रति शनिवार एक मंदिर में सुंदरकांड का पाठ और भजन होते हैं। हारमोनियम, मंजीरे और ढोलक पर सुंदरकांड का पाठ पूरी तन्मयता से किया जाता है। उसमें गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश आदि सभी प्रांतों के निवासी सम्मिलित होते हैं, वहाँ प्रत्येक आवास वातानुकूलित होता ही है, अत: अंदर तो सह्य तापमान में भारतीय महिलाएँ-पुरुष बैठते हैं, किंतु सुंदरकांड की संगीतमय कर्णप्रिय ध्वनि सुनकर एक अमेरिकन प्रौढ़ महिला बाहर खुले आसमान के नीचे पूरे समय नाचती रहती है। जैसे ही संगीतमय प्रस्तुति बंद होती है, उसका नर्तन भी स्वत: ही रुक जाता है। उस महिला को न हिंदी आती है न भारतीय संगीत। फिर भी वाद्ययंत्र और संगीतलहरी में वह मस्ती का अनुभव करती है। उस महिला ने भी दिन और समय शायद साध रखा है।

सुंदरकांड के पाठ के पश्चात् पूना के गोडबोलेजी या जबलपुर से वर्षों पूर्व वहीं आकर बस गए राम अग्निहोत्रीजी आधा घंटा धार्मिक चर्चा भी करते हैं। फिर रामायणजी तथा हनुमानजी की आरती होती है। सभी तीस-चालीस परिवार अपने-अपने घर से भोजन के लिए अलग-अलग वस्तुएँ बनाकर लाते हैं। विभिन्न तरह की सब्जियाँ, कढ़ी, रोटियाँ, पूड़ा, पराँठे, अचार, केले, सेब आदि फल एक साथ सभी भारतीय मिल-बैठकर खाते हैं, यह कार्यक्रम प्रति शनिवार दो घंटे शाम सात से शाम नौ बजे तक होता है। यहाँ के हिरन तथा हिरनों के बच्चे मनुष्य से मित्रवत् तथा निर्भय रहते हैं। शाम सात बजे जब सूर्यास्त हो रहा होता है तो वे पहाड़ियों से उतरकर मंदिर के आसपास कुलाँचें भरते दिखाई देते

जाने-माने व्यंग्यकार। अब तक तीन कविता-संग्रह, पंद्रह व्यंग्य-संग्रह, छह उपन्यास के अलावा प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से प्रसारित। म.प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन का 'वागीश्वरी सम्मान', 'व्यंग्यश्री सम्मान', 'गोयनका सारस्वत सम्मान' आदि।

हैं। वन्यप्राणी उद्यानों में एक सीमित चहारदीवारी में तो हिरन भारत में भी देखे जाते हैं, किंतु इस प्रकार निर्द्वंद्व देखने का अवसर तो ऑस्टिन में ही सुलभ हो सकता है। शहर से निकलकर घाटियों, हरे-भरे जंगलों, वनस्पतियों से होते हुए, जल से लबालब नदियों को पुलों के ऊपर से पार करने का अनुभव बहुत रोमांचकारी होता है। पूरे ऑस्टिन में दो-चार स्वनिर्मित मंदिरों में अपनी-अपनी सुविधानुसार भारतीय भक्तजन ऐसे धार्मिक कार्यक्रम आयोजित कर ही लेते हैं।

इसी तरह मकर संक्रांति का पर्व भी एक अन्य मंदिर में मनाया जाता है। इस अयप्पा मंदिर में दक्षिण भारतीय अधिक संख्या में एकत्र होते हैं। कार्यक्रम का संचालन भले ही अंग्रेजी में होता है, किंतु त्रिपुंडधारी या तिलकधारी पंडितजी रामायण, गीता, वेदों, उपनिषदों के अनेक मूल लोकों का पाठ करते हैं और उनके आशय को सविस्तार समझाते हैं। इस तरह मकर संक्रांति के पर्व की प्रासंगिकता को भी समझाते हैं। अनिवासी भारतीयों में बहुत गहरे यह सत्-भावना विकसित हो चुकी है कि आगामी पीढ़ी को न सिर्फ भारतीय संस्कारों से परिचित कराया जाए, बल्कि कभी-कभी उन्हें व्यवहार में लाना भी सिखाया जाए, इसीलिए प्राय: सभी परिवारों के मुखिया धार्मिक पर्व-त्योहारों पर बच्चों को साथ लेकर अवश्य सम्मिलित होते हैं। संक्रांति पर्व में तो कुछ सिख और मुसलिम ही सम्मिलित दिखाई देते हैं, किंतु होली के त्योहार में तो भारतीय परिवेश में पले-बढ़े अधिकांश हिंदू, मुसिलम, सिख, ईसाई मात्र ही एकत्र नहीं होते, पूरे उल्लास से रंग खेलते हैं। पानी की तो वहाँ कोई कमी नहीं रहती, किंतु मार्च के महीने में वहाँ अच्छी ठंडक रहती है, इसलिए तिलक लगाकर या सूखे रंग से ही बहुधा होली खेल ली जाती है। बड़ी संख्या में अमेरिकन महिलाएँ-पुरुष भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं। यद्यपि नीग्रो लोगों को वहाँ नहीं देखा जाता।

ऑस्टिन शहर टेक्सास राज्य की राजधानी है। शहर की आबादी तो लगभग दस लाख ही होगी, किंतु खुली-खुली बस्ती होने के कारण उसका क्षेत्रफल बहुत अधिक है। लगभग पच्चीस एकड़ क्षेत्रफल में निर्मित वहाँ का सबसे विशाल मंदिर बरसाना धाम है। शहर से लगभग बीस मील बाहर। जगतगुरु कृपालुजी महाराज की, अमेरिकी मूल की शिष्या प्रभावतीदेवी इस मंदिर का संचालन करती हैं। सबसे पहले जगतगुरु कृपालुजी महाराज का वीडीओ कैसेट द्वारा दिया गया एक घंटे का प्रवचन होता है। फिर महाशिवरात्रि अथवा अन्य पर्व पर उनकी शिष्या प्रभावतीदेवी का अंग्रेजी में हिंदी संस्कृतमय प्रवचन होता है। बीच-बीच में प्रवचनकत्री की शुद्ध हिंदी और शुद्ध संस्कृत सुनकर भारतीय मूल के लोग भी हतप्रभ हुए बिना नहीं रहते। भक्तिभाव से सराबोर इस मनमोहक धार्मिक प्रवचन के बाद मैं उनसे मिला और मैंने पूछा कि इतनी अच्छी हिंदी आप कैसे बोल लेती हैं? साध्वी प्रभावतीदेवीजी बोलीं, मैं छह वर्ष लगातार वाराणसी में ही रही हूँ और हिंदी तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन मैंने गुरुदेव कृपालुजी महाराज के सान्निध्य में किया है। उनकी प्रेरणा से ही यह आश्रम मूर्तरूप ले सका है।

होली पर्व प्रात: नौ बजे शुरू होता और शाम पाँच बजे के लगभग समाप्त हो जाता है। पाँच बजे कार्यक्रम इसलिए समाप्त कर दिया जाता है, ताकि सभी आगंतुक अँधेरा होते-होते अपने घर पहुँच सकें, ग्यारह बजे से प्रात: से लगभग दो घंटे का रंग-गुलाल होता है। हिंदुस्तान से लाई गई इक्की-दुक्की पिचकारियों का प्रयोग भी कर लिया जाता है, किंतु ठंडी अधिक होने के कारण पानी का उपयोग कम ही किया जाता है। जब रंग-गुलाल का कार्यक्रम हो रहा होता है, तब मंद-मंद स्वरों में मथुरा-वृंदावन की होली के सुमधुर भजन चल रहे होते हैं। संगीत और रंग-गुलाल की युति वातावरण को बहुत ही उल्लासमय और आकर्षक बना देती है। इस दिन समग्र भारत का लघुरूप ऑस्टिन के बरसाना धाम में होली खेलता हुआ दिखाई देता है। गरम पानी से नहाने की भी भरपूर व्यवस्था वहाँ रहती है।

होली मनानेवाले बड़ी संख्या में वे अमेरिकी भी होते हैं, जिन्होंने भारतीयों से विवाह कर स्वयं को अर्ध-भारतीय घोषित कर रखा है। उनमें वे अमेरिकी पुरुष होते हैं, जिन्होंने भारतीय लड़कियों से विवाह किया है अथवा कुछ वे अमेरिकी महिलाएँ होती हैं, जिन्होंने भारतीय पुरुषों से विवाह किया होता है। इन सभी त्योहारों में कार्यक्रम स्थल पर ही, क्योंकि कई-कई मीलों की दूरी पार कर लोग पर्व मनाने पहुँचते हैं, निर्जन एकांत में चार-छह घंटे भी गुजारते हैं, इसीलिए भारतीय व्यंजनों सहित भारतीय भोजन की अच्छी व्यवस्था रहती है। यह व्यवस्था कोई-न-कोई भारतीय उद्योगपति, जैसे लक्ष्मणभाई पटेल या रमणभाई शाह खुशी-खुशी अपने ऊपर ले लेते हैं। इस समय तक सभी आगंतुकों के पेट में चूहे भी जोर-जोर से कूदने लगते हैं। सुबह से लगकर ठेठ भारतीय शैली वाला भोजन तैयार करवाया जाता है, जिसे बड़े-बड़े भगौनों में टेबलों पर रख दिया जाता है। बारह-पंद्रह सौ प्रतिभागी नियत स्थान से प्लेट, थाली, कटोरी आदि उठाते और पंक्तिबद्ध होकर उन टेबलों के सामने खड़े हो जाते हैं। टेबल के उस तरफ कुछ अमेरिकी, कुछ भारतीय स्त्री-पुरुष बड़े-बड़े चम्मच अथवा करछुल लेकर थाली में परोसने को तैयार रहते हैं। बारी-बारी से सभी भोजनार्थी दाल, सब्जी, रोटी, चावल, सलाद लेकर आगे बढ़ते जाते हैं और बड़े-बड़े हॉलों में लगे टेबल-कुरसियों पर बैठकर भोजन करते हैं। पहली बार सबके भोजन ले लेने के बाद भीड़ कम हो जाती है। बाद में जिन्हें और कुछ लेना हो, वे भी बिना किसी संकोच के ले सकते हैं, भोजनोपरांत बरसाना धाम परिसर में एकाध पान वाला भी आकर बैठ जाता है, जिन्हें पान खाने का शौक हो, उन्हें पान भी मिल जाते हैं।

रंग-गुलाल और होली के बाद एक रंगारंग कार्यक्रम होता है, जिसमें काश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के उपस्थित कलाकारों में से जितने इच्छा रखते हैं, भाग ले सकते हैं, उन्हें मंच पर बारी-बारी से आमंत्रित किया जाता है। बारह-पंद्रह सौ प्रतिभागियों, दर्शकों में मुश्किल से दस-बीस कलाकार सामने आते हैं। इनमें कुछ मिमिक्री करने वाले, कुछ शास्त्रीय भजन तो कुछ गीत या फिल्मी गाने गाने वाले होते हैं, उनकी रंगारंग प्रस्तुतियाँ होती हैं। कोई-कोई समूह तो हारमोनियम, तबला, सितार, बाँसुरी आदि सभी वाद्ययंत्रों से लैस होकर आते हैं और भारतीय मनोरंजन या संगीत का आनंद लेते हैं। कोई-कोई कलाकार फिल्म जंजीर का अथवा शोले के गब्बर सिंह के संवाद बोलकर दर्शकों को आनंद देता है। यह कार्यक्रम भी लगभग दो घंटे चलता है। कुँआरे लड़के या लड़कियों के वे माता-पिता, जो भारतीय परिवारों में ही विवाह करने के इच्छुक रहते हैं, ऐसे अवसरों का लाभ लेकर किसी भी योग्य लड़के या लड़की के बारे में उनके माता-पिता से बात करते हैं। वहाँ केवल भारतीय होना ही प्राथमिकता होती है, प्रदेश जाति आदि कुछ भी देखा नहीं जाता।

अमेरिका में ऐसा एकत्रीकरण प्राय: नहीं होता, रंग-गुलाल होली का पर्व उनके लिए अजूबा है। अमेरिका में खुले में कहीं भी भीड़ नहीं होती, अत: जहाँ भी बड़ा समूह होता है, वहाँ कोई-न-कोई अनहोनी की आशंका बनी रहती है, इसीलिए वहाँ का स्थानीय प्रशासन सतर्क हो जाता है और बरसाना धाम मंदिर के आसपास पंद्रह-बीस कॉप, यानी पुलिस वाले अपनी शासकीय गाड़ियों में तैनात कर दिए जाते हैं। मेरा मानना है कि विदेशों में बसे हुए भारतीय प्रत्येक छोटे-बड़े शहर में कोई-न-कोई बरसाना धाम बना ही लेते हैं।

३/३२, छत्रसाल नगर, फेज-२
जे.के. रोड, भोपाल-४६२०२२
दूरभाष : ०९८२६४२६२३२

सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली

● चितरंजन भारती

अंग्रेजों की लगभग दो सौ साल की गुलामी के बाद भारतवर्ष १९४७ ई. में स्वतंत्र हुआ। मगर अखंड रूप में नहीं, बल्कि टुकड़ों में। किंतु जिस सांप्रदायिकता के प्रश्न को हल करने के लिए भारत का विभाजन हुआ था, वह अपनी जगह ज्यों-का-त्यों रह गया। उसी समय से यह सवाल भी उठने लगा कि क्या भारत का विभाजन रोका जा सकता था और उसमें महात्मा गांधी की भूमिका क्या रही? चूँकि स्वतंत्रता-संग्राम के सेनापति के रूप में महात्मा गांधी की भूमिका निर्विवाद रही, इसलिए उनकी तरफ इशारा होते रहना स्वाभाविक था। अब तक मिले साक्ष्यों के आधार पर यह बात आईने की तरह साफ है कि गांधीजी भारत-विभाजन के विरुद्ध थे। फिर भी भारत का विभाजन हुआ, इसमें उनकी क्या भूमिका रही अथवा उस वक्त क्या परिस्थितियाँ थीं, इन्हें जाने बगैर हम किसी निष्पक्ष निर्णय तक नहीं पहुँच सकते।

सन् १८५७ का प्रथम स्वतत्रता-संग्राम, जिसे 'सिपाही विद्रोह' के नाम से भी जाना जाता है, के बाद भारतीयों, खासकर मुसलमानों को अंग्रेज शंका की दृष्टि से देखने लगे थे। कारण कि प्रथम बार मुसलमानों ने हिंदुओं के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर स्वाधीनता-संघर्ष में भाग लिया था। सन् १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का उदय हुआ, जिसे गांधी के आगमन तक आभिजात्य एवं कुलीन वर्गों की पार्टी माना जाता था। १८वीं सदी के उत्तरार्ध में भारत में अनेक पुनर्जागरण आंदोलन हुए, जिससे हिंदुओं में पर्याप्त धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक बदलाव तो हुए ही, दूसरी तरफ उनमें अपनी प्राचीन सभ्यता-संस्कृति एवं धर्म के प्रति गौरव का भान हुआ। मगर मुसलमान इससे विमुख से रहे। हालाँकि मुसलमानों में भी धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक बदलाव के लिए आंदोलन हुए थे, जो 'अलीगढ़ आंदोलन' के नाम से भी जाना जाता है। इसका श्रेय प्रमुखत: सर सैयद अहमद को दिया जाता है।

सर सैयद अहमद १८८७ ई. के बाद ही कांग्रेस का विरोध करने लगे थे। इसका प्रमुख कारण यही था कि अंग्रेज मुसलमानों को संदेह की दृष्टि से देखते थे, इसलिए उनका समर्थन कांग्रेस को मिलता था। जबकि सर सैयद अहमद अपनी, खासकर मुसलमानों की नजदीकियाँ अंग्रेजों के साथ बढ़ाना चाहते थे। वे हिंदुओं की मानसिकता से भय खाते और घृणा भी करते थे। वे प्रजातंत्र या लोकतंत्र को संदेह की दृष्टि से देखते थे, जो कि कांग्रेस का आदर्श और लक्ष्य था। ऐसे में उन्हें लगा कि अगर भारत स्वतंत्र हुआ तो देश में बहुमत रखनेवाले हिंदुओं का शासन होगा

सुपरिचित लेखक-कथाकार। अब तक 'किस मोड़ तक' (कहानी-संग्रह); 'और आम जनता के लिए' (लघुकथा-संग्रह) प्रकाशित। कई रचनाएँ पुरस्कृत एवं प्रशंसित। साहित्यश्री एवं आचार्य की उपाधि से सम्मानित। संप्रति हिंदुस्तान पेपर कॉ.लि. की इकाई कछाड़ पेपर मिल में कार्यरत।

और इससे अल्पमतवाले मुसलिमों को भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। इस तरह उन्होंने १८८६ ई. से ही भारत में विवादास्पद मुसलिम राजनीति के चरणों की शुरुआत कर दी।

सन् १८९८ में सर सैयद अहमद के निधन के उपरांत भी मुसलिम नेताओं का यही प्रयास रहा कि मुसलमानों को कांग्रेस से अलग-थलग रखा जाए। उन्हीं दिनों हिंदी-उर्दू का जबरदस्त विवाद भी उठा। उर्दू प्रांतीय अदालतों की भाषा थी। उस समय उर्दू के साथ हिंदी को भी लिये जाने की माँग उठी। १९०० ई. में संयुक्त प्रांत (उ.प्र.) के गवर्नर ने उर्दू के साथ हिंदी भी अदालतों की भाषा बना दी। इससे मुसलिमों को काफी रोष हुआ। उन्हें लगा कि अंग्रेज हिंदुओं के साथ मिलकर उनकी अस्मिता पर चोट कर रहे हैं। १९०४ ई. में अलीगढ़ में मुसलिमों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें यह प्रस्ताव पास किया गया कि भारत एक कौम नहीं, बल्कि कई कौमों का महाद्वीप है। ऐतिहासिक तथ्यों को यदि आधार मानें तो यह सिद्धांत गलत सिद्ध होता है।

मुसलिम सिर्फ बंगाल और पंजाब प्रांत में बहुमत में थे। उन्हें लगता था कि हिंदू कांग्रेस की आड़ लेकर बहुमत की राजनीति कर रहे हैं। अंतत: १९०६ ई. में ढाका में 'मुसलिम लीग' की स्थापना की गई। सर सैयद अहमद ने जिस मुसलिम राजनीति का बीजारोपण किया था, अब वह पुष्पित-पल्लवित होकर वृक्ष का आकार ग्रहण करने लगी थी और जिसे बाद में जिन्ना जैसे नेताओं ने खाद-पानी देकर अपनी राजनीति चलाने के लिए खूब इस्तेमाल किया।

वर्ष १९०५ ई. में अंग्रेजों द्वारा किए गए 'बंगाल के विभाजन' के विरुद्ध भारत में एक स्वत:स्फूर्त स्वदेशी आंदोलन उठ खड़ा हुआ। बढ़ते तीव्र आंदोलनों को देखकर अंतत: अंग्रेजों ने १९११ ई. में बंगभंग योजना को रद्द कर दिया। मगर इसके साथ ही वे भारत की राजधानी को कलकत्ता से उठाकर दिल्ली ले आए तथा बंगाल से अलग कर दो नए राज्य बिहार और उड़ीसा बना दिए। सन् १९०९ में लार्ड मार्ले ने गवर्नर

जनरल मिंटो को एक सुधार योजना प्रस्तुत करने को कहा, जो इतिहास में 'मोर्ले मिंटो योजना' के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें यों तो अनेक बातें हैं, मगर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि केंद्रीय एवं प्रांतीय कौंसिलों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन के लिए पृथक् निर्वाचन प्रणालियाँ बनाई गई थीं। मुसलमानों के लिए सुरक्षित क्षेत्र बनाए गए थे, जहाँ सिर्फ मुसलमान ही उम्मीदवार हो सकते थे। फिर निर्वाचनों के लिए वोट देने के लिए हिंदू और मुसलमानों के लिए अलग-अलग व्यवस्था थी। आगे चलकर यही विषवृक्ष भारत में सांप्रदायिकता के उभार और विभाजन का कारण बना।

उस वक्त तक गांधीजी भारत में कहीं थे ही नहीं, जो उन्हें इसके लिए दोषी करार दिया जाए। गांधी १९१४ ई. में दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे थे। वे आने के साथ ही भारतीय राजनीति में सक्रिय योगदान नहीं देने लगे, बल्कि अपने राजनैतिक गुरु गोपालकृष्ण गोखले की सलाह पर भारत को सही अर्थों में समझने-पहचानने के लिए देश भर का दौरा करने लगे।

१९१६ ई. में लखनऊ में कांग्रेस और मुसलिम लीग का अधिवेशन हुआ। दोनों ने ही अलग-अलग एक योजना स्वीकार की, जिसे कांग्रेस लीग स्कीम अथवा 'लखनऊ समझौता' कहा जाता है। लखनऊ समझौते तक गांधी की कांग्रेस में कोई विशेष महत्ता नहीं थी। उस वक्त कांग्रेस में बाल-पाल-लाल, अर्थात् बाल गंगाधर तिलक, विपिन चंद्र पाल और लाला लाजपत राय का डंका बजता था। लखनऊ समझौता देखने पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि उस वक्त कांग्रेस ने मुसलिमों के लिए तुष्टीकरण की नीति अपनाई थी। उसने सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली तथा उनके अधिप्रतिनिधित्व की माँग स्वीकार कर ली। इस समझौते से तात्कालिक फायदा चाहे जो हुआ हो, इसके दूरगामी प्रभाव अत्यंत भयंकर हुए। कांग्रेस ने मुसलिम लीग को मुसलमानों का एकमात्र प्रतिनिधि संगठन मानकर स्वयं को एक तरह से केवल हिंदुओं का प्रतिनिधित्व करनेवाली पार्टी के रूप में मान लिया और अपने को राष्ट्रीय दल कहलाने के दावे को सदैव के लिए दुर्बल कर दिया।

फरवरी १९२५ ई. में 'साइमन कमीशन' भारत आया और उसने अपना प्रस्ताव रखा। इसमें अन्य बातों के अलावा प्रमुखतः यह भी था कि सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली और अधिप्रतिनिधित्व के नियमों को लागू रहना चाहिए। दिसंबर १९२८ ई. में 'नेहरू रिपोर्ट' पर एक सर्वदलीय सम्मेलन में विचार किया गया। यों तो इस रिपोर्ट में कई विशेषताएँ थीं।

सन् १९२० में जब गांधी सक्रिय राजनीति में उतरे, तब तक पूरे देश में सांप्रदायिकता का जहर फैल चुका था। गांधी को ब्रिटिश सत्ता और सांप्रदायिकता के अलावा सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियों से भी लंबी लड़ाई लड़नी थी। वे सभी बातों को पैनी निगाह से देख-परख रहे थे। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद जब ब्रिटेन ने पराजित तुर्की का विभाजन कर दिया तो दुनिया भर के मुसलमानों ने इसके विरोध में 'खिलाफत आंदोलन' चलाया, क्योंकि वे तुर्की के सुलतान को मुसलिम जगत् का खलीफा मानते थे। भारत में भी मौलाना अबुल कलाम आजाद एवं अली बंधुओं के नेतृत्व में 'खिलाफत आंदोलन' चल रहा था। गांधीजी ने इस आंदोलन का समर्थन इसलिए किया, क्योंकि यह उन्हें सत्य और न्याय पर आधारित दिखाई दिया। गांधी ने १ अगस्त, १९२० से खिलाफत के सवाल पर 'असहयोग आंदोलन' आरंभ कर दिया। इसे कांग्रेस ने सितंबर, १९२० के एक विशेष अधिवेशन तथा दिसंबर के वार्षिक अधिवेशन में अनुमोदित भी कर दिया।

५ फरवरी, १९२२ तक असहयोग आंदोलन की आग देश के कोने-कोने तक फैल गई थी। गांधीजी एक चामत्कारिक व्यक्तित्व के रूप में माने जाने लगे। पहली बार करोड़ों भारतीयों ने, जिनमें निम्न तबके के किसान-मजदूर से लेकर छोटे-बड़े जमींदार और राजे-रजवाड़े भी शामिल थे, ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध कमर कसकर लड़ाई लड़ी। यह आंदोलन जन-जन के मन में पैठ कर गया था। हिंदू-मुसलमानों ने कमर कसकर समान रूप से संघर्ष कर ब्रिटिश सत्ता को सही अर्थों में हिला दिया। मगर चौरी-चौरा की घटना के कारण गांधीजी ने इसे स्थगित कर दिया।

खिलाफत आंदोलन से उत्पन्न सांप्रदायिक सद्भाव कुछ मुसलिम नेताओं को संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र के पक्ष में प्रभावित कर रहा था। उनमें जिन्ना प्रमुख थे। ये वही जिन्ना थे, जो 'मुसलिम लीग' को बकवास और बाल गंगाधर तिलक को हमेशा राष्ट्रीय नेताओं में सर्वोपरि मानते थे। उन्होंने जमकर तिलक के मुकदमों की पैरवी की थी। पुनः अपने इंडिपेंडेंट दल के साथ १९२४ ई. में मोतीलाल नेहरू के साथ सहयोग किया था। चूँकि वे सम्मिलित निर्वाचन के पक्ष में थे, इसलिए दूसरे मुसलिम नेताओं, खासकर बंगाल-पंजाब के मुसलिम नेताओं ने उन्हें सदैव हाशिए पर रखने की कोशिश की।

फरवरी १९२५ ई. में 'साइमन कमीशन' भारत आया और उसने अपना प्रस्ताव रखा। इसमें अन्य बातों के अलावा प्रमुखतः यह भी था कि सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली और अधिप्रतिनिधित्व के नियमों को लागू रहना चाहिए। दिसंबर १९२८ ई. में 'नेहरू रिपोर्ट' पर एक सर्वदलीय सम्मेलन में विचार किया गया। यों तो इस रिपोर्ट में कई विशेषताएँ थीं। मगर उसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण था कि निर्वाचन प्रणाली को वयस्क मताधिकार और क्षेत्रीय निर्वाचन के आधार पर होना चाहिए। हालाँकि अल्पसंख्यकों के लिए स्थान आरक्षित थे, अली बंधुओं ने इस रिपोर्ट की आलोचना आरंभ कर दी। वे इस सम्मेलन से ही उठकर चले गए और विभिन्न प्रांतों में घूम-घूमकर सांप्रदायिकता का प्रचार करने लगे।

१९३१ ई. में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन हुआ, जिसमें गांधीजी को कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में अधिकृत किया गया। हालाँकि वे एक अन्य प्रतिनिधि बिहार के आंदोलनकारी अबुल क्यूम अंसारी को भी अपने साथ ले जाना चाहते थे। मगर मुसलिम दलों के कड़े प्रतिरोध के कारण वे उन्हें अपने साथ नहीं ले जा सके। अभी तक तो बात सांप्रदायिक प्रणाली और अधिप्रतिनिधित्व को बहाल रखने अथवा खत्म करने की बात चल रही थी, किंतु गोलमेज सम्मेलनों में दूसरे संगठनों, खासकर दलित वर्ग के लिए अलग आरक्षण और निर्वाचन प्रणाली की बात उठ

आई। सम्मेलन में सभी लोग अपने-अपने दलों के हितों की बात कर रहे थे। एक अकेले गांधी ही वहाँ अखंड भारत का सपना देख रहे थे। अंततः उन्हें वहाँ से खाली हाथ निराश होकर लौटना ही था।

गोलमेज सम्मेलनों के असफल होने पर ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैमजे मैकडोनल्ड ने १९३२ ई. में कम्यूनल अवार्ड (सांप्रदायिक निर्णय) की घोषणा कर दी। उसने पृथक् निर्वाचन पद्धति पर बल दिया था। पहले जहाँ भारतीयों को दस टुकड़ों में बाँटा जाना था, वहाँ अब उनके अठारह टुकड़े कर दिए गए थे, जिनमें दलित वर्ग प्रमुख था। कांग्रेस कोई निर्णय नहीं ले पा रही थी। मगर गांधी इसके विरुद्ध दृढ संकल्प लिये हुए थे। वहीं दलितों को हिंदुओं से किसी भी मूल्य पर कटने नहीं देना चाहते थे। उन्होंने गोलमेज सम्मेलन में ही यह घोषणा कर दी थी कि यदि किसी ने दलितों को हिंदुओं से अलग करने की कोशिश की तो वे जान की बाजी लगा देंगे।

सांप्रदायिक निर्णय के विरुद्ध पहले तो गांधी ने ब्रिटिश शासकों के साथ पत्राचार किया। उनसे संतोषजनक उत्तर न मिलने पर वे २० दिसंबर, १९३२ ई. से अनशन पर बैठ गए। गांधीजी के अनशन पर बैठने से ब्रिटिश शासकों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना था, सो नहीं पड़ा। परंतु अन्य हिंदू नेताओं पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ा। मदन मोहन मालवीय एवं उन जैसे अन्य प्रमुख हिंदू नेताओं ने दलित नेता भीमराव आंबेडकर से गंभीर विचार-विमर्श आरंभ कर एक समझौता किया और इस प्रकार उस समझौते के फलस्वरूप गांधीजी का अनशन २६ दिसंबर, १९३२ ई. को टूटा। उस समय की परिस्थितियों में गांधी ऐसा न करते, तो अंग्रेजों की भारत को छिन्न-भिन्न करने की चाल सफल हो जाती और तब पाकिस्तान जैसे दलितिस्तान, सिखिस्तान और न जाने कौन-कौन से टुकड़े बन जाते।

सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली की यही तो विशेषता थी। बाद में गांधीजी की मौजूदगी में आंबेडकर एवं मदन मोहन मालवीय, राजेंद्र प्रसाद, राजगोपालाचारी आदि के साथ हुआ समझौता 'पूना पैक्ट' के नाम से मशहूर हुआ। इस समझौते के अनुसार १४८ स्थान दलितों के लिए आरक्षित किए गए। हरिजनों तथा हिंदुओं के लिए संयुक्त निर्वाचन प्रणाली बनाई गई। बाद में ब्रिटिश सरकार द्वारा इसे मान्यता दे दी गई। गांधीजी के इस कार्य से मुसलिमों को लगा कि इस तरह अब वे हिंदुओं का बहुमत बनाने की राजनीति कर रहे हैं। जबकि वे सिर्फ भारतीय समाज के ज्यादा टुकड़े न हों, इसी प्रयास में लगे थे। जो भी हो, तभी से खासकर जिन्ना का मत-परिवर्तन होने लगा और वे मुसलिम कट्टरवादिता की तरफ झुकने लगे थे। 'सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्तां हमारा' लिखनेवाले प्रसिद्ध शायर इकबाल तो 'पूना पैक्ट' के प्रखर विरोधी थे। मुसलिम लीग के अध्यक्ष के रूप में मो. इकबाल ने १९३० ई. में पश्चिमोत्तर भारत के मुसलिमों के लिए जिस एक राज्य 'पाकिस्तान' की कल्पना की थी, वही पाकिस्तान की माँग के लिए औचित्य बना।

१९३७ ई. के निर्वाचन में लीग की सफलता उल्लेखनीय रही। जिन्ना 'संयुक्त निर्वाचन प्रणाली' के बदले 'सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली' के मुखर प्रवक्ता बन गए थे। गांधी जहाँ भारतीय समस्याओं का हल दो पक्षों, कांग्रेस और ब्रिटिश सत्ता के द्वारा संभव मानते थे, वहीं जिन्ना यह मानते थे कि समस्या का समाधान चार पक्षों के मध्य हो सकता है। दो अन्य पक्ष थे—मुलसिम लीग और भारतीय रजवाड़े।

२३ मार्च, १९४० ई. को मुसलिम लीग के लाहौर के वार्षिक अधिवेशन में प्रसिद्ध 'पाकिस्तान प्रस्ताव या लाहौर प्रस्ताव' पास कर दिया गया। कांग्रेस के लिए ये असंभव कार्य थे। कांग्रेस अपने मूल सिद्धांतों और प्रजातांत्रिक सिद्धांतों से बाहर अथवा विरुद्ध कैसे जाती और अपना राष्ट्रीय स्वरूप क्योंकर खोती। इस मामले में अकेले गांधी भी अलग-थलग पड़ रहे थे। वे कांग्रेस को अपने दिखाए रास्ते से हटने को कह भी नहीं सकते थे। साथ ही उनका मुसलिम लीग को समझाने-बुझाने का सारा प्रयास निष्फल सिद्ध हो रहा था। अब कुछ कट्टरवादी हिंदू नेता और दल भी विभाजन की बात कहने लगे थे। उधर ब्रिटिश सत्ता भी उन्हें और हवा देकर बढ़ा रही थी। ऐसे में भारत का विभाजन साफ दिख रहा था। ८ अगस्त, १९४२ ई. को भारत छोड़ो आंदोलन व्यापक रूप से शुरू हुआ। उस वक्त तक कांग्रेस के अनेक नेता सैद्धांतिक रूप से पाकिस्तान की माँग को अनचाहे ही सही, स्वीकार करने लगे थे। जुलाई १९४४ ई. में राजगोपालाचारी ने देश की सांप्रदायिक समस्या को सुलझाने के लिए एक फॉर्मूला प्रकाशित किया, जो इतिहास में उन्हीं के नाम पर राजगोपालाचारी फॉर्मूला के नाम से प्रसिद्ध है तथा भारत का विभाजन भी उसी आधार पर हुआ।

१९४५ में केंद्रीय विभाजन सभा और प्रांतीय सभा के लिए चुनाव हुए। सामान्य स्थानों पर कांग्रेस तथा आरक्षित स्थानों पर मुसलिम लीग को भारी सफलता मिली। इन चुनावों से अब यह बात साफ हो गई कि कांग्रेस का मुसलमानों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं है और मुसलमानों का प्रतिनिधित्व वास्तव में मुसलिम लीग ही करता है। इस कटु यथार्थ को नेहरू-पटेल जैसे कांग्रेसी नेता ही नहीं बल्कि गांधी भी समझने लगे थे। वे सक्रिय राजनीति से अलग होने की सोचने लगे, अलग भी हो गए। गांधी की भारत-विभाजन में क्या भूमिका रही, यह सवाल ही बेतुका है। वे तो शुरू से अंत तक इसके विरुद्ध थे। वे जीवन भर सांप्रदायिकता से संघर्ष करते रहे और अंत में सांप्रदायिकता के भूत ने ही उनके जीवन का अंत भी कर दिया। उन्हें हिंदू अथवा मुसलमान बताने के बजाय सच्चा मनुष्य बताना ज्यादा सही है। भारत का विभाजन २०वीं सदी का एक कटु यथार्थ है, जो साम्राज्यवादियों की राजनैतिक देन था। सांप्रदायिक निर्वाचन प्रणाली असंवैधानिक ही नहीं, अमानवीय और असामाजिक कृत्य थी, जो मूर्खतापूर्ण तरीके से भारत पर थोप दी गई थी। डॉ. राजेंद्र प्रसाद के अनुसार—"भारत का विभाजन जिन्ना या किसी अन्य द्वारा नहीं हुआ, बल्कि वह लार्ड मिंटो के कारण हुआ, जिसने १९०९ ई. में पृथक् निर्वाचन प्रणाली दी थी।"

सा अ

क्वा.सं.-बी-१५२, एचपीसी टाउनशिप
पो. पंचग्राम-७८८८०२ (असम)
दूरभाष : ९४०१३७४७४४

परी नहीं होती···

● मीनू त्रिपाठी

"बृंदा भाभी, आप यहीं रुककर सारी व्यवस्था सँभालना। एक रात की बात है, सुबह छह-सात बजे तक हम बहू को बिदा करा लाएँगे।"

"जैसा आप कहें जीजी, पर एक बात पूछनी है, बहू का स्वागत गेस्ट हाउस में करें या घर में?"

बृंदा के इस प्रश्न से उसकी ननद रमोला खीज भरे स्वर में बोली, "उफ बृंदा, तुम भी न··· रही निरी बेवकूफ-बौड़म। अरे, गेस्ट हाउस की बुकिंग परसों सुबह तक है। सारे मेहमान यहीं रुके हैं। तो जाहिर है, बहू का स्वागत यहीं पर करोगी। कल शाम यहाँ से बहू को लेकर घर जाएँगे। बहू को लेकर हम आ जाएँ, तब स्वागत-पूजा के बाद घर निकल जाना, वहाँ भी सब फैला पड़ा है, साफ-सफाई करके रखना, हमारे पहुँचने से पहले सब व्यवस्था दुरुस्त कर लेना, समझी। अब चलो, कुआँ पूजने की रस्म शुरू करो।" रमोला के आदेश के साथ ही रस्म आरंभ हो गई।

कुआँ पूजन उत्तर प्रदेश की अहम रस्म है। यह रस्म बरात की रवानगी से ठीक पहले होती है। इस रस्म में बेटा माँ के आँचल को पकड़कर दिलासा देता है कि वह इस आँचल का मान रखेगा। सांकेतिक रूप से वह अपनी नव-विवाहिता के आने के बाद भी अपनी माँ का खयाल रखने का वचन देता है। यह एक भावुक पल होता है। ऐसे में अकसर माँ-बेटे भावुक होकर एक-दूसरे के गले लगते हैं। शांतनु से भी अपनी माँ के गले लगने को बोला गया, तो वह असहज हो गया। और बृंदा भी सकुचा गई तो रवीश बोले, "अरे छोड़ों ये सब, सजा-सँवरा खड़ा है। गले लगेगा तो सूट खराब हो जाएगा।" यह सुनकर बेटे को गले लगाने को उत्सुक बृंदा ठिठक गई। आसपास खड़े लोगों की उपहास भरी नजरें नजरअंदाज करते हुए मुसकरा पड़ीं। उसका मन आज बौड़म, झल्ली, बेवकूफ जैसे शब्दों पर टिक नहीं पा रहा था। आज तो उमंग-उल्लास का दिन था। इकलौते बेटे की शादी के दिन वह उड़ी-उड़ी फिर रही थी, तभी तो उसका ध्यान फूलकर कुप्पा हो गए पाँवों पर नहीं जा रहा है।

"क्या सोच रहे हो, भई जल्दी करो, अपनी माँ का आशीर्वाद लो।" बृंदा की चचेरी बहन अंजना शांतनु से बोली तो वह बृंदा के पैरों की ओर झुका, बृंदा का जी किया, उसे सीने से चिपका ले, पर उसकी पोशाक और पगड़ी बिगड़ न जाए या कहीं उसके गोरे दमकते चेहरे पर उसकी छाप न लग जाए, इस भय से वह हिम्मत न कर पाई।

सुपरिचित लेखिका। अब तक तीन सौ पचास से अधिक सामाजिक कहानियाँ, बाल-कहानियाँ और लघुकथाएँ राष्ट्रीय व साहित्यिक पत्रिकाओं एवं समाचार-पत्रों में प्रकाशित। 'त्रिसुगंधि' साहित्यिक संस्था द्वारा 'साहित्य श्री' सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

तभी अंजना ने शांतनु के पिता की ओर देखते हुए धीमे से कहा, "अरे जीजाजी, क्या बृंदा दीदी अकेली रहेगी। बरात में वह भी चलती तो।" यह सुनकर रवीश हँसकर बोले, "हुलिया देख रही हो अपनी दीदी का, आज बेटे की शादी में भी ऐसी दाग-धब्बों भरी साड़ी पहनी है। वैसे अच्छा ही है, हम इन्हें बनारसी साड़ी पहना भी देते तो काम के चलते उसका भी सत्यानास कर देती। अब बहू के आने से पहले जरा ढंग से तैयार हो जाना।"

"अरे, ले चलो न जीजाजी। फटाफट तैयार करवा देती हूँ।" अंजना ने इसरार किया तो रवीश झल्लाकर बोले, "वहाँ बरात के साथ जाकर ये क्या करेगी। वहाँ बेटे की ससुराल में कोई बौड़मपना दिखा दिया तो हम कहे बिना रह नहीं पाएँगे, फिर आप सब हमें ही दोष देंगे। अरे, चल बेटा, तू क्या सोच रहा है। गाड़ी में बैठ।" पिता की बात खत्म होने से पहले ही शांतनु फूलों से सजी गाड़ी की ओर बढ़ गया। रवीश भी बहन रमोला के साथ गाड़ी की ओर बढ़े, शांतनु के बगल में रमोला और रवीश आगे की सीट में बैठे। बरात वाली गाड़ियाँ एक-एक करके निकल गईं।

बरात को बिदा होते देख बृंदा के मन में एक कसक सी उठी। काश, उसकी तरफ से शांतनु ही बोल देता कि शादी में माँ की उपस्थिति अपरिहार्य है, पर अगले ही पल मन की कसक निकाल फेंकी।

शांतनु वैसे भी कहाँ ज्यादा बोलता है, उसका संकोची बेटा अकसर तटस्थ रहता है। बेटे होते ही ऐसे हैं।

वह सहसा मुसकराती हुई बुदबुदाई, "सही भी तो है, शादी की तैयारियों में वह ऐसी डूबी कि कपड़े-लत्ते बदलने का होश ही नहीं रहा। दिन के प्रत्येक पहर में चलने वाले रीति-रिवाज और रस्मों की तैयारियों में इधर-से-उधर भागती ही रही। रह-रहकर बृंदा-बृंदा की गुहार हर तरफ

से आई, यह तो सौभाग्य है, मेरे बेटे की शादी का सौभाग्य। बेटे की शादी में माँ काम न करेगी तो कौन काम करेगा। बरात बिदा हो गई। कल बहू भी आ जाएगी, जो मैं बरात के लिए चल पड़ती, तो बहू के स्वागत की तैयारी कौन करता?"

"अरे तुम अकेले क्या बड़बड़ा रही हो बहुरिया।" सहसा घर की पुरानी नौकरानी धनिया ने टोका तो वह हँसकर सर हिलाते हुए बोली, "सास बनने वाली हूँ न, तो मारे खुशी के बौराई जा रही हूँ।" धनिया चिंतित सी बोली, "बहुरिया, नई बहू के आने पर भी तुम ऐसे ही डाँटी जाओगी। काहे नहीं थोड़ा बन-ठनकर रहती हो। शादी का घर है, पर देखो, कैसी सादा सूती साड़ी पहने टहल रही हो?"

धरा-उठाई में जुटी बृंदा जोर से बोली, "तो क्या करती धनिया काकी, जो पहन-ओढ़ लेती तो घर भर का काज कौन देखता?"

बृंदा की बात सुनकर धनिया काकी मुँह बिसूरती हुई बोली, "अरे जाओ बहुरिया, ऐसा भी क्या काज की चिंता कि जरा सा भी बनाव-सिंगार पर भी ध्यान न धरा। भगवान् ने जो रंग रूप दिया, सो दिया, कम से कम-पहने-ओढ़े रहती तो किसी की आँखों की किरकरी तो न बनती। आज भी भैया पचास लोगों के बीच तुम्हारी उतार गए।"

सरल-सहज काकी सहजता से कटु सत्य कह गई, पर उसे बुरा नहीं लगा। आज तो बिल्कुल ही नहीं। आज उसके बेटे का ब्याह जो है। वह मुसकरा पड़ी, अपने रूप-रंग पर ऐसी टिप्पणियाँ, वह अकसर सुनती है। शांतनु की सगाई के दिन हीरमोला जीजी शांतनु की होने वाली पत्नी के सामने ही कह बैठी थीं, "वाह शांतनु! तुम्हारी पसंद की दाद देनी पड़ेगी। भई लड़की सुंदर है। इतनी सुंदर लड़की तो हम भी न ढूँढ़ पाते। चलो, कम-से-कम पीढ़ी तो बदलेगी।"

इतने पर भी जीजी चुप न रहीं, उसे सुनाते हुए धीरे से बोली, "शांतनु ने पिता का रूप पाया है, जो अपनी माँ को पड़ जाता तो···"

'तो' जैसी संभावना की कल्पना पर ही हँसी के छींटे बिखर गए। वह सकपका गई थी। शांतनु तो सुनता ही रहता था, ऐसी बातें जो कहीं बहू ने सुन लिया हो तो। उस दिन उसकी सूखी आँखें और सूख गईं।

रूप-रंग पर हुए कटाक्ष सदा ही उसके हृदय को बींधते रहे हैं। अकसर दर्पण निहारते वह सोचती, जो उसकी माँ के पास पुश्तैनी मकान जमीन-जायदाद न होती तो उसका क्या होता। बिन ब्याही रह जाती तो काँटों से उगे रिश्तों के बीच गुलाब से शांतनु को कैसे सहलाती? शांतनु को कैसे पाती? कौन अपनी तोतली भाषा में पूछता, "माँ, परी क्या होती है।" और वह पुचकारकर किससे कहती, "न रे लल्ला, ये परी-वरी कुछ नहीं होती। परी सा सुंदर होना, मतलब बहुत सुंदर···"

"तुम झूठी हो, एक तरफ कहती हो परी जैसा सुंदर, फिर बोलती हो परी होती ही नहीं है···परी होती है माँ। उसके पास एक जादू की छड़ी होती है। मुझे मिलेगी तो मैं तुम्हें शीतल आंटी जैसा सुंदर बना दूँगा।" उसकी बात पर वह कटकर रह जाती। आँखों से आँसू गिरने को आतुर हो जाते। वह उसे सीने से लगाकर रुलाई जब्त करती तो नन्हा शांतनु सहम जाता। उसे लगता माँ 'झूठी' शब्द से आहत हो गई है। उस वक्त शांतनु कुछ देर के लिए चुप हो जाता, पर परी के अस्तित्त्व पर उसका विश्वास न डगमगाता। रमोला बुआ, पापा, दादी सब शीतल आंटी को परी मानते हैं। बस एक उसकी माँ ही कहती है कि परी नहीं होती है।

"बहुरिया, यह लो आरती की थाली।···" धनिया के स्वर ने उसे मानो तंद्रा से खींचा। "आरती के थाली में हल्दी-कुंकुम के साथ अक्षत और दीया रख दिया है। कुछ और रखना है, ध्यान कर लो।" धनिया का 'देख लो' की चेतावनी वह ताड़ गई, जो तैयारी में कहीं कोई कमी रह गई तो नई बहू के सामने बौड़म-बेवकूफ जैसी उपाधियों से नवाजी जाएगी।

वह खुद भी आने वाले दिनों में सँभलकर रहना चाहती थी, इसीलिए बड़े ध्यान और होश के साथ अपनी तैयारी का अवलोकन करने लगी। मिठाई हाँ, मिठाई रह गई। मीठे में क्या रखूँ? सब वर-वधू को मिठाई खिलाएँगे तो मीठा उनकी पसंद का होना चाहिए। वह मिठाई के डिब्बे में लगी रंग-बिरंगी मिठाइयाँ देखकर फिर अतीत में खो गई···

"मम्मी, परी खाने को अच्छा-अच्छा देती है न!" शांतनु शीरा की कटोरी को उँगलियों से चाटते कहता और वो समझाती, "न बेटा, ये सब कहानियाँ हैं। वास्तव में परी नहीं होती है, परी काल्पनिक है।" बृंदा उसे महापुरुषों की कहानियाँ सुनाती, पर उसे तो दादी-रमोला बुआ द्वारा सुनाई परियों का तिलिस्म लुभाता।

बृंदा के मुख पर कोमल स्नेहसिक्त हँसी आई। नन्हा शांतनु अब बड़ा हो गया है। परियों को खोजने वाला बेटा कल सचमुच परी लेकर आएगा। उसके हाथ तेजी से धरा-उठाई में लग गए।

"भाभी तुम थोड़ा सो लो।" धनिया काकी कह रही थी, पर वह उन्हें कैसे समझाए कि आज तो नींद कोंसो दूर है। उसका बेटा दूल्हा बना क्या कर रहा होगा, शायद जयमाल का समय हो···। उसकी बहू कैसी लग रही होगी, गुलाबी जोड़ा होगा या फिर लाल जोड़े में सजी होगी। कितनी सुंदर दिखती होगी!

शांतनु बचपन में जितना मुखर था, बड़ा होते-होते उतना ही अंतर्मुखी हो गया। सुना है, उसकी दुलहन बड़ी मुखर है। रूप की धनी तो है ही, उसका संकोची बेटा अपनी परी जैसी सुंदर दुलहन को सबके बीच चोरी-चोरी देखता होगा!

"माँ, तुम ब्यूटी पार्लर जाया करो। सुनते हैं, पार्लर जाने से लोग सुंदर होते है।" उसे शांतनु का बचपन फिर याद आया, साथ ही याद आए अपने पति के व्यंग्य बाण, "तुम्हारी मम्मी को कोई पार्लर सुंदर नहीं बना पाएगा··· कोयले को जितना भी घिसो, संगमरमर थोड़े हो जाएगा··· जैसी है वैसी रहने दे···पार्लर की जिद छोड़ दे।" रवीश हँसते और उनका कहा खंजर बनकर सीने में जा धँसता और देर तक रिसता, पर जवाब देने का न उसे साहस होता, न समय। घर की जिम्मेदारियाँ उसे कुछ सोचने की फुरसत ही कहाँ देतीं।

शांतनु की रमोला बुआ यदा-कदा आती तो शुरू होती उसकी फैंटेसी···जिसमें परियाँ बढ़िया-बढ़िया खाने को देतीं, पहनने को देतीं··· वह कहानियों में उन परियों के साथ सुंदर नगरी की सैर करता। वह कल्पना के परों पर बैठकर कभी जादू की छड़ी घुमाता, तो कभी परी सर हिलाकर उसके सामने सब हाजिर करती। शांतनु की इस फैंटेसी को हमेशा उसने तहस-नहस किया है, यह कहकर कि 'परी नहीं होती है।'

फिर समय आया, जब लाख छिपाने के बावजूद कुछ दबी-ढकी बातें शांतनु के सामने आईं। उसे पता चला कि उसके पापा परी से रोजाना रूबरू होते हैं। उसके साथ समय बिताते हैं। कभी-कभार तो एक-दो रातें भी। वो परी शायद शीला आंटी है, फिर कुछ और परियों के नाम भी सामने आए, वह शर्मिंदा हुई, पर रवीश नहीं··· उसका रंग-रूप रवीश की अय्याशी का लाइसेंस था।

लब्बो-लुआब यह कि शांतनु समझने लगा था कि जब पापा परी के पास होते तो उसकी मम्मी क्यों छिप-छिपकर रोती हैं! आखिरकार बचपन जाते-जाते उसे सिखा गया कि वाकई परी नहीं होती···। तभी शायद वह जरूरत से ज्यादा गंभीर हो गया। अपने काम-से-काम रखने वाला शांतनु सदा शांत रहा। यह सही है कि वह कभी अपने माँ के पक्ष में नहीं बोला, पर यह भी सच है कि उसने अपने पापा-बुआ-दादी की तरह असंवेदनशील बनकर उसके रूप-रंग को निशाना नहीं बनाया। यह बात क्या कम राहत की थी।

"भाभी, अभी क्या हो रहा होगा? बरात का नाच-गाना खत्म हो गया होगा। कहो, खाना-पीना चल रहा हो। ब्याह का मुहूर्त हो गया है, अब तो दूल्हा-दुलहन मंडप के नीचे आ गए होगें क्यों··· ?" धनिया काकी का कौतूहल बृंदा को फिर से वर्तमान में खींच लाया और वह मुसकराती हुई कल्पना में ही मंडप के नीचे बेटे-बहू को फेरे लेते तो कभी कोहबर में हँसी-ठिठोली के बीच देखती, कब झपकियाँ लेने लगी, पता ही नहीं चला। और तभी रमोला जीजी का फोन आया, "वाह जी वाह! तुम वहाँ मजे से सो रही हो और हम यहाँ जागकर सब सँभाल रहे हैं। यहाँ तुम्हारे लाडले ने एक नई जिद शुरू की है। कहता है, नई बहू सीधा घर जाएगी, उसके बाद गेस्ट हाउस आएगी। सो मेहमान गेस्ट हाउस में जाएँगे। मैं, अंजना और रवीश भैया, शांतनु और बहू को लेकर आएँगे। घर पर कुछ देर रुककर गेस्ट हाउस जाएँगे।"

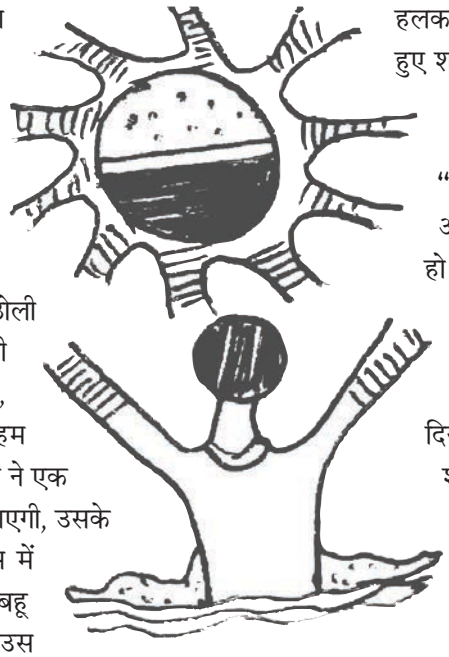

यह सुनकर बृंदा हड़बड़ाकर बोली, "पर जीजी अब घर कैसे··· ?"

"पर-वर छोडो, एक गाड़ी भेजी है, उसी में बैठकर घर जाओ और सब तैयारी करो। हम घंटे-डेढ़ घंटे में पहुँचेंगे।"

बदन में पोर-पोर दर्द होने के बावजूद उसने किसी तरह दौड़-दौड़कर आरती की थाली, न्योछावर, मंगल कलश कार में रखवाया। घर पहुँची तो अस्त-व्यस्त बिखरा घर समेटा। बैठक से लेकर बेडरूम तक जितना हो सका सँवारा।

सारी व्यवस्था सँभालने के बाद चौड़े से मिट्टी के पात्र में गुलाब की पँखुड़ियाँ डालकर, उसमें जल भरा, फिर द्वार पर रख दीये लगाए।

'आते ही होंगे··· सब आते ही होंगे' इस मंत्र को बुदबुदाती वह घूम-घूमकर देख रही थी कि कहीं कुछ रह तो नहीं गया।

पूजा की थाली पर नजर डाली और फिर जल्दी से रसोई में गई और शीरा बनाया। देशी घी की महक पूरे घर में फैल गई थी। मिठाई के डिब्बे तो हड़बड़ी में गेस्टहाउस में ही छूट गए, सो नई बहू का मुँह मीठा कराने के लिए शीरा ही जल्दी में बन सकता था। शीरा शांतनु को पसंद भी बहुत था। गाड़ी के रुकने की आवाज आई। हँसी और चुहल के बीच रमोला जीजी नवदंपती को बाहर रुकने की हिदायत देकर भीतर आई तो देखा, मुड़ी-तुड़ी, अस्त-व्यस्त साड़ी में खड़ी बृंदा उनके अगले आदेश का इंतजार कर रही थी।

"चलो महारानी, बेटे-बहू की आरती तो तुम्हें ही उतारनी है।" जीजी की नजरें देखकर उसे याद आया कि घर की व्यवस्था सँभालने के चक्कर में साड़ी तो बदलना ही भूल गई। बृंदा का हुलिया देखकर रवीश की त्योरियाँ चढ़ गईं। वह आरती की थाली लिये सकुचाती आई तो सहसा चौंकी, शांतनु कह रहा था, "माही, मैंने तुमसे कहा था न कि मैं तुम्हें परी से मिलवाऊँगा, तो यह है मेरी परी, मेरी माँ!" बृंदा का जी हलक में अटक गया, जब उसने अपनी ओर इशारा करते हुए शांतनु को देखा, इतने सालों का अबोला ऐसे टूटेगा। सोचकर ही वह सिहर गई और सब स्तब्ध रह गए। कभी न बोलने वाला बेटा आज बोल रहा था, "माँ, कुआँ पूजन के समय रस्म के मुताबिक मुझे आपके गले लगना था, पर मैं गले नहीं लगा। जानती हो क्यों? ऐसा करता तो सब्र का बाँध टूट जाता।"

"यह क्या कह रहा है बावले, ये समय है क्या इन सब बातों का?" रमोला जीजी कुछ कहने को हुई, पर उसने उन्हें इशारे से चुप करा दिया। बृंदा हैरान थी, ऐसा तो उसने कभी नहीं किया। शांतनु कह रहा था, "यही तो समय है बुआ··· और हाँ माँ, तुम बचपन से मुझसे झूठ बोलती आई हो कि परी नहीं होती, जबकि तुम थीं। मेरे बोलने से पहले तुम मेरी पसंद का खाना लेकर आतीं। मेरे कपड़े धोती, प्रेस करतीं। मैं कब क्या पहनना पसंद करता हूँ, ये तुम जानती, मेरे स्कूल का होमवर्क, मेरी सारी जरूरतों पर तुम ध्यान रखतीं। ये सब तो एक परी ही कर सकती है, फिर भी तुम कहती रहीं कि परी नहीं होती।" शांतनु रवीश और रमोला पर नजर डालकर बोला, "और किसी का मैं नहीं जानता, पर मेरे लिए तो तुम परी थी। वह अलग बात है कि ये कहने में बड़ी देर कर दी।" बोलते-बोलते उसका गला भर आया और बृंदा की आँखों से आँसू झर-झर बह रहे थे। उसने होंठों पर मुसकान और आँखों में नमी लिए थे असहज माँ के हाथों को थाम लिया और तब तो और भी अजीब स्थिति हुई, जब नई बहू ने गले लगकर कहा, "मम्मीजी, आपके बारे में इनके मुँह से बहुत सुना।"

यह सुनकर मंत्रमुग्ध सा अपनी नवविवाहिता को ताकता शांतनु बोला, "थैंक्स! जो तुम मुझे हिम्मत न दिलाती तो आज भी अपनी माँ से ये सब न कह पाता।"

यह सुनकर वह शरारत से बोली, "अच्छा है, देर आए दुरुस्त आए।"

सुगबुगाहटों और विस्मयजनित भावों से बेपरवाह वह बृंदा की उठती-गिरती पलकों को देख कहे जा रही थी, "मैं तो इनसे कब से कह रही हूँ कि आपके प्रति जो भावनाएँ हैं, वे जाहिर भी कर दें, पर ये कहते थे कि हिम्मत नहीं है। मैंने कह दिया जब कहोगे, तभी गृह-प्रवेश करूँगी।" कहते हुए उसने मनमोहक अदा से शांतनु को देखा और शांतनु ने अपनी जान चुपके से अपनी दोनों पलकें झपकाकर नव विवाहिता पत्नी को कृतज्ञता ज्ञापित कर दी।

बृंदा ने अपनी बहू के माथे को चूमकर गले से लगा लिया तो वह शरारत से उसके कान में फुसफुसाई। "माँ, मेरी मम्मी कहती हैं, अपनी माँ को प्यार करने वाला लड़का पत्नी को बहुत प्यार करेगा।" उसकी शरारत पर बृंदा झेंप गई। रमोला जीजी कुछ कहती, उससे पहले ही बृंदा की बहन अंजना बोल पड़ी, "भई बधाई हो, इस घर में आज हमारी बृंदा का सास के रूप में जन्म हुआ है।"

रमोला-रवीश स्याह चेहरा लिये वक्त की नजाकत समझकर हँसी के समवेत स्वर में सहयोग करने लगे।

रमोला जीजी बोली, "चलो अब आरती करो। अब क्या सारी बातें यही होंगी।" आरती करते समय बृंदा की नजर बेटे-बहू के चेहरे से हट ही नहीं रही थीं। रमोला जीजी फिर बोली, "वैसे बृंदा, तुम हो वाकई भाग्यशाली, जो ऐसे बेटे-बहू मिले।" आरती की लौ को आँखों से लगाती हुई माही बोल पड़ी, "भाग्यशाली तो मैं हूँ बुआजी, जो ऐसी सासू माँ मिली।" कहते हुए वह सावधानीपूर्वक कलश को पाँव से गिराने लगी। बिखरे धान देखकर प्रतीत हुआ, मानो घर की लक्ष्मी बृंदा के अस्तित्व और उसकी गरिमा के साथ गृह-प्रवेश ले रही हो।

टावर ए-९, फ्लैट-१५०५, क्लासिक अपार्टमेंट्स,
जेपी विशटाउन, सेक्टर-१३४,
नोएडा-२०१३०४, गौतमबुद्धनगर (उ.प्र.)
दूरभाष : ९६७४९४०१०६

गजल

है तेरा आसमान खतरे में

• अशोक अंजुम

सुपरिचित रचनाकार। अब तक चार हास्य-व्यंग्य-संग्रह, पाँच गजल-संग्रह, 'एक नदी प्यासी' गीत-संग्रह; हास्य-व्यंग्य एवं गजल, कविता, दोहा, लघुकथा, गीत आदि विधाओं पर सत्ताईस पुस्तकें संपादित। 'राष्ट्रभाषा गौरव', 'काव्यश्री', 'साहित्यश्री' सहित दर्जनों पुरस्कार। संप्रति 'प्रयास' पत्रिका के संपादक।

: एक :

तल्ख मौसम उड़ान खतरे में
हर तरफ से है जान खतरे में

आप बहरों में आ गए साहिब
छेड़िए मत, है तान खतरे में

इस तरफ आरती को दुश्वारी
उस तरफ है अजान खतरे में

ऐसे संतों का साथ कर बैठे
खुद ही डाला ईमान खतरे में

गाँव से होके सड़क निकलेगी
पुरखों वाला मकान खतरे में

अब तो माजी की बात छोड़ो भी
आ गया वर्तमान खतरे में

ये जमीं तो बिगड़ चली मौला
है तेरा आसमान खतरे में

आप सच कह तो रहे हो 'अंजुम'
आ न जाए जुबान खतरे में

: दो :

मुझको गर तू उड़ान दे मौला
तो खुला आसमान दे मौला

जब भी बोलूँ तो फूल-से बरसें
दे तो ऐसी जुबान दे मौला

पहले दे प्यार बाँटने के लिए
फिर ये सारा जहान दे मौला

जंग जीवन की लड़ सकें हँसकर
इतनी बंदों को जान दे मौला

तू सदा सच का साथ देता है
है तेरा इम्तिहान, दे मौला

लोग जो के खड़े दोराहे पर
उनको गीता का ज्ञान दे मौला

अपनी जन्नत ये किसी को दे दे
मुझको हिंदोस्तान दे मौला

: तीन :

कैसे होते हुए गजब देखूँ
तुझको देखूँ बता कि रब देखूँ

किसको मिलता है जहाँ में सब कुछ
मेरा लालच यही कि सब देखूँ

रात-दिन मसअलों से पागल हूँ
तुझको देखूँ बता तो कब देखूँ

उस पे कब का उधार है मेरा
कब तलक ये बता अदब देखूँ

एक बस एक हाँ की खातिर मैं
हर घड़ी अब तुम्हारे लब देखूँ

जान साँसत में फँसी है अंजुम
इश्क देखूँ कि अब मजहब देखूँ

स्ट्रीट-२, चंद्र विहार कॉलोनी (नगला डालचंद)
क्वारसी बाईपास, अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९२५८७७९७४४

छत्तीसगढ़ी साहित्य में धर्म व अध्यात्म

● नम्रता पांडेय

पं. सुंदरलाल शर्मा व केयूर भूषण के साहित्य में धर्म व अध्यात्म स्पष्ट दृष्टिगोचर है। पं. सुंदरलाल शर्मा ने पौराणिक आख्यानों के पात्रों को अपने साहित्य में स्थान दिया। वे राम, कृष्ण, विष्णु पर आधारित कथा कहते हैं। वहीं केयूर भूषण ने राम, कृष्ण के साथ सत्य, सर्वधर्म समभाव, गुरु, अपरिग्रह निर्गुण ब्रह्म जैसे अनेक विषयों पर काव्य सृजन किया। दोनों महान साहित्यकार के व्यक्तित्व में अनेक समानताएँ हैं। दोनों के सृजन का कालखंड अलग-अलग है।

भारतवर्ष प्राचीन समय से अध्यात्म विधा की लीलाभूमि रहा है। प्राचीन साहित्य में रस का आधार अध्यात्म रहा है। सामान्यतया भक्ति या ईश्वर संबंधी चर्चा को अध्यात्म कहा जाता है। वास्तव में अध्यात्म एक दर्शन है, चिंतनधारा है, विधा है। भारतीय संस्कृति की परंपरागत विरासत है। अध्यात्म हमारे ऋषि, मनीषियों के चिंतन का निचोड़ है। परमात्मा की खोज, परमात्मा के अस्तित्व, जीवात्मा की कल्पना, जीवन-मरण चक्र, पुनर्जन्म की अवधारणा जैसे प्रश्नों पर विद्वानों ने अपनी-अपनी राय दी है। इन्हीं के आधार पर शास्त्रों में सूत्र, व्याख्या सिद्धांत गढ़े गए हैं। यह सारा अध्ययन ही अध्यात्म है। अध्यात्म का अर्थ स्वयं के भीतर देखना है। 'गीता' के आठवें अध्याय में अपने स्वरूप अर्थात् जीवात्मा को अध्यात्म कहा गया है।

अध्यात्म व साहित्य का अभिन्न संबंध है। कर्मयोग अध्यात्म का विषय है तथा साहित्य कर्मयोग की प्रेरणा देता है। ये दोनों मिलकर समाज को कल्याण एवं मंगलभाव की स्थापना करते हैं। वैदिक साहित्य में उपनिषद् को अध्यात्मिक ज्ञान के ग्रंथ कहा जाता है। अध्यात्म एक गहन विषय है। यह मानसिक शांति का एक माध्यम हमारे साहित्य में इस हेतु बहुत कुछ रचा गया है।

छत्तीसगढ़ी साहित्य में भारतीय संस्कृति के सभी तत्त्व विद्यमान हैं। छत्तीसगढ़ी साहित्य में भारतीय संस्कृति के सभी तत्त्व विद्यमान हैं। छत्तीसगढ़ी साहित्य में भौतिकता के साथ अध्यात्मिकता का भी समन्वय है। यहाँ के साहित्यकारों ने सगुण व निर्गुण उपासना पर बहुत कुछ लिखा है। उनके साहित्य में भी हमें श्रद्धा अध्यात्म व धर्म के दर्शन होते हैं। यहाँ के साहित्यकार ने ईश्वर प्रेम संबंधी कविता या अध्यात्मिक भाव लिये काव्यों का बखूबी सृजन किया है। पं. सुंदरलाल शर्मा एवं केयूर भूषण ने भी धर्म एवं अध्यात्म को अपने साहित्य में सादर प्रस्तुत किया है।

छत्तीसगढ़ के साहित्य व संस्कृति पर लिखने में रुचि। वर्तमान में छत्तीसगढ़ के पं. सुंदरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय से 'पं. सुंदरलाल शर्मा एवं केयूर भूषण के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोध कर रही हैं।

पं. सुंदरलाल शर्मा ने पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर छत्तीसगढ़ी दानलीला, छत्तीसगढ़ी रामायण, करुणा पचीसी, प्रलाप पदावली, कृष्णजन्म आख्यान, प्रह्लाद चरित्र आदि जैसी रचनाओं में धर्म व अध्यात्म को दिखाया। 'दानलीला' उनका प्रथम खंडकाव्य है, जिसमें कृष्ण को धीर-ललित नायक के लोकरंजक रूप में प्रस्तुत किया है। वहीं छत्तीसगढ़ी रामायण में उन्होंने छत्तीसगढ़ी में रामकथा को रचकर जन-जन तक पहुँचाया। इसके रचना का उद्देश्य नैतिकता का प्रसार-प्रचार करना था। 'ध्रुव चरित्र' आख्यान शर्माजी द्वारा कीर्तन शैली में रचित काव्य-संग्रह है। इसमें गेय शैली में कवि ने ईश्वर के प्रति अपनी आस्था को दरशाया है। यहाँ अध्यात्म की गहरी छाँव है—

जगत् को सब तुच्छ पद छन भरहिं पुत्र लखाय।
एक अविचल मोक्ष पद याँचत जिन्हे मुनिराय॥
करहु सो सुत सफल जीवन जिकुल तारहु घाय।

(युगप्रवर्तक सुंदरलाल शर्मा पृ. २८३)

सुनीति ने अपने पुत्र को जो शिक्षा दी थी, उसे कवि ने इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है—

कैसे पाऊँ रामजीवन धन,
कितको जाऊँ कौन बतावै

ईश्वर के प्रति प्रेम अध्यात्मिकता से पूर्ण रचना करुणा पचीसी है,

इसमें २५ कविताएँ हैं, जिनमें शर्माजी लिखते हैं—

चीकने शिखर पर निचट अकेला जहाँ
बाप पूत भाई-भाई कोऊ नही मेर साथ
सुंदर सुकवि एक आसरी तिहारो तहाँ
दया करि कैसे नही परसन मेरे साथ।

(युग प्रवर्तक पृ. २९७)

प्रलाप पदावली भजन-संग्रह है, इसमें आरंभ से लेकर अंत तक सुंदरलाल शर्मा ने अपने काव्य में ईश्वर के प्रति प्रेम को उजागर किया है—

रे मन काहे बिलम लगावै
मास-मास, दिन-दिन, पल-पल
यह आयुस छीजत जावै।

वहीं वे अपने काव्य के जरिए अपनी अध्यात्मिक खोज का बखान किया है। अखंड ब्रह्म को खोजना असंभव है, वे लिखते हैं—

ऐसे नहि न हवे तुम आगे
ज्हँ तक बुद्धि गई हमारी
हम खोजि खोजि थक लगे।।

पं. सुंदरलाल शर्मा ने अपने काव्य में अध्यात्म व दर्शन को शामिल करते हुए लिखा है कि मन वेगवान है और सहज काबू में नहीं आता—

मन रे तोका काह परी है
जो करिहै भरिहै अपने को बांटोदार न कोई
क्यों बूड़त गहरो पानी में, का बिगड़त तेरो
कोटिन जीव प्रकृति कोटिन तब कृत भी न्यारे

जीवन-दर्शन से संबंधित अनेक पद व गीत शर्माजी ने रचे हैं। इन गीतों के जरिए उन्होंने मनुष्य को ईश्वर की ओर खींचा है—

जगत् में जड़ रे जनमों यहीं
कहत जो कवि है सुनिये कभी
कर हुए तब ही कछु पाइहौ
नतरू नाहक जन्म गँवाइ हौ।

छत्तीसगढ़ी अंचल के दूसरे चर्चित साहित्यकार ने भी अपने काव्य में अध्यात्मिक उपासना की गंगा बहाई है। उन्होंने अपने कहानी, उपन्यास, निबंध, काव्य सभी में ईश्वर व अध्यात्मिकता को प्रकट किया है। उनका अंतर्मन अध्यात्मिकता से ओत-प्रोत है इसका आभास उनके द्वारा रचित भजन, दोहे व कविताओं को पढ़ने से होता है। अपने पदों में केयूर भूषण ने ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम व भक्ति को दरशाया है। गांधीवादी-चिंतक व विनोबा भावे के अनुयायी केयूर भूषण के मन में ऐसे भावों का आना स्वाभाविक है। केयूर भूषणजी कहते हैं—"मनुष्य चिंतनशील प्राणी है, कुछ न कुछ सोचता रहता है। उसका चिंतन होता है—जीवन की अनुभूतियाँ, महत्त्वाकांक्षी कल्पना, आंतरिक पीड़ा या खुशियाँ।"

इसी के अंतर्गत एक ऐसी क्षीण धारा भी प्रवाहित होती रहती है जो अपनी उपस्थिति का एहसास तो देती है, पर समझ नहीं आती, वह कहाँ से प्रवाहित हो रही है। वहीं उसके धीरज बाँधती, उल्लासित करती, मार्ग दिखाती है। इसी अज्ञात सभा के प्रति अपना लगाव दिखाते हुए वे लिखते हैं—

धरो ध्यान उनके
करो काम उनका
मालिक वही है
उसी का रहो

वही परम सत्ता के प्रति अपने प्रेम को दरशाते हुए वे लिखते हैं—

कैसे धीर धरू मैं सजनी
श्याम दरस बिन मानत नाहिं

अनंत-अगोचर के प्रति अपने भावों को उन्होंने सहज रूप से दरशाया है। अज्ञात सत्ता को पाने की अपनी इच्छा को दरशाया है। केयूर भूषणजी परम पिता से गुहार लगाते हैं—

प्रभु मुझको अपना लो
चरणों का दास बना लो

ईश्वर-प्राप्ति के लिए भक्त का अहंकार रहित होना अत्यंत आवश्यक है। वे भी कबीर की तरह मानते हैं कि मन में 'अहंकार' या 'हरि' कोई एक ही रह सकता है—

अहंकार तु छोड़ रे मानव
कर ले निर्मल मन को

केयूर भूषण मानते हैं कि इस संसार रूपी सागर को पार करने के लिए गुरु को होना अत्यंत आवश्यक है। केयूर भूषण ने अपने गुरु 'श्री पाद' बाबा को समर्पित करते हुए लिखा है—

गुरु बिन ज्ञान न पाए कोई
गुरु तो हमें बनाना ही होगा

वहीं वे प्रकृति व जीव-जंतुओं के गुणों को भी अपनाते हैं—

कागा से चेतनता ले ली
वृक्षों से ली नरमाई
स्वान ने दी स्वामि-भक्ति
सूरज ने दी सेवकाई

वही वे गुरु से याचना करते हैं—

गुरुदेव मुझे अपना लो,
चरणों का दास बना लो
मैं भटका हुआ एक राही हूँ
मुझे सीधी राह दिखा दो।

सर्वधर्म समभाव को मानने वाले केयूर भूषण का यह कहना कि धर्म का आचरण से गहरा संबंध है, उन्होंने संसार के समस्त सजीवों का समान मानते हुए प्राणिमात्र के प्रति दया रखने की सीख दी है—

दया कर दया मन में ला
जीवों को तू मत सता
जीव सताने से रोती है आत्मा
आत्मा के दुःख से दुखी होता है परमात्मा

इन पंक्तियों में अहिंसा, दया क्षमा जैसे गुणें को अपनाने की सीख

दी गई है। वही दूसरों के कष्ट निवारण में सुख को स्वीकारते हुए दूसरों के कष्टों को हरने से जो मन में करुणा की धारा बहती है, तब ईश्वर मिलते हैं। ईश्वर के प्रति आस्था के दो रूप है। कोई उन्हें साकार रूपों में स्वीकारता है और राम, कृष्ण जैसे रूपों की आराधना करता है। केयूर भूषण ने लिखा है—

भज ले रे मन राम-राम
राम के भजन में नही लगे दाम

यहाँ 'राम' के लिए की गई प्रार्थना है। वही कृष्ण के प्रति आस्था दिखाते हुए वे कहते हैं—

तेरे सिवा कौन मेरा
कृष्ण कन्हैया
नाव मेरी टूटी
नदिया है गहरी
तैरना मुझ आए नहीं।

ईश्वर सदा से सत्य में ही है। वेद-पुराणों में कहा गया है कि सत्य के समान कोई धर्म नहीं है। वही महात्मा गांधी ने कहाँ सत्य से अलग कोई ईश्वर नहीं है। उन्होंने तो अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के प्रयोग' रखा है। केयूर भूषण ने भी सत्य के प्रति अनुराग अभिव्यक्त किया है। वे अपने काव्य में सत्य को अपने आचरण में लाने के लिए प्रेरणा देते हुए कहते हैं—

सत्य को जब करो आचार
सत्य को लाओ व्यवहार
तब सत्य बन जाता है
स्वयं हथियार
बुराई पर करने प्रहार

वहीं सत्य की कठिन डगर पर चलना तलवार की धार पर चलना है, इस बात को जानते हुए भी केयूर भूषण सत्य के प्रति आग्रह करते हैं—

सत्य का आग्रह रखो
सत्य को जीवन में गहो
सत्य तलवार की धार से बढ़कर तो
अत्याचार मिटाने का यही एक कारगर हथियार

केयूर भूषण ने जहाँ एक ओर राम, कृष्ण की आराधना की है, वहीं वे निर्गुण ब्रह्म को भी स्वीकारते हैं। वे कर्मकांड, तीर्थ, गंगास्नान आदि के स्थान पर मन की निर्मलता को स्वीकारते हैं—

निर्मल मन में करता है वह बसेरा
साफ सुथरी जगह पर बनाता है डेरा

वहीं वे यह भी कहते हैं—

मन मंदिर है
मन का पवित्र रख
व्यवहार पवित्र बन जाएगा।
पवित्र व्यवहार से पवित्र आचरण होगा
जीवन पवित्र बन जाएगा।

केयूर भूषण की अपने परम पिता पर अगाध श्रद्धा है। वे आश्वस्त हैं कि जब तक ईश्वर का साथ है तब तक डरने की कोई बात नहीं—

आँधियारे में भटके दुनिया
दीप न जिसके पास रे!
संग चल रहा मालिक तेरा
फिर क्यों तू है उदास रे!

आज जब देश के कोने-कोने में सांप्रदायिकता की ज्वाला धधक रही है। तब केयूर भूषण का सर्वधर्म समभाव से भरी कविता शीतलता से भरी लगती है—

कौन कहता है
राम रहीम एक नहीं दो हैं
अरे पगले
उस एक प्रभु के दो नाम हैं

पं. सुंदरलाल शर्मा एव केयूर भूषण छत्तीसगढ़ी साहित्य के दो गांधीवादी साहित्यकार हैं। इन दोनों के व्यक्तित्व में अनेक समानताएँ हैं। शर्माजी का कार्यकाल जहाँ आजादी के पहले का है। वहीं केयूर भूषणजी की समयावधि स्वतंत्रता के बाद की है। इन दोनों महान् विभूतियों ने स्वतंत्रता संग्राम, साहित्य, समाज-सुधार, पत्रकारिता में अपना योगदान दिया है। महात्मा गांधी के सिद्धांतों सत्य, सादगी, अहिंसा, अपरिग्रह को इन दोनों ने अपने आचरण में उतारा। इन विभूतियों की धर्म और अध्यात्म में गहरी रुचि थी। दोनों ने ही अपने साहित्य में धर्म व अध्यात्म के प्रति अपने लगाव को प्रस्तुत किया है। पं. सुंदरलाल शर्मा उत्तर भारतेंदु युग के कवि थे। उस युग में संस्कृति, पुराण पर लोग रचना कर रहे थे। देशभक्त राष्ट्रीयता, समाज सुधार जैसे विषयों पर सृजन हो रहा था। शर्माजी महान् चिंतक व विचारक थे। वही वे दार्शनिक थे, जिन्होंने अध्यात्म व धर्म को अपने साहित्य में गौरव के साथ प्रस्तुत किया। केयूर भूषणजी एक सरल, सहज, सादगी पसंद व्यक्तित्व थे। जो सदैव आम जन से जुड़े रहे और उनकी यही सहजता सरलता उनके साहित्य में भी दृष्टिगोचर है। केयूर भूषण ने जहाँ राम, कृष्ण पर काव्य रचा है, वहीं वे सर्वधर्म समभाव का संदेश देते हुए भी उन्होंने कविता लिखी है। कहीं वे निर्गुण, ब्रह्म की आराधना करते दिखाई देते हैं। केयूर भूषण ने धर्म व अध्यात्म में व्यापकता है। वे सभी धर्मों के अच्छी बातों को ग्रहण करना चाहते हैं। इस प्रकार हम इन दोनों महान साहित्यकारों के साहित्य में काव्य में धर्म, अध्यात्म के दर्शन होते हैं। अपने मन की पीड़ा को ईश्वर से मिलन की कामना की, उन्होंने अपने काव्य में सटीक अभिव्यक्ति दी है।

सा.अ.
सहायक प्रोफेसर
अवंतीबाई लोधी राजकीय कॉलेज परपोडी
जिला-बेमेतरा (छ.ग.)
दूरभाष : ९९८१४९२४००

उसकी पहली उड़ान

मूल : **लायम ओ' फ्लैहर्टी**

अनुवाद : **सुशांत सुप्रिय**

समुद्री चिड़िया का बड़ा हो चुका बच्चा पत्थर के उठे हुए किनारे पर अकेला था। उसकी बहन और उसके दो भाई कल ही उड़कर जा चुके थे। वह डर जाने की वजह से उनके साथ नहीं उड़ पाया था। जब वह पत्थर के उठे हुए किनारे की ओर दौड़ा था और उसने अपने पंखों को फड़फड़ाने का प्रयास किया था, तब पता नहीं क्यों वह डर गया था। नीचे समुद्र का अनंत विस्तार था और उठे हुए पत्थर के कगार से नीचे की गहराई मीलों की थी। उसे ऐसा पक्का लगा था कि उसके पंख उसे नहीं सँभाल पाएँगे, इसलिए अपना सिर झुकाकर वह वापस पीछे उठे हुए पत्थर के नीचे मौजूद उस जगह की ओर भाग गया था, जहाँ वह रात में सोया करता था। जबकि उससे छोटे पंखों वाली उसकी बहन और उसके दोनों भाई कगार पर जाकर अपने पंख फड़फड़ाकर हवा में उड़ गए थे, वह उस किनारे के बाद की गहराई से डर गया था और वहाँ से कूदकर उड़ने की हिम्मत नहीं जुटा पाया था। इतनी ऊँचाई से कूदने का विचार ही उसे हताश कर दे रहा था। उसकी माँ और उसके पिता तीखे स्वर में उसे डाँट रहे थे। वे तो उसे धमकी भी दे रहे थे कि यदि उसने जल्दी उड़ान नहीं भरी तो पत्थर के उस उठे हुए किनारे पर उसे अकेले भूखा रहना पड़ेगा। लेकिन बेहद डर जाने की वजह से वह अब हिल भी नहीं पा रहा था।

यह सब चौबीस घंटे पहले की बात थी। तब से अब तक उसके पास कोई नहीं आया था। कल उसने अपने माता-पिता को पूरे दिन अपने भाई-बहनों के साथ उड़ते हुए देखा था। वे दोनों उसके भाई-बहनों को उड़ान की कला में माहिर बनने और लहरों को छूते हुए उड़ने का प्रशिक्षण दे रहे थे। साथ ही वे उन्हें पानी के अंदर मछलियों का शिकार करने के लिए गोता लगाने की कला में पारंगत होना भी सिखा रहे थे। दरअसल उसने अपने बड़े भाई को चट्टान पर बैठकर अपनी पहली पकड़ी हुई मछली खाते हुए भी देखा था, जबकि उसके माता-पिता उसके बड़े भाई के चारो ओर उड़ते हुए गर्व से शोर मचा रहे थे। सारी सुबह समुद्री चिड़िया का पूरा परिवार उस बड़े पठार के ऊपर हवाई-गश्त लगाता रहा था। पत्थर के दूसरे उठे हुए किनारे पर पहुँचकर उन सब ने उसकी बुजदिली पर उसे बहुत ताने मारे थे।

सुपरिचित लेखक। हिंदी के प्रतिष्ठित कथाकार, कवि तथा साहित्यिक अनुवादक। सात कथा-संग्रह, तीन काव्य-संग्रह तथा विश्व की अनूदित कहानियों के छह संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

सूरज अब आसमान में ऊपर चढ़ रहा था। दक्षिण की ओर उठे हुए पत्थर के नीचे मौजूद उसकी बैठने की जगह पर भी तेज धूप पड़ने लगी थी। चूँकि उसे पिछली रात के बाद से खाने के लिए कुछ नहीं मिला था, धूप की गरमी उसे विचलित करने लगी। पिछली रात उसे कगार के पास मछली की पूँछ का एक सूखा टुकड़ा पड़ा हुआ मिल गया था। किंतु अब खाने का कोई कतरा उसके आस-पास नहीं था। उसने चारो ओर ध्यान से देख लिया था। यहाँ तक कि अब गंदगी में लिपटे, घास के सूखे तिनकों से बने उस घोंसले के आस-पास भी कुछ नहीं था, जहाँ उसका और उसके भाई-बहनों का जन्म हुआ था। भूख से व्याकुल हो कर उसने अंडे के टूटे पड़े सूखे छिलकों को भी चबाया था। यह अपने ही एक हिस्से को खाने जैसा था। परेशान होकर वह उस छोटी सी जगह में लगातार चहलकदमी करता रहा था। बिना उड़ान भरे वह अपने माता-पिता तक कैसे पहुँच सकता है, इस प्रश्न पर वह लगातार विचार कर रहा था, किंतु उसे कोई राह नहीं सूझी। उसके दोनों ओर कगार के बाद मीलों लंबी गहराई थी, और बहुत नीचे गहरा समुद्र था। उसके और उसके माता-पिता के बीच में एक गहरी, चौड़ी खाई थी। यदि वह कगार से उत्तर की ओर चलकर जा पाता, तो वह अपने माता-पिता तक पहुँच सकता था। लेकिन वह चलता किस पर? वहाँ तो पत्थर थे ही नहीं, केवल गहरी खाई थी! और उसे उड़ना आता ही नहीं था। अपने ऊपर भी वह कुछ नहीं देख पा रहा

था, क्योंकि उसके ऊपर की चट्टान आगे की ओर निकली हुई थी, जिसने दृश्य को ढक लिया था। और पत्थर के उठे हुए किनारे के नीचे तो अनंत गहराई थी ही, जहाँ बहुत नीचे था—हहराता समुद्र।

वह आगे बढ़कर कगार तक पहुँचा। अपनी दूसरी टाँग पंखों में छिपाकर वह किनारे पर एक टाँग पर खड़ा हो गया। फिर उसने एक-एक करके अपनी दोनों आँखें भी बंद कर लीं और नींद आने का बहाना करने लगा। लेकिन इस सब के बावजूद उसके माता-पिता और भाई-बहनों ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उसने अपने दोनों भाइयों और बहन को पठार पर अपना सिर अपने पंखों में धँसाकर ऊँघते हुए पाया। उसके पिता अपनी सफेद पीठ पर मौजूद पंखों को सजा-सँवार रहे थे। उन सब में केवल उसकी माँ ही उसकी ओर देख रही थी। वह अपनी छाती फुला कर पठार के उठे हुए भाग पर खड़ी थी। बीच-बीच में वह अपने पैरों के पास पड़े मछली के टुकड़े की चीर-फाड़ करती, और फिर पास पड़े पत्थर पर अपनी चोंच के दोनों हिस्सों को रगड़ती। खाना देखते ही वह भूख से व्याकुल हो उठा। ओह, उसे भी मछली की इसी तरह चीर-फाड़ करने में कितना मजा आता था। अपनी चोंच को धारदार बनाने के लिए वह भी तो रह-रहकर उसे पत्थर पर घिसता था। उसने एक धीमी आवाज की। उसकी माँ ने उसकी आवाज का उत्तर दिया, और उसकी ओर देखा। उसने "ओ माँ, थोड़ा खाना मुझ भूखे को भी दे दो" की गुहार लगाई।

लेकिन उसकी माँ ने उसका मजाक उड़ाते हुए चिल्लाकर पूछा, "क्या तुम्हें उड़ना आता है?" पर वह दारुण स्वर में माँ से गुहार लगाता रहा, और एक-दो मिनट के बाद उसने खुश होकर किलकारी मारी। उसकी माँ ने मछली का एक टुकड़ा उठा लिया था और वह उड़ते हुए उसी की ओर आ रही थी। चट्टान को पैरों से थपथपाते हुए वह आतुर होकर आगे की ओर झुका, ताकि वह उड़कर उसके पास आ रही माँ की चोंच में दबी मछली के नजदीक पहुँच सके। लेकिन जैसे ही उसकी माँ उसके ठीक सामने आई, वह कगार से जरा सा दूर हवा में वहीं रुक गई। उसके पंखों ने फड़फड़ाना बंद कर दिया और उसकी टाँगें बेजान होकर हवा में झूलने लगीं।

अब उसकी माँ की चोंच में दबा मछली का टुकड़ा उसकी चोंच से बस जरा सा दूर रह गया था। वह हैरान होकर एक पल के लिए रुका—आखिर माँ उसके और करीब क्यों नहीं आ रही है? फिर भूख से व्याकुल होकर उसने माँ की चोंच में दबी मछली की ओर छलाँग लगा दी।

एक जोर की चीख के साथ वह तेजी से हवा में आगे और नीचे की ओर गिरने लगा। उसकी माँ ऊपर की ओर उड़ गई। हवा में अपनी माँ के नीचे से गुजरते हुए उसने माँ के पंखों के फड़फड़ाने की आवाज सुनी। तभी एक दानवी भय ने जैसे उसे जकड़ लिया, और उसके हृदय ने जैसे धड़कना बंद कर दिया। उसे कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। पर यह सारा अहसास केवल पल भर के लिए हुआ। अगले ही पल उसने अपने पंखों का बाहर की ओर फैलना महसूस किया। तेज हवा उसकी छाती, पेट और पंखों से टकरा कर गुजरने लगी। उसके पंखों के किनारे जैसे हवा को चीर रहे थे। अब वह सिर के बल नीचे नहीं गिर रहा था, बल्कि हवा में तैरते हुए धीरे-धीरे नीचे और बाहर की ओर उतर रहा था। अब वह भयभीत नहीं था। बस उसे जरा अलग सा लग रहा था। फिर उसने अपने पंखों को एक बार फड़फड़ाया और वह ऊपर की ओर उठने लगा। खुश होकर उसने जोर से किलकारी मारी और अपने पंखों को दोबारा फड़फड़ाया। वह हवा में और ऊपर उठने लगा। उसने अपनी छाती फुला ली और हवा का उससे टकराना महसूस करता रहा। खुश होकर वह गाना गाने लगा। उसकी माँ ने उसके ठीक बगल से होकर गोता लगाया। उसे हवा से टकराते माँ के पंखों की तेज आवाज अच्छी लगी। उसने फिर एक किलकारी मारी।

उसे उड़ता हुआ देख कर उसके प्रसन्न पिता भी शोर मचाते हुए उसके पास पहुँच गए। फिर उसने अपने दोनों भाइयों और अपनी बहन को खुशी से उसके चारो ओर चक्कर लगाते हुए देखा। वे सब प्रसन्न होकर हवा में तैर रहे थे, गोते लगा रहे थे और कलाबाजियाँ खा रहे थे।

यह सब देखकर वह पूरी तरह भूल गया कि उसे हमेशा से उड़ना नहीं आता था। मारे खुशी के वह भी चीखते-चिल्लाते हुए हवा में तैरने और बेतहाशा गोते लगाने लगा।

अब वह समुद्र की अथाह जल-राशि के पास पहुँच गया था, बल्कि उसके ठीक ऊपर उड़ रहा था। उसके नीचे हरे रंग के पानी वाला गहरा समुद्र था, जो अनंत तक फैला जान पड़ता था। उसे यह उड़ान मजेदार लगी और उसने अपनी चोंच टेढ़ी करके एक तीखी आवाज निकाली। उसने देखा कि उसके माता-पिता और भाई-बहन उसके सामने ही समुद्र के इस हरे फर्श-से जल पर नीचे उतर आए थे। वे सब जोर-जोर से चिल्लाकर उसे भी अपने पास बुला रहे थे। यह देखकर उसने भी अपने पैरों को समुद्र के पानी पर उतार लिया। उसके पैर पानी में डूबने लगे। यह देखकर वह डर के मारे चीखा और उसने दोबारा हवा में उड़ जाने की कोशिश की। लेकिन वह थका हुआ था और खाना न मिलने के कारण कमजोर हो चुका था। इसलिए चाह कर भी वह उड़ न सका। उसके पैर अब पूरी तरह पानी में डूब गए और फिर उसके पेट ने समुद्र के पानी का स्पर्श किया। इसके साथ ही उसकी देह का पानी में डूबना रुक गया। अब वह पानी पर तैर रहा था और उसके चारों ओर खुशी से चीखता-चिल्लाता हुआ उसका पूरा परिवार जुट आया था। वे सब उसकी प्रशंसा कर रहे थे, और अपनी चोंचों में ला-लाकर उसे खाने के लिए मछलियों के टुकड़े दे रहे थे।

उसने अपनी पहली उड़ान भर ली थी।

(सा अ)

ए-५००१, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड,
इंदिरापुरम्, गाजियाबाद-२०१०१४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ८५१२०७००८६
sushant1968@gmail.com

साझी संस्कृति की समृद्ध धरोहर : जापान

● ऋचा मिश्र

ऐसा अमूमन क्यों होता है कि कल्पना यदि मूर्तिमान होने लगती है तो चमत्कार पर विश्वास सा हो जाता है। २०१० में एक क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन में पहली बार टोक्यो और ओसाका जाने का शुभ अवसर भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा मिला। दोनों नगरों के विश्वविद्यालयों में हिंदी सम्मेलन एक साथ आयोजित किए गए, जिनमें भाग लेने वाले जापानी विद्यार्थियों की संख्या और हिंदी में उनकी प्रस्तुतियों के स्तर ने मुझे अत्यंत प्रभावित किया। उसी क्षण मैंने निर्णय लिया कि भविष्य में यदि कभी मुझे जापान में हिंदी शिक्षण का अवसर मिला, तो मैं अवश्य उसका लाभ उठाऊँगी। २०१७ में मुझे भाग्य से यह मौका मिला। टोक्यो के 'विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय' में हिंदी शिक्षिका के रूप में अपने कार्यकाल के दौरान मुझे जापान के गौरवपूर्ण इतिहास, कला, संस्कृति और जगह-जगह बिखरे हुए भारतीय सांस्कृतिक प्रतीकों के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव को समझने और देखने का मौका मिला।

भारतीय संस्कृति का पहला परिचय टोक्यो एयरपोर्ट से बाहर निकलते ही हमारे अतिथि जापानी प्रोफेसर के इस विनोदपूर्ण वाक्य से हुआ, "तो चलें लक्ष्मीनगर?" मैं आश्चर्य और हास्य मिश्रित अपनी प्रतिक्रिया को बड़ी मुश्किल से रोक पाई। 'यहाँ लक्ष्मीनगर!' इससे पहले कि मेरा वाक्य पूरा होता, वह ठहाका लगाते हुए बोले, "जी आपका जापानी घर किचीजोजी में है।" किचीजोजी जापानी में लक्ष्मीजी को कहते हैं। सुनते ही उस क्षेत्र की अनेक काल्पनिक आकृतियाँ बनने बिगड़ने लगीं। पूरा रास्ता इस सुखद अहसास के साथ निकल गया कि हम अपनों के बीच अपनापन बटोरने जा रहे हैं।

भारत और जापान के बीच शताब्दियों पुराने मैत्री संबंधों और बौद्ध धर्म, दर्शन, आचार विचार, तथा संस्कृति के पारस्परिक साझे प्रतीकों से परिचय तो पुराना था, किंतु उसमें सांस लेने और भीतर तक सराबोर होने का मौका पहली बार मिला। भारतीय संस्कृति ने वर्षों पहले तिब्बत, चीन और कोरिया के रास्ते आए बौद्धधर्म के द्वारा जापान में दस्तक दी होगी, ऐसा इतिहासवेत्ता मानते हैं। इस मार्ग से महायान शाखा का

सुपरिचित लेखिका। चार पुस्तकें तथा अनेक शोधपरक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। हिंदी में स्नातक एवं स्नातकोत्तर उपाधियाँ पाँच स्वर्ण पदक। अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलनों में भागीदारी।

प्रवेश जापान में संभवत: छठी शताब्दी में हुआ, जिसमें कुछ बौद्ध ग्रंथों तथा अन्य प्रतीकों को यहाँ लाया गया। सातवीं शताब्दी तक बौद्ध धर्म जापान में रच बस चुका था। हीयेन काल के दो जापानी बौद्ध संप्रदायों टेंडाई तथा शिन्गोन की सूचना भी मिलती है, जो काफी प्रभावशाली थे। धीरे-धीरे बौद्ध धर्म की अन्य शाखाएँ, जैसे वज्रयान और उनसे संबंधित बोधिसत्त्व के आकारों, प्रार्थना पद्धतियों, संबंधित काल्पनिक कथाओं, दैत्यों और दानवों की आकृतियों ने जापान के जनमानस में अपना स्थान बनाया और माना जाता है कि कामाकुरा काल (११ से १३वीं शताब्दी) तक आते-आते यह जापानी समाज के सभी वर्गों में लोकप्रिय हो चुका था। आज का जापान यद्यपि अत्याधुनिक विकसित सुविधा-संपन्न समाज है, लेकिन अपने गौरवशाली इतिहास की धरोहर को संजोकर रखे हुए हैं। हिंदी कक्षा के अपने विद्यार्थियों, कभी सहयोगी शिक्षकों, पड़ोसियों से अनौपचारिक चर्चा के दौरान धीरे-धीरे इस धरोहर के कई खजाने खुलते गए। ज्ञात हुआ कि महात्मा बुध की विशाल आकृतियों, ध्यान और साधना की विभिन्न अवस्थाओं, हस्त मुद्राओं, प्राचीन सिद्ध लिपि, और यहाँ तक कि हस्त निर्मित वस्तुओं की बाँधनी कला (शिबोरी) पर भी भारतीय संस्कृति की अमिट छाप दिखाई देती है, यद्यपि आज जापानी समाज की निजी विशेषताओं में रँगकर स्थानीय ही समझी जाती है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि संस्कृति के प्रतीकों का स्थानांतरण दो संस्कृतियों के संगम से नया रूपाकार ग्रहण कर ही लेता है।

इसका पहला प्रमाण हमारे निवास के पास स्थित जेनपुकुजी उद्यान में स्थित लक्ष्मी मंदिर में लक्ष्मीजी की प्रतिमा को देखकर हुआ, जिसमें

काष्ठ की सीधी-सरल देवी विराजमान थी, आभूषणों अलंकारों से रहित। नाम की साम्यता और वरदान की मुद्रा एक जैसी थी पर भारतीय स्वर्ण सुसज्जित लक्ष्मी से बिल्कुल अलग। एक विशाल तालाब के किनारे स्थित लकड़ी के मंदिर के बाहर लिखा है—"यह लक्ष्मीजी का मंदिर है।" इनके नाम पर इस क्षेत्र का नाम किचीजोजी अर्थात् लक्ष्मीजी का नगर पड़ा। ऐसे ही अन्य भारतीय देवी-देवताओं के छोटे बड़े मंदिर स्थान-स्थान पर मिलते रहे। कभी लोकप्रिय उद्यानों में कभी किसी पर्यटक स्थल के पास।

असाकुसा का प्रसिद्ध सेनसोजी मंदिर टोक्यो का एक लोकप्रिय स्थल है। वहीं पास में मात्सुचियामा शोडेन मंदिर में गणेशजी से मिलते-जुलते बड़े कानों और सूँड़ की आकृति से मेल खाती नाकवाली कुछ प्रतिमाओं को देखा। ज्ञात हुआ कि यह कान्गिटेन हैं तथा ऐसी मान्यता है कि यह विघ्नहर्ता भारतीय गणेश ही हैं। इसी प्रकार सरस्वतीजी से मेल खाती बेन्जाटेन तथा जातक कथाओं के अनेक पात्र टोक्यो और उसके आसपास के क्षेत्रों में बिखरे बौद्ध मंदिरों और पूजा स्थलों पर दिखाई दिए।

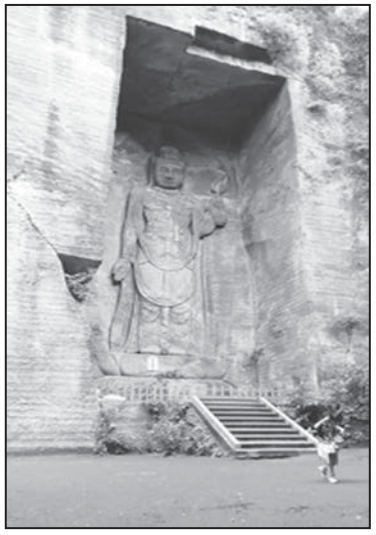

इस सब में उल्लेखनीय और प्राचीन है नोकोगिरिसान की विशालकाय बौद्ध शिलाकृति, जो लगभग १०० फीट ऊँची पहाड़ी चट्टान को तराशकर बनाई गई प्रतिमा है (चित्र १)। कक्षा में छात्रों से इसकी चर्चा सुनकर जून के महीने में इसे देखने का विचार बनाया, क्योंकि जुलाई माह से शुरू होने वाली बारिश, पहाड़ों पर जाने के लिए ठीक समय नहीं। टोक्यो से लगभग ३ घंटे का समय लगता है 'चीबा' प्रिफिक्चर पहुँचने में। एक मार्ग है जो पहले लोकल ट्रेन,जलमार्ग और उसके बाद रोप वे से नोकोगिरिसान पहाड़ी के एक भाग तक पहुँचता है, इसके बाद पैदल का रास्ता है। हमने इस रास्ते को छोड़कर गाड़ी का मार्ग अपनाया, फिर भी ऊपर चढ़ाई चढ़ने में पैदल का रास्ता काफी थकान भरा था। ऊबड़-खाबड़ रास्ता, अचानक एक सपाट चट्टान पर तिरोहित हो गया, जहाँ दाहिनी तरफ आकाश को छूती बुद्ध की विशालकाय खड़ी प्रतिमा है तथा बाई ओर घाटी। इसका विशाल आकार बामियान के बुद्ध का स्मरण दिलाता है। बड़ी-बड़ी आँखें, लंबी नाक, धोती और उत्तरीय, इस प्रतिमा का संपूर्ण ढाँचा देखकर मैं हतप्रभ रह गई। एक क्षण को लगा, हम सब जापान में न होकर भारत के किसी कोने में हैं। पहाड़ी को काटकर अथक् श्रम व तपस्या से श्रद्धालुओं ने इस प्रतिमा को संवत ७२५ के आसपास गढ़ा होगा। आज भी आबादी से दूर इस क्षेत्र में दुर्गम होने के कारण अधिक लोग नहीं आते, तो उस समय किस असीम श्रद्धा के वशीभूत होकर इस दुष्कर कार्य को संपन्न किया गया होगा, यह

रोमांचकारी अनुभव रहा। इस प्रतिमा के पीछे से चट्टानों पर कटी १००० सीढ़ियाँ नीचे घाटी की तरफ मंदिर परिसर के एक अन्य भाग की ओर ले जाती हैं, जहाँ ध्यान मग्न बुद्ध की बैठी हुई प्रतिमा है (चित्र 2)। सीढ़ियों के साथ-साथ पहाड़ी की चट्टानों में भिक्षुकों की छोटी-छोटी लगभग १५०० आकृतियाँ बराबर साथ चलती है। यह परिसर एक निर्जन शांत और सुरम्य पहाड़ी की चोटी पर है जहाँ से फूजी पर्वत की चोटी के दर्शन भी किए जा सकते हैं। नीचे बहती समुद्र की अथाह जल राशि कुछ-कुछ निस्तब्धता को भंग करती चलती है। स्थल का नीरव एकांत आत्यंतिक शांति का अनुभव कराता रहा।

एक अन्य पर्वत-श्रृंखला पर भी महात्मा बुद्ध का बाल रूप प्रस्तर पर उकेरा गया मिलता है। तकाओसान नाम का यह लोकप्रिय पहाड़ी क्षेत्र हमारी यूनिवर्सिटी से एक घंटे की दूरी पर कांतो क्षेत्र में है। यहाँ पर्वतारोहण के शौकीन पर्यटक अक्सर आते हैं। विशेष रूप से नवंबर में 'कोयो' (पतझड की रंग बिरंगी पत्तियाँ) देखने के लिए। पहाड़ी पर चढ़ने के सर्पीले रास्ते और पगडंडियों के बीच एक समतल चट्टान पर बाल बुद्ध की कमल पर सीधी खड़ी आकृति बड़ी कुशलता से उकेरी गई है। दृश्य में ११ स्त्रियाँ उनके स्वागत और अभिवादन की मुद्रा में नमस्कार करती चित्रित की गई है। स्त्रियों की वेशभूषा, मुखाकृति, अलंकरण और मुद्राएँ शत प्रतिशत भारतीय हैं। माथे पर बिंदी, लहँगा, चुन्नी तथा बाजूबंद जैसे आभूषण भारत की छवि को सामने ला देते हैं (चित्र 3)। दृश्य का ८० प्रतिशत भाग स्त्रियों के सुरुचिपूर्ण अंकन को समर्पित है और बुद्ध का आकार अपेक्षाकृत छोटा है। ऐसा चित्र मुझे टोक्यो के आसपास कहीं देखने को नहीं मिला, शायद इसीलिए इस स्थान को तकाओ (विशिष्ट) कहते हैं। 'सान' शब्द भारतीय 'श्री' अथवा 'श्रीमान' के पर्याय की तरह जापानी भाषा में अकसर आदरसूचक प्रयोग है। अत: तकाओसान है विशेष महान् पहाड़। ऐसे ही अनेक भारतीय सांस्कृतिक प्रतीकों की झाँकियों की प्रदर्शिनी है जापान।

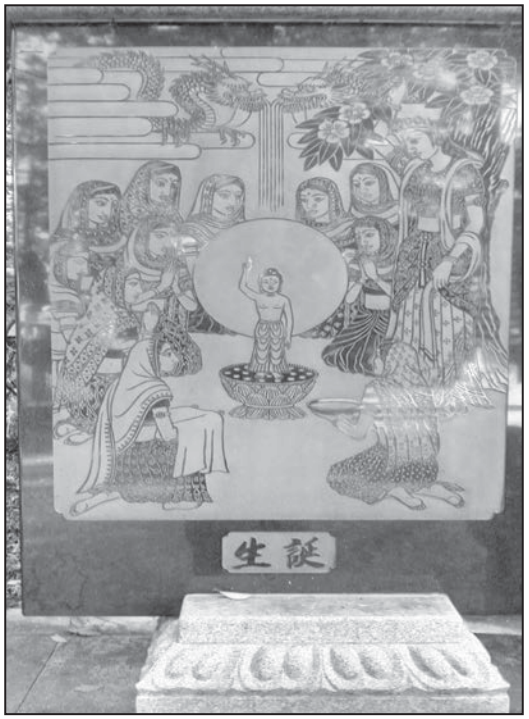

नोकोगिरिसान की प्रस्तर प्रतिमा और ताँबे के ध्यानमग्न बुद्ध, कामाकुरा की कांस्य प्रतिमा, अरहतों के असंख्य रूप और भारतीय देवी-देवताओं, पौराणिक चरित्रों के जापानी कृत अनेक संस्करणों की कुछ छवियों को स्मृति में संजोने का मौका मिला। अपने आप में यह बिंब संयोजन का उत्सव जैसा लगा। इसकी परिणति 'निक्को' के विशाल मंदिर परिसर में हुई। माना जाता है कि बौद्ध भिक्षु शोड़ो ने आठवीं शताब्दी के आसपास निक्को (सूर्य की किरणें) की नींव रखी। जापान के प्राचीन शिन्तो धर्म और भारतीय बौद्ध धर्म का जैसा गंगा जमुनी संगम यहाँ देखने को मिलता है, वह जापान में अन्यत्र मुश्किल से प्राप्त होता है। मेरी निक्को यात्रा ने मुझे यहाँ के अत्यंत अलंकृत पत्थर और लकड़ी की महीन नक्काशीदार जाली के काम वाले झरोखों और ऊँचे दीप स्तंभों के स्वर्ण जड़ित मंदिरों के १०३ भवनों से परिचित करवाया। जापान के सादगी भरे पत्थर और लकड़ी के बने प्रासादों और मंदिरों की तुलना में यह भवन और मंदिर समृद्धि, संपन्नता और वैभव की यश पताका से लगे, और दक्षिण भारत के कांचीपुरम के बहुरंगी स्वर्ण मंदिरों की सी आभा से मंडित हैं (चित्र 4)। यहाँ मुख्य परिसर के भीतर हमने मंत्रोचार के साथ हवन होते हुए भी दूर से देखा, क्योंकि फोटो लेना वर्जित था।

माना जाता है कि मेईजी शासन में यहाँ शिंतो और बौद्ध धर्म को पृथक् करने के प्रयास किए गए, किंतु यह दोनों परस्पर ऐसे रचे बसे थे कि यह कार्य सफल न हो सका। कुल १०३ मंदिरों तथा अन्य भवनों से लगभग १०४८ एकड़ में निर्मित निक्को का यह साधना स्थल, भारत और जापान की सामूहिक दार्शनिक धरोहर का प्रतीक स्वरूप लगा, जिसे 'विश्व संपदा स्थल' की उपाधि दी गई है। गांधीजी के तीन बंदरों की अवधारणा भी निक्को के एक मंदिर पर काष्ठ से निर्मित वानराकृति से प्रेरित है (चित्र 5)। कुछ चुने हुए स्थल हैं, जिन्हें मैं निकट से देख सकी। ऐसे अनेक रोचक साझे इतिहास की दृश्यावली जापान भर में फैली हुई है। यहाँ की शिबोरी वस्त्र कला राजस्थानी बाँधनी का प्रतिरूप है। आज भी क्योतो में 'कातायामा बुन्जाबूरो शोतेन' नामक शोरूम शिबोरी की कलात्मक वस्तुओं का उत्पादन करता है। 'सन्थोमे जीमा' जापान में दक्षिण भारतीय धारीदार और चेक की डिजाइन वाले वस्त्रों को कहते हैं। चेन्नई में सन्थोमे जीमा नामक एक गिरजाघर भी है। १६वीं शताब्दी में चेन्नई का सन्थोमे पोर्ट पुर्तगालियों का प्रमुख व्यापारिक बंदरगाह था। जापान का पुर्तगालियों के साथ व्यापारिक संबंध रहा, जिनके माध्यम से यह परिधान दक्षिण भारत से जापान पहुँचा। जापान के एडो काल में इसे आभिजात्य वर्ग पहनता था और इससे किमोनो वगैरह परिधान बनाए जाते थे।

साझी संवेदना के ऐसे सूत्रों ने मेरी उत्सुकता को और जाग्रत किया। मेरे सहयोगी जापानी शिक्षक मिजुनोजी ने, जो हिंदी के साथ-साथ संस्कृत में गहरी रुचि रखते हैं, मुझे अनेक संदर्भ देकर इस दिशा में प्रेरित किया। चर्चा के दौरान जापान में संस्कृत की सिद्धम लिपि के प्रयोग पर उनसे कुछ बिंदु मिले। उन्हें आधार मानकर कुछ और पड़ताल करने पर रोचक तथ्यों का खुलासा हुआ। भारत में मेरी एक जापानी मित्र श्रीमती यूरिको ने भी मुझे कुछ तथ्य भेजें। ज्ञात हुआ कि जापान में संस्कृत की सिद्धम लिपि 'शित्तान' नाम से प्रचलित रही है। विशेष बीज मंत्र इसी में लिखे जाते हैं। बौद्ध धर्म में आस्था रखने वाले परिवारों में व्यक्ति का देहावसान होने पर पुरोहित एक काष्ठ के फलक, जिसे 'इहाई' कहते हैं, पर सिद्धम लिपि में उसका नया नाम लिखते हैं। बौद्ध विहारों, शोध संस्थाओं में तथा स्तूपों (जापानी सोतोउबा) के शीर्ष पर इसी लिपि में वीजाक्षर लिखने की प्रथा है।

श्रीमती यूरिको द्वारा चिह्नित एक ऐसे ही सोतोउबा फलक का चित्र प्रस्तुत है, जो सिद्धम लिपि और जापानी कान्जी का मिश्रण है (चित्र 6)। "ओसाका के समीप कोयासान, मंत्रयान का महापीठ है। यहाँ विश्वविख्यात आचार्य कोबो दाइशी की समाधि है। जापान की वर्णमाला काताकाना और उसका प्रवाही रूप हीराकाना कहलाता है। इसके आविष्कारक कोबा दाइशी थे, जिनका काल सं ७७४ से ८३५ है। इन्होंने नागरी वर्णक्रम के आधार पर जापानी वर्णमाला 'गोजेआन' (५० ध्वनियों) की रचना की। इसका आरंभ है आ, ई, ऊ, ए, औ, का, की, कू, के, को, आदि। कोबोदाइशी ने सामान्य जनता में बच्चों को पढ़ाना-लिखाना आरंभ किया और इसके हेतु हीराकाना वर्णमाला की रचना की, जिसका आधार संस्कृत था, जो उन्होंने कश्मीरवासी आचार्य प्रज्ञ से सीखी थी।" (लोकेश चंद्र, 'जापान में नागरी लिपि', 'भाषा' विश्व हिंदी सम्मेलन अंक १९७५, पृष्ठ ३०)

इस प्रकार जापानी भाषा, साहित्य और जनमानस के अनेक पक्षों पर भारतीय संस्कृति की प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष छाया देखने को मिलती गई। संस्कृत का 'सेवा' शब्द जापानी में सेवा ही लिखा और बोला जाता है, समान अर्थ भी देता है, यह जानकर मेरा रोम-रोम इस आश्वस्ति से भर उठा कि वास्तव में पूरी 'वसुधा' 'कुटुंब' ही है, निज और पर की संकीर्णता से परे। हमारा 'धर्म गुरु' शब्द जापानी में 'दारुमादाईशी' और 'तोरण' शब्द जापानी में लाल ऊँचे प्रवेश द्वार के लिए प्रयोग किया जाने वाला 'टोरिई' शब्द है। आधुनिक 'जेन' ध्यान मुद्रा, भारतीय 'ध्यान' का पृथक उच्चारण ही है। श्री मिजुनोजी ने बताया कि भारतीयों की तरह जापानी भी यह मानते हैं कि चाँद पर खरगोश है तथा 'पंचतंत्र' की कहानियों के कई संदर्भ जापानी लोक-साहित्य में बिखरे पड़े हैं। जापान की सबसे लोकप्रिय नाटक सीरीज 'काबुकी' का एक पात्र तेंजिकु तोकोबी है। माना जाता है कि यह एक जापानी यायावर था, जिसने १६३० में मगध की यात्रा की तथा भारत की कई छवियाँ और कहानियाँ अपनी स्मृति में संजोकर वापस जापान लौटा।

आज का जापान गगनचुंबी विशाल अट्टालिकाओं, अत्याधुनिक उपकरणों से सुसज्जित समृद्ध और वैभवशाली देश है, जहाँ परंपरा ने अपने परिवेश को परिवर्तित तो अवश्य किया है, किंतु पूर्णतया नष्ट होने से बचा रखा है। मेरे लिए हिंदी का अध्यापन भारतीय इतिहास की इस अमूल्य निधि के मोती बटोरने जैसा आह्लादकारी अनुभव रहा। इसमें से कुछ यहाँ बाँटने का प्रयत्न किया है।

भारत वापस आते समय हमारी जापानी पड़ोसी अजुसा सुजुकी ने उपहारस्वरूप जापानी हथकरघा से बना लाल रंग का वस्त्र भेंट किया जिस पर सफेद बिंदिया थी। बोली, "यह हमारी हस्तकला का नमूना 'शिबोरी' है (चित्र 7)।" राजस्थानी बाँधनी की प्रत्यक्ष प्रतिरूप भेंट को लेकर मैं मन ही मन मुसकुराई, सोचा क्या अंतर है! जब संस्कार साझे हैं तो सब कुछ अपना ही तो है। बाँधनी कहो या शिबोरी।

सा अ

बी-६०, सेक्टर-७२,
नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९६८०९७२८८
richamisra62@gmail.com

इस अंक की चित्रकार

अनुभूति श्रीवास्तव

५ मार्च, १९८७ को हापुड़ (उ.प्र.) में जन्म। कविता, कहानी, लघुकथा, हाइकु, क्षणिकाएँ लेखन। अब तक 'बाल सुमन' (बालकाव्य-संग्रह), 'कतरा भर धूप' (काव्य-संग्रह), 'अपलक' (कहानी-संग्रह) एवं पुस्तकों और विभिन्न पत्रिकाओं में तीन सौ से अधिक कविताएँ तथा रेखांकन प्रकाशित। 'नारी गौरव सम्मान', 'प्रतिभाशाली रचनाकार सम्मान', 'साहित्य-श्री सम्मान', 'के.बी. नवांकुर रत्न सम्मान' तथा 'साहित्य मंडल' श्रीनाथद्वारा से 'संपादक शिरोमणि सम्मान' से सम्मानित।

संपर्क : एमएमए-२२ इंफ्रट ऑफ रामलीला पार्क,
एडीए कॉलोनी, नैनी,
प्रयागराज-२११००८ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९६९५०८३५६५

लालसा

• सुरेश मीना

सामाजिक ताने-बाने में बँधा हुआ इनसान यह समझ ही नहीं पाता कि समय कितनी जल्दी गुजर जाता है। महेश की सरकारी नौकरी लगे हुए 2 वर्ष बीत जाने पर भी ऐसा लगता है कि कल की ही बात हो। मंजू और महेश की अभी-अभी शादी हुई है, सारी दुनिया की खुशियाँ मानो उनके दामन में समाहित हो गई हैं। जैसे-जैसे समय गुजर गया, वैसे-वैसे खुशियों में धुँधलापन आना प्रारंभ हो गया। समय की गति बहुत तीव्र होती है और वह हर चीज को घटाती-बढ़ाती रहती है। चाहे सुख हो या दुख।

एक दिन अलसायी हुई सुबह घर के आँगन में रोज की भाँति अखबार आकर गिरा और महेश उसे उठाकर पढ़ने लगा। पढ़ते-पढ़ते उसने देखा कि राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग का विज्ञापन छपा है। जिसमें प्राध्यापकों की भर्ती का विज्ञापन था, उस पर नजर पड़ते ही अचानक महेश के मन में बिजली सी क्रौंध गई। महेश ने मंजू को आवाज लगाई, जो कि रसोईघर में चाय बना रही थी। चाय के साथ आकर वह उसके पास बैठ गई। उसे अपनी सारी योजना बताई कि इस विज्ञापन में तुम अपना आवेदन-पत्र दे सकती हो, वह भी तलाकशुदा दर्जे में, इस बात को सुनकर मंजू की हवाइयाँ उड़ गईं कि मैं सुबह-सुबह यह क्या सुन रही हूँ। मगर महेश ने मंजू को समझाया कि हम दोनों साथ-साथ रहेंगे मगर हम कागजों में तलाक ले लेते हैं, जिससे तुम्हें तलाकशुदा कोटे से सरकारी नौकरी मिल जाएगी। मंजू अपने भोलेपन में पड़कर महेश की बातों में आ जाती है।

अगले ही दिन दोनों सुनहरे भविष्य की कल्पना करते हुए तलाक लेने के लिए वकील से मिलने के लिए कोर्ट में पहुँचते हैं और तलाक का आवेदन करते हुए तलाक ले लेते हैं। जिंदगी की गाड़ी दिन-प्रतिदिन की भाँति यों ही चलती रहती है। ऐसे में लगभग दो वर्ष गुजर जाते हैं। मालूम ही नहीं चलता कि समय इतनी तेजी से बदलता है कि उनके घर एक नए मेहमान का आगमन हुआ, यानी कि एक बेटी का जन्म हुआ। वह भी एक निजी अस्पताल में, जिसका सारा खर्च महेश ने ही उठाया। वह भी क्रेडिट कार्ड से। महेश ने यह सारा खर्च अपने कार्यालय से प्राप्त कर लिया।

सबकुछ बहुत अच्छा चल रहा था कि मंजू एक दिन अपनी बेटी

प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित। साहित्य मंडल, नाथद्वारा की ओर से पत्रकारिता के लिए 'साहित्यश्री' सम्मान से सम्मानित। आकाशवाणी में १९९७ से कार्यरत।

को लेकर अपनी माँ के घर पर मिलने चली जाती है। और महेश को फोन पर यह बताने के लिए फोन करती है कि मैं यहाँ ठीक-ठाक पहुँच गई हूँ। परंतु महेश फोन पर बात नहीं करता है; उधर मंजू परेशान होती है कि महेश फोन पर बात क्यों नहीं कर रहा है, ऐसा क्या हुआ, अभी तो मैं ठीक छोड़कर आई हूँ? मंजू के मन मैं अनेक विचार आते हैं, बार-बार फोन करने पर महेश झल्लाकर फोन पर हैलो-हैलो बोलता है—

महेश—हैलो-हैलो, कौन?

मंजू—महेश, मैं मंजू, तुम्हारी मंजू!

महेश—हैलो, कौन? कौन मंजू ··· मेरी पूर्व पत्नी!

इतना सुनकर मंजू के पैरों तले मिटी खिसक गई। आँखों के सामने अँधेरा छा गया, मंजू कुछ समझ ही नहीं पाई कि यह मेरे साथ क्या हुआ। मंजू ने घर वालों से कुछ आवश्यक कार्य बताकर वापस दिल्ली लौट आती है और महेश से मिलने पर महेश उसे तलाक के कागज दिखाता है, जो उसने राजस्थान सरकार के प्राध्यापक पद के आवेदन के समय बनाए थे। मंजू को यह सारा माजरा समझ में आ गया। मंजू ने अपने को सँभाला और महेश को उसकी हैसियत दिखाने का प्रण लिया। इस बीच मंजू को एक शुभ समाचार मिला कि उसका चयन राजस्थान सरकार के प्राध्यापक पद के लिए हुआ है। उधर मंजू ने कोर्ट में आवेदन किया है कि महेश ने मेरे साथ तलाक लेने के बाद भी संबंध रखें और इन्हीं संबंधों की निशानी है मेरी यह बेटी। पर महेश ने यह मानने से इनकार कर दिया कि यह उसकी बेटी है। मंजू ने कोर्ट को बताया कि यह मेरे तलाक के कागजात तो है, जोकि मेरी बेटी कि जन्म से दो वर्ष पूर्व हमारा तलाक

हुआ। तो फिर इसने मुझसे क्यों छिपाया कि तलाक सच में ही लिया था, क्यों मुझे माँ बनने का अवसर दिया। हाँ, दूसरी बात यह है कि मेरी बेटी का जन्म भी एक निजी अस्पताल में कराया गया। जिसका सारा खर्चा महेश ने उठाया तथा सारे खर्चे कि भरपाई अपने कार्यालय से की गई है। यह सारी बातें ये सिद्ध करती हैं कि महेश ने मेरे साथ जान-बूझकर पूर्व नियोजित तरीके से धोखा दिया है।

ये सारी बातें न्यायाधीश महोदय की समझ में आती हैं और वह महेश के खिलाफ दंडात्मक फैसला देते हुए महेश को सरकारी सेवा से बर्खास्त करने का आदेश देते हैं। महेश की नौकरी जाने पर महेश को दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं।

महेश अपनी गलती पर प्रायश्चित्त करते हुए अपने किए की क्षमा याचना के लिए मंजू को फोन करता है। एक दिन घर मैं अचानक टन··· टन···टन (फोन की घंटी बजती है) और मंजू फोन उठती है।

मंजू—हैलो, हैलो!

महेश—हैलो, हेलो म···न···जू

महेश—हैलो, मंजू मैं महेश बोल रहा हूँ, आप मेरे फोन को काटना मत, मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं।

मंजू—कौन? कौन महेश?

महेश—मैं महेश बोल रहा हूँ, तुम्हारा महेश और अंत में मंजू अपने स्वाभिमानी मन से तिरस्कार भाव के साथ फोन रख देती है।

मकान नंबर-११२, पॉकेट-४, सेक्टर १२,
द्वारका, नई दिल्ली-११००७८
दूरभाष : ९९६८३६३५६१

तिरस्कार एवं सम्मान

लघुकथा

● माणिक विश्वकर्मा 'नवरंग'

एक दिन कौवे ने कोयल से पूछा, 'हे मित्र! हम दोनों का रंग एक है, रहन-सहन एवं आकार लगभग एक जैसा है, मेरे बोलने से किसी के आने का संकेत मिलता है, पितृपक्ष में तो मेरे चौखट पर जाने से लोगों को अपने पूर्वजों के आने का आभास होता है, उस दिन मुझे खिलाकर लोग खुद को धन्य मानते हैं, फिर भी संसार में लोग मुझे तिरस्कार एवं तुम्हें सम्मान की भावना से देखते हैं, ऐसा क्यों? यह मैं आज तक समझ नहीं पाया।' कोयल ने हँसकर जवाब दिया, 'मित्र! मैं प्रतिदिन मधुर ध्वनि छेड़कर सूरज कि पहली किरण के आने का सत्कार करती हूँ, जिससे संसार का जीवन चलता है, मेरी आवाज सुनकर पुजारी मंदिर का द्वार खोलते हैं, कहीं संगीतकार स्वर बाँधते हैं तो गायक सुर साधते हैं। मेरी आवाज ने हरदम मौसम के सुरमई होने का अहसास दिलाया है। रंग के पीछे भागने वालों को गुण का महत्त्व समझाया है। किसी पर विजय प्राप्त करने का आसान तरीका है मीठी आवाज एवं लोक कल्याण की भावना। मित्र, तुम्हारी आवाज में अपशगुन एवं किसी के मरने का आभास अधिक होता है।'

भिखारी कौन?

राह में खड़े भिखारी को सेठ ने जेब से दस रुपए का नोट निकालकर देते हुए कहा, 'बाबा ईश्वर से दुआ करो कि मैं जिस ठेके को लेने जा रहा हूँ, मुझे मिल जाए।' भिखारी ने उत्तर दिया—पुत्र, 'मेरी दुआ में अगर असर होता तो मेरे बच्चे भूखे नहीं सोते, मैंने उन सभी को ईश्वर से दुआ माँगकर मालामाल कर दिया होता।'

तेरे शहर में (गजल संग्रह), माँ बम्लेश्वरी (संक्षिप्त इतिहास), यादों की मीनारें (गजल संग्रह) आदि रचनाएँ राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। सम्मान, अभिनंदन एवं मानद सहित सौ से अधिक उपाधियाँ प्राप्त।

पापा

हर बार पापा मुझे रेलवे स्टेशन लेने आते थे। वृद्धावस्था में शरीर का बोझ न उठा पाने के बावजूद मेरे लगेज को उठाकर थकान की जगह मुसकान के साथ घर तक ले जाते थे। कभी उन्होंने बोझ उठाने नहीं दिया।

मकान

बहुत दिनों बाद पैतृक मकान में गया। दादी-दादा, माँ-बाबूजी एवं बड़े दादा की स्मृतियों ने रातभर सोने नहीं दिया। दीवारें घूरती रहीं। मैं चाहता था, मकान मुझसे कुछ कहे। लौटते समय भी वह खामोश रहा, शायद इसलिए कि मेरे लौटने पर उसे टूटना पड़ेगा।

क्वार्टर नं. एएस-१४, पावरसिटी,
अयोध्यापुरी, जमनीपाली,
कोरबा-४९५४५० (छ.ग.)
दूरभाष : ९४२४१४१८७५

फागुन, फाग, राग और कवि ईसुरी

• शिवचरण चौहान

ऋतुओं में ऋतु वसंत और वसंत में भी फागुन माह के क्या कहने! इसी फागुन में रंगों का पर्व होली मनाया जाता है। वैसे तो माघ की पंचमी (वसंत पंचमी) ये लेकर फागुन की पूर्णिमा, यानी होली जलने तक व पूरी वसंत ऋतु में प्रकृति की छटा अनुपम, अद्वितीय, दर्शनीय होती है।

ऐसी मदिर और मादक ऋतु में कोई कवि बन जाए, सहज संभाव्य है। फागुन के फाग, राग-रंग में हर कोई डूब जाता है। चाहे कृष्ण हो या रसखान। पूरे उत्तर व मध्य भारत में फागुन में फागें गाई जाती हैं। अवधी, बृज, भोजपुरी के कवियों में श्रृंगारकाल से लेकर अब तक हजारों फागें लिखी हैं, गाई हैं।

बुंदेलखंड में बुंदेली फागें गाई जाती हैं। इनमें अधिकांश फागें कवि ईश्वरी की रची, यानी लिखी हुई और उन्हीं की गाई हुई हैं। ईश्वरी की चौकड़ियाँ फागें बुंदेली में रस बरसाती हैं। उनकी फागों में श्रृंगार, आनंद व अध्यात्म भरा है। जिस तरह कवि घनानंद ने अपनी प्रेयसी नृत्यांगना सुजान के लिए प्रेम के छंद, कवि केशवदास ने ओरछा की नृत्यांगना व अपनी प्रेयसी राय प्रवीन के लिए छंद-सवैए लिखे हैं, उसी तरह ईश्वरी ने अपनी प्रेयसी (प्रेमिका) के लिए यानी रजऊ के लिए ३६० फागें बुंदेली बोली में लिखी हैं—

कहीं तीन सौ साठ ईश्वरी, रजऊ, रजऊ की फागें!

इन फागों में नायिका रजऊ के रूप, सुंदरता, लावण्य, श्रृंगार का अद्‌भुत वर्णन है।

इनमें एक लालित्य है, रस है। इन्हें जितनी भी बार पढ़ो, गाओ, मन नहीं भरता। बुंदेलखंड में उनकी फागें जन-जन में रची-बसी हैं।

ईश्वरी का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जिले में मऊरानीपुर कस्बे के पास मेढकी गाँव में हुआ। लालन-पालन नाना के घर हुआ। वह तिवारी ब्राह्मण थे और चैत्र माह में सन् १८९८ में उनका जन्म हुआ था। बचपन से ही वह काव्य प्रेमी थे। वह श्रृंगार काल का उत्तरार्द्ध था और ईश्वरी की फागें जब लोकप्रिय होने लगीं तो छतरपुर के महाराज विश्वनाथ सिंह जूदेव ने उन्हें अपने आश्रय में आने का आग्रह किया, पर ईश्वरी को यह आग्रह स्वीकार नहीं हुआ।

एक समय ऐसा आया कि ईश्वरी की फागों पर दो नृत्यांगनाएँ सुंदरिया व गंगिया नृत्य करती थीं। ईश्वरी के शिष्य गाँव-गाँव फागें गाते थे। उनके शिष्यों में धीरपंडा इतने मधुर स्वर में झूम-झूमकर फागें गाते थे कि समा बँध जाता था। राई नृत्य बुंदेली का प्रसिद्ध नृत्य है और ईश्वरी की फागें राई नृत्य में गाई जाती थीं।

सुपरिचित लेखक। अब तक बाल-साहित्य की दो पुस्तकें प्रकाशित व दस प्रकाशन के लिए तैयार। करीब दो हजार रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। बाल साहित्य के लिए उ.प्र. के हिंदी संस्थान सहित करीब एक दर्जन संस्थाओं द्वारा सम्मानित। एक मीडिया संस्थान में वरिष्ठ समाचार संपादक।

कहते हैं, ईसुरी की फागें कवियों, साहित्यकारों, राजनेताओं को भी पसंद आती रही हैं। पिछड़े क्षेत्र का होने के कारण ईश्वरी की फागों पर कोई बड़ा शोध तो नहीं हो पाया, पर सागर विश्वविद्यालय में काफी काम हुआ। उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के करीब २०-२५ जिलों में बुंदेली बोली बोली जाती है और आकाशवाणी का छतरपुर व उत्तर प्रदेश का लखनऊ आकाशवाणी केंद्र, इलाहाबाद केंद्र बुंदेली बोली-भाषा के विकास व उन्नयन के लिए कार्य कर रहे हैं। कवि हरिवंशराय बच्चन, शतदल, वीके सोनकिया तथा अनेकानेक हिंदी के पुराने-नए कवियों को ईश्वरी का सौंदर्य-बोध प्रभावित करता रहा है।

ईश्वरी की नायिका दुबली-पतली कमर वाली, बेहद सुंदर सर्वगुण संपन्न चित्त को सहज चुराने वाली है। रजऊ के रूप की दुनिया दीवानी है। भगवान् ने रजऊ को फुरसत में गढ़-गढ़कर बनाया है—

रब ने रूप दओ तुम खइयाँ,
मुलक निरोना गुइयाँ।
गोरी नारी और पंछीली
है ललछौहीं मुइयाँ।।
गाल फूल गेंदा से फूलें, लेबै लाक बलैयाँ।।
गोरे बदन, लाल धोतियाँ में, कनक लता सी बइयाँ।।
ईसुर फिर मिलने के लाने, लिवा रई ललचइयाँ।।

बनाने वाले ने रजऊ तुम्हें ऐसा रूप दिया है, जिसे देख सभी खिंचे चले आते हैं। तुम्हारा मुख लंबा, गेंदा के फूल जैसे गाल, गोरे शरीर पर लाल धोती और स्वर्ण सी चमकीली सुंदर बाँहें देखकर मन बार-बार मिलने को ललचा रहा है।

ईसुरी ने नायिका रजऊ का नख-शिख वर्णन बिल्कुल अनोखे अंदाज में किया है। उनकी फागें आज के नवगीत हैं—

हमको बिसरत नहीं बिसारी, हेरन-हसन तुम्हारी।
जुबन विशाल, चाल मतवारी, पतरी कमर इकारी।।
भौंह कमान बना के तानें, बान तिरोछौ मारी।
ईसुर कात हमारी कोदी, तनक हेर लो प्यारी।।

नायिका रजऊ को तिरछी नजर से देखकर मुसकराना भूल ही नहीं रहा है। उस पर उसका नवयौवन, मतवाली चाल, पतली कमर, भौंहों के धनुष से तिरछे बाण मारकर घायल करना मन को वश में कर लेता है। ईसुरी कहते हैं कि हे सुंदरी! एक बार हमारी ओर भी नजर उठाकर तनिक देख लो।

गायन तत्त्व ईसुरी की फागों की विशेषता है। रस-अलंकार शब्द बोध ईसुरी की फागों में भरा पड़ा है। उनकी फागों से बुंदेली भाषा-बोली का सौंदर्य निखर उठा है।

ईसुरी की फागों के अध्येयता व लेखक अयोध्या प्रसाद कुमुद ने 'बुंदेलखंड की फागें' नामक ग्रंथ में ईसुरी की फागों का वर्णन किया है। और माना है कि ईसुरी ने तीन सौ साठ फागें रची-लिखीं, जिन्हें उनके शिष्यों से लेकर अब तक गायक गा रहे हैं। उनकी फागों के कैसेट, सीडी भी बनी हैं। यूट्यूब में उनकी फागें मिलती हैं।

बसंत फागुन होली के अवसर पर ईसुरी की फागों की धूम मचती थी—

फागै सुन आए सुख होई. देत देवतन मोई।
इन फागून में फाग न आवै, कइयन करी अनोई।।
और भखन को उगलन को गओं, कली-कली कैं गोई।।
बस भर ईसुर एक बची न, सब रस लओ निचाई।।

कवि ईसुरी कहते हैं कि ईसुरी की फागें सुनकर सुख मिलता है। ईश्वर मुझे वही सुख देता रहे। ईसुरी जैसे फागें प्रयास करके भी अन्य कवि नहीं रच पाए। जैसे भ्रमर कलियों का रस चूसकर जूठन छोड़ देता है। इसी तरह ईसुरी ने फाग गीतों का सारा रस निचोड़ लिया

अब आई रितु बसंत बहारन।
पान, फूल, फल डारन।।
द्रमत और अंबर के ऊपर, लगे भौंरे गुंजारन।।
तपसी तपत कदरन भीतर, है बैराग, बिगारन।।
फेल परे रितुराज इसुरी, परे बादसा बागन।।

बसंत ऋतु के आते ही ऋतुराज ने राज्य विस्तार कर लिया है। आमों पर मंजरी आ गई है और भौंरे गाने लगे हैं। तपस्वियों का मन डगमगाने लगा है—

सुन कै फाग ईसुरी तेरी, पाडूं तिरियाँ हेरौं।
झिन्ना झिरत काम को आवे, बिरिया तकत अबेरी।।
लगत काऊ को फीकी नइयाँ, नीकी लगी सबैरी।
चाहन लगी मर्द से मिलिबो, आउन लगीं घनेरी।।
पतिवरता परमान छाड़ दए, मद-मारण में घेरी।
चाय जहाँ ले जाओ ईसुर, कान धरी भई छेरी।।

ईसुरी की रस भरी फागें सुनकर स्त्रियों में रस सृवित होने लगा उनमें मिलन की आकांक्षा जाग गई। स्त्रियों ने पातिव्रत धर्म त्याग दिया, वे ऐसी उन्मत्त हो गईं कि वे बकरी की तरह कान पकड़कर कहीं भी जाने के लिए तैयार हो गईं।

रसखान भी लिखते हैं—"एहि पाख पतिव्रत ताख धरयो जू।" फागुन में तो पतिव्रताओं का भी धर्म डोल जाता है। तुलसीदास लिखते हैं—

सबके हृदय मदन अभिलाषा।
लता निहारि झुकहि तरु साखा।।

ईसुरी की फागें इतनी सम्मोहक है कि फागें शुरू होते ही शाम को नर-नारी, बाल, अबाल, पशु सभी खिंचे चले आते हैं—

उनको चलो देखिए फिर कें, भर के एक नजर में।
देखों नई आज लौं हमने कोऊ तुमरी सानी को।
बरकत राज रोज हम तुमसे डर है रजधानी को।।

ईसुरी कहते हैं कि हे रजऊ, हम तुम्हें बचा-बचाकर रखते हैं कि तुम्हारी सुंदरता के किस्से राजधानी तक न पहुँच जाएँ और राज दरबार में तुम्हें बुला न लिया जाए। जैसे कवियों की नायिकाएँ दरबारों में बुलाई जाती हैं।

ईसुरी ने रजऊ की आँखों की सुंदरता का बड़ा मनोहारी चित्रण किया है—

बाँकी रजऊ तुम्हारी आँखें, रओ घूँघट में ढाकें।
हमने लखीं, दूर से देखीं पानी कैसी पाँखें।।
जिनकों चोट लगी नैनन की, डरें हजारन काँखें।
जैसी राखें रई ईसुरी, उसई रइयो राखें।।

यहाँ ईसुरी ने आँखों को पानी के पंख जैसी कहा है, जो नया प्रयोग है। पानीदार, चमकीली आँखें। रहीम, बिहारी, घनानंद जैसे न जाने कवियों ने नायिकाओं की आँखों की सुंदरता के गुण गाए और उपमा तथा उपमान के सारे बंधन तोड़ दिए हैं। तो ईसुरी ने पानी जैसी पाँखें लिखकर अपनी कविता की श्रेष्ठता का परिचय दिया है।

हींसा पर आगले मेरे, रजउ नयन दोउ तेरे।
जां हम होय तां मइया हेरों, अंत जाए न फेरे।।
जब देखो, तब हमकां देखो, दिन मां साझा-सवेरे।
ईसुर चित्त चलन न परवे, कबऊँ दाँयने डेरे।।

ऐसा लगता है रजऊ, तुम्हारे दोनों नेत्र हमें हर जगह दिखाई देते हैं। हम जहाँ भी देखते हैं, तुम दिखाई देती हो। लगता है, सुबह-शाम तुम हमें ही देखती रहती हो। तुम्हारी आँखें हर ओर हमें दिखाई देती है।

अखियाँ पिस्तौले-सी भरकें, मारत जात समर कें।
दारू दरद लाज की गोली-गज भर देत नजर के।।
देत लगाय सैन की सूजन, पल की टोपी धरकें।
ईसुर फेर होत फुरती में, कोऊ कहाँ लौ बर कें।।

ईसुरी ने चंचल आँखों की तुलना पिस्तौल से की है, जिसकी मार से कोई नहीं बच पाता है।

डारो रूप, नयन की फाँसी, दै काजर विस्वासी।

कृष्ण की रस बोरी होली—

तक के भर मारी पिचकारी। तिन्नी तर गिरधारी।।
सराबोर हो गई रंग में बृज बनिता बेचारी।।

या फिर

पानी भरन यार के लानें, हर-हर बेरा जानें।
भरो भराओ लुढ़का देवें, चाय होय न चानें।।

या फिर

हमने परखी उड़त चिरैया। कछू अनारी नैंया।
पहले से हिरदे की जानत, का हौं आप करैया।।

ईसुरी की इन फागों को पढ़-सुनकर लगता है कि वह असाधारण कवि हैं। रूपक, बिंब, सौंदर्य, नख, शिख वर्णन उनका किसी रीति कवि आज के कवियों से कम नहीं है। वह कहते हैं—

ऐंगा बैठ लेओ, कछुकानें। काम जनम भर रानें।
बिना काम के कोऊ नइयां, कामै सबकौ जानें।।
जी जंजाल जगत को ईसुर, करत-करत मर जानें।।
इक दिन होत सबई को गौनों, होनों उर ऊन होनों।
ईसुर विदा हुए जौ दिन ना, पिय के संग चलोनों।।

था फिर—

बखरी रइयत हैं भारे की, दई पिया प्यारे की।
कच्ची भीत उठी माटी की, छाई फूस चारे की।।

इन फागों में ईसुरी ने शरीर की नश्वरता के सत्य को बड़ी कुशलता से वर्णित किया है। चाहो न चाहो, एक दिन ईश्वर (पिया) के घर जाना है। यह तो भाड़े का मकान है। ईश्वरी की प्रसिद्ध फागों में—

जो कहुं छैल छला हुई जाते।
परे अंगुरियन राते।
मौ पोछन, गालन मा लगते, कजरा देख दिखाते।।
ईसुर दूर दरस के लाने, काए को तरसाते।।
महुआ मानस पालन।
ईकर देत नई सी ईसुर मरी मराई खालन।।

तथा—

यारी सदा निभाए रइयो, करके जिन बिसरइयों।।

आदि प्रमुख हैं। ईसुरी फागों के बेजोड़ लोककवि हैं। उनके काव्य में अश्लीलता नहीं, बल्कि फागुन-बसंत की मस्ती, श्रृंगार रस, सौंदर्य की मादकता है। उनकी फागें नायिका रजऊ को समर्पित हैं। उनमें लौकिक से पारलौकिक प्रेम के दर्शन होते हैं। यदि घनानंद ने अपने काव्य से सुजान, केशवदास ने रायप्रवीन को अमर कर दिया है तो ईसुरी ने भी रजऊ को अमर नायिका बना दिया है। ईसुरी का समुचित मूल्यांकन नहीं हुआ है। फिल्मी गीतों के आगे बुंदेलखंड में ही नई पीढ़ी उन्हें और उनकी फागों को भूलती जा रही है।

मनेथू (सरवन खेड़ा),
कानपुर-२०९१२१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ६३९४२४७९५७
shivcharany2k@gmail.com

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

क्यों नहीं पूछा?

• रेणु राजवंशी गुप्ता

सुपरिचित लेखिका। अभी तक दो कविता संग्रह, तीन कहानी संग्रह, उपन्यास तथा स्तन कैंसर पर एक शोध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। साहित्य के अतिरिक्त समाज सेवा में पूरी तरह संलग्न।

बेटी पूछे मम्मी से

माँ जब हुआ था मुझे
इसने-उसने-अपनों ने, परायों ने…
उँगलियाँ खेल रही थीं वहाँ,
जहाँ तुम भी नहीं पहुँचती हो।
वे स्पर्श सहज नहीं असहज थे
सामान्य नहीं असामान्य थे
मन-लुभावन नहीं कंटकपूर्ण थे
तुम कहाँ थी माँ?
माँ तुम कहाँ थी?
बेटी पूछे मम्मी से।
कहाँ था मेरा सुरक्षा कवच आँचल तुम्हारा?
क्यों नहीं तुमने मुझे चेताया?
स्पर्श स्पर्श में अंतर करना,
क्यों नहीं तुमने सिखलाया?
मैं तुम्हारे निकट आती,
तुम घर के कामों में व्यस्त रहतीं
और कहतीं बेटी बाहर जाकर खेलो
बेटी पूछे मम्मी से।
एक दिन रोती हुई मैं आई पास तुम्हारे
छितरे हुए बाल लिये,
गालों पर खरोंचों के निशान लिये,
कपड़ों पर कुछ दाग लिये,
तुमने बेबस आँखों में पानी भरकर
मुझे छिपा लिया था
तुमने अपने आँचल में।
बेटी रोना नहीं बस चुप रहना।
चुप रहना?
बेटी पूछे मम्मी से।
क्यों नहीं बरसी
तुम्हारी आँखों से अग्निवर्षा?
क्यों नहीं उठाया,
तुमने चाकू-बेलन या चिमटा?
क्यों नहीं पूछा,
तुमने नाम उस हैवान का?
क्यों नहीं उधेड़ी,
चमड़ी उसकी सरेआम?
क्या तुम जानती थीं… कौन है वह?
क्या तुम भी डरती थीं
मुझे भी डरपोक बना रही थीं?
बेटी पूछे मम्मी से।

बेटा पूछे पापा से

मैं बेटा तुम्हारा पापा
जब मैंने दी माँ-बहन की गाली,
क्यों नहीं जड़ा तमाचा मेरे गालों पर?
जब मैं हुआ हावी अपनी बहन पर,
क्यों नहीं समझाया बहन की रक्षा करना?
जब मैंने छेड़ा था पड़ोस की लड़की को,
क्यों नहीं समझाया मुझे कि लड़की में
माँ-बहन भी देखना?
जब मैंने कसी अश्लील फब्ती,
क्यों नहीं चेताया मुझको कि
नारी को मान-सम्मान देना है।
होता है पुरुष पुरुषत्व?
बेटा पूछे पापा से
आज तुम्हारा बेटा पापा…
भागता छिप रहा हूँ,
किसी बेटी की अस्मिता लूट।
या है बंद सलाखों के पीछे,
एक बहिन का जीवन तबाह कर।
झुक नहीं जाती आँखें तुम्हारी,
शर्म के बोझ से।
समय रहते चेताया होता,
तो आज यह दिन न आया होता!
जैसा बाप-वैसा बेटा,
जैसा बेटा-वैसा बाप
एक पकड़ा गया
एक बचा रह गया
अपराधी हैं दोनों
क्या कम-क्या ज्यादा
बेटा पूछे पापा से।

6070 Eaglet Drive
West Chester, OH-45069 (USA)
renurajvanshigupta@gmail.com

सरिता हो मेरा जीवन

● **महादेवी वर्मा**

(२६ मार्च, १९०७–११ सितंबर, १९८७)

विसर्जन

निशा को धो देता राकेश
चाँदनी में जब अलकें खोल,
कली से कहता था मधुमास
बता दो मधुमदिरा का मोल;

बिछाती थी सपनों के जाल
तुम्हारी वह करुणा की कोर,
गई वह अधरों की मुसकान
मुझे मधुमय पीड़ा में बोर;

झटक जाता था पागल वात
धूलि में तुहिन कणों के हार;
सिखाने जीवन का संगीत
तभी तुम आए थे इस पार!

गए तब से कितने युग बीत
हुए कितने दीपक निर्वाण!
नहीं पर मैंने पाया सीख
तुम्हारा सा मनमोहन गान।

भूलती थी मैं सीखे राग
बिछलते थे कर बारंबार,
तुम्हें तब आता था करुणेश!
उन्हीं मेरी भूलों पर प्यार!

नहीं अब गाया जाता देव!
थकी अंगुली हैं ढीले तार
विश्ववीणा में अपनी आज
मिला लो यह अस्फुट झनकार!

मिलन

रजतकरों की मृदुल तूलिका
से ले तुहिन-बिंदु सुकुमार,
कलियों पर जब आँक रहा था
करुण कथा अपनी संसार;

तरल हृदय की उच्छ्वास
जब भोले मेघ लुटा जाते,
अंधकार दिन की चोटों पर
अंजन बरसाने आते!

मधु की बूँदों में छलके जब
तारक लोकों के शुचि फूल,
विधुर हृदय की मृदु कंपन सा
सिहर उठा वह नीरव कूल;

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से
स्वप्न लोक के से आह्वान,
वे आए चुपचाप सुनाने
तब मधुमय मुरली की तान।

चल चितवन के दूत सुना
उनके, पल में रहस्य की बात,
मेरे निर्निमेष पलकों में
मचा गए क्या-क्या उत्पात!

जीवन है उन्माद तभी से
निधियाँ प्राणों के छाले,
माँग रहा है विपुल वेदना
के मन प्याले पर प्याले!

पीड़ा का साम्राज्य बस गया
उस दिन दूर क्षितिज के पार,
मिटना था निर्वाण जहाँ
नीरव रोदन था पहरेदार!

कैसे कहती हो सपना है
अलि! उस मूक मिलन की बात?
भरे हुए अब तक फूलों में
मेरे आँसू उनके हास!

अतिथि से

बनबाला के गीतों सा
निर्जन में बिखरा है मधुमास,
इन कुंजों में खोज रहा है
सूना कोना मंद बतास।

नीरव नभ के नयनों पर
हिलती हैं रजनी की अलकें,
जाने किसका पंथ देखतीं
बिछकर फूलों की पलकें।

मधुर चाँदनी धो जाती है
खाली कलियों के प्याले,
बिखरे से हैं तार आज
मेरी वीणा के मतवाले;

पहली सी झनकार नहीं है
और नहीं वह मादक राग,
अतिथि! किंतु सुनते जाओ
टूटे तारों का करुण विहाग।

मिटने का खेल

मैं अनंत पथ में लिखती जो
सस्मित सपनों की बातें,
उनको कभी न धो पाएँगी
अपने आँसू से रातें!

उड़-उड़कर जो धूल करेगी
मेघों का नभ में अभिषेक,
अमिट रहेगी उसके अंचल
में मेरी पीड़ा की रेख।

तारों में प्रतिबिंबित हो
मुसकाएँगी अनंत आँखें,
होकर सीमाहीन शून्य में
मँडराएँगी अभिलाएँ।

वीणा होगी मूक बजाने
वाला होगा अंतर्धान,
विस्मृति के चरणों पर आकर
लौटेंगे सौ-सौ निर्वाण!

जब असीम से हो जाएगा
मेरी लघु सीमा का मेल,
देखोगे तुम देव! अमरता
खेलेगी मिटने का खेल!

जीवन

तुहिन के पुलिनों पर छबिमान,
किसी मधुदिन की लहर समान;
स्वप्न की प्रतिमा पर अनजान,
वेदना का ज्यों छाया-दान;
विश्व में यह भोला जीवन—
स्वप्न जागृति का मूक मिलन,
बाँध अंचल में विस्मृति धन,
कर रहा किसका अन्वेषण?
धूलि के कण में नभ सी चाह,
बिंदु में दुख का जलधि अथाह,
एक स्पंदन में स्वप्न अपार,
एक पल असफलता का भार;
साँस में अनुतापों का दाह,
कल्पना का अविराम प्रवाह;
यही तो है इसके लघु प्राण,
शाप वरदानों के संधान!
भरे उर में छबि का मधुमास,
दृगों में अश्रु अधर में हास,
ले रहा किसका पावस प्यार,
विपुल लघु प्राणों में अवतार?
नील नभ का असीम विस्तार,
अनल के धूमिल कण दो चार,
सलिल से निर्भर वीथि-विलास
मंद मलयानिल से उच्छ्वास,
धरा से ले परमाणु उधार,
किया किसने मानव साकार?
दृगों में सोते हैं अज्ञात
निदाघों के दिन पावस-रात;
सुधा का मधु हाला का राग,
व्यथा के घन अतृप्ति की आग।
छिपे मानस में पवि नवनीत,
निमिष की गति निर्झर के गीत,
अश्रु की उर्मि हास का वात,
कुहू का तम माधव का प्रात।
हो गए क्या उर में वपुमान,
क्षुद्रता रज की नभ का मान,
स्वर्ग की छबि रौरव की छाँह,
शीत हिम की बाड़व का दाह?
और—यह विस्मय का संसार,
अखिल वैभव का राजकुमार,
धूलि में क्यों खिलकर नादान,
उसी में होता अंतर्धान?
काल के प्याले में अभिनव,
ढाल जीवन का मधु आसव,
नाश के हिम अधरों से मौन,
लगा देता है आकर कौन?
बिखरकर कन-कन के लघुप्राण,
गुनगुनाते रहते यह तान,
"अमरता है जीवन का ह्रास,
मृत्यु जीवन का परम विकास"
दूर है अपना लक्ष्य महान,
एक जीवन पग एक समान;
अलक्षित परिवर्तन की डोर,
खींचती हमें इष्ट की ओर।
छिपाकर उर में निकट प्रभात,
गहनतम होती पिछली रात;
सघन वारिद अंबर से छूट,
सफल होते जल-कण में फूट।
स्निग्ध अपना जीवन कर क्षार,
दीप करता आलोक-प्रसार;
गला कर मृतपिंडों में प्राण,
बीज करता असंख्य निर्माण।
सृष्टि का है यह अमिट विधान,
एक मिटने में सौ वरदान,
नष्ट कब अणु का हुआ प्रयास,
विफलता में है पूर्ति-विकास।

अतृप्ति

चिर तृप्ति कामनाओं का
कर जाती निष्फल जीवन,
बुझते ही प्यास हमारी
पल में विरक्ति जाती बन।
पूर्णता यही भरने की
ढुल, कर देना सूने घन;
सुख की चिर पूर्ति यही है
उस मधु से फिर जावे मन।
चिर ध्येय यही जलने का
ठंडी विभूति बन जाना;
है पीड़ा की सीमा यह
दुख का चिर सुख हो जाना!
मेरे छोटे जीवन में
देना न तृप्ति का कणभर;
रहने दो प्यासी आँखें
भरती आँसू के सागर।
तुम मानस में बस जाओ
छिप दुख की अवगुंठन से;
मैं तुम्हें ढूँढ़ने के मिस
परिचित हो लूँ कण-कण से।
तुम रहो सजल आँखों की
सित असित मुकुरता बनकर;
मैं सब कुछ तुम से देखूँ
तुमको न देख पाऊँ पर!
चिर मिलन विरह-पुलिनों की
सरिता हो मेरा जीवन;
प्रतिपल होता रहता हो
युग कूलों का आलिंगन!
इस अचल क्षितिज रेखा से
तुम रहो निकट जीवन के;
पर तुम्हें पकड़ पाने के
सारे प्रयत्न हों फीके।
द्रुत पंखोंवाले मन को
तुम अंतहीन नभ होना;
युग उड़ जावें उड़ते ही
परिचित हो एक न कोना!
तुम अमर प्रतीक्षा हो मैं
पग विरह पथिक का धीमा;
आते जाते मिट जाऊँ
पाऊँ न पंथ की सीमा।
तुम हो प्रभात की चितवन
मैं विधुर निशा बन आऊँ;
काटूँ वियोग-पल रोते
संयोग-समय छिप जाऊँ!
आवे बन मधुर मिलन-क्षण
पीड़ा की मधुर कसक सा;
हँस उठे विरह ओठों में—
प्राणों में एक पुलक-सा।
पाने में तुमको खोऊँ
खोने में समझूँ पाना;
यह चिर अतृप्ति हो जीवन
चिर तृष्णा हो मिट जाना!
गूँथे विषाद के मोती
चाँदी की स्मित के डोरे;
हों मेरे लक्ष्य-क्षितिज की
आलोक तिमिर दो छोरें।

विभागीय

• मनीष कुमार मिश्रा

पूरे विश्वविद्यालय परिसर में अजायबघर के रूप में कुख्यात विभाग, अर्थात् हमारा विभाग। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि यह किस विश्वविद्यालय की बात हो रही है। देश भर के विभाग लगभग एक सी ही अवस्था में भाईचारा निभा रहे हैं। 'हम नहीं सुधरेंगे' इस विभाग का अघोषित पर सर्व विदित ध्येय वाक्य है। गिरोहबाजी और लिफाफावाद की अत्याधुनिक अकादमिक गतिविधियों में इस विभाग की उपलब्धियाँ चरम पर हैं। यह विभाग अपने 'कलाकार' और 'गणितज्ञ' प्राध्यापकों के लिए 'विशेष रूप से सक्षम' की श्रेणी में उच्चतम पायदान पर बना रहता है। इन प्राध्यापकों के झोले में पूरा विश्वविद्यालय समाया रहता है। शोध और प्रकाशन जैसी तुच्छ चीजें इनके दाढ़ी के बालों के बीच कुलबुलाती रहती हैं, जिन्हें खुजलाकर ये अकादमिक व्यवस्थाओं की खुजली शांत करते रहते हैं। ये जितने बड़े बकैत उतने ही बड़े चुप्पा। जितना जमीन के ऊपर, उतना ही जमीन के नीचे। साजिशों और षड्यंत्रों के सबसे बड़े अकादमिक जुगाड़कार। इनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता, क्योंकि ये बनाने-बिगाड़ने की तंत्र-साधना में सबसे बड़े अघोरी होते हैं। मेरा सौभाग्य है कि मुझे ऐसे गरिमापूर्ण विभाग का एक अंश होने का मौका मिला। यह अलग बात है कि यहाँ नौकरी करते हुए मैं लगातार एक अविश्वसनीय और संदिग्ध वस्तु के रूप में ढलता जा रहा हूँ।

लेकिन जब तक मैं अपनी अकादमिक बिरादरी की शक्ति को नहीं पहचान पाया था, तब तक अपार कष्ट में रहा। लेकिन जैसे-जैसे मैं अपने वरिष्ठों के मार्गदर्शन में इस 'बिरादरी शक्ति' की साधना में लीन होने लगा, मैं उस चरम आनंद को महसूस कर सका, जो गिरोहबाजी और लिफाफावाद का परमतत्त्व है। इसकी शुरुआत प्रोफेसर भानुप्रताप सिंह राय से मिलकर हुई।

हुआ यों कि नई-नई नौकरी में मैं कई भयानक गलतियाँ कर रहा था। दकियानूसी परंपरागत बातों के मोह में विभागीय साथियों के साथ संगत नहीं बिठा पा रहा था। कहीं कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था, तभी एक दिन अचानक चपरासी ने कहा कि आपको प्रोफेसर भानुप्रताप सिंह राय ने

राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं/पुस्तकों इत्यादि में ६७ से अधिक शोध आलेख प्रकाशित। १५० से अधिक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों/वेबिनारों में सहभागिता। १० राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों का संयोजक के रूप में सफल आयोजन। हिंदी और अंग्रेजी की लगभग १८ पुस्तकों का संपादन।

अपने चैंबर में बुलाया है। राय साहब से वह बीस मिनट की मुलाकात मेरे जीवन में नए सवेरे की तरह थी। यह वही चीज थी, जिसे अंग्रेजी में 'टर्निंग पॉइंट ऑफ द लाईफ' कहते हैं। राय साहब के चैंबर में प्रवेश करने से पहले मैंने शिष्टाचार निभाते हुए कहा, "सर, मैं अंदर आ सकता हूँ?"

राय साहब ने हाँ में गरदन हिलाई और कुरसी की तरफ इशारा करते हुए बैठने के लिए कहा। मैं बैठ गया तो राय साहब ने मुसकराते हुए कहा, "आज आप ने दु:खी कर दिया।" मैं स्तब्ध, कुछ बोलता इसके पहले राय साहब फिर बोले, "मेरे चैंबर में आने के लिए, मेरे भाई को अनुमति लेनी पड़ेगी? क्या मैं इतना कमजर्फ हूँ? क्या तुम मुझे अपना नहीं समझते?" राय साहब के लोमड़ी जैसे चेहरे पर इतनी आत्मीयता शोभा तो कहीं से नहीं दे रही थी, पर मेरे लिए बड़ी राहत भरी बात थी। मैंने हाथ जोड़कर कहा, "आप मुझे क्षमा करें, आगे से शिकायत का मौका नहीं दूँगा।'' राय साहब का तीर निशाने पर सटीक लगा था, वे फिर चाय के लिए पूछते हैं और मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बगैर चपरासी को जोर की आवाज लगाते हैं। चपरासी फुरती से हाजिर होता है और उसे दो समोसा, दो चाय तुरंत लाने का फरमान जारी हो जाता है।

"आप ने इस सत्र की उपस्थिति रिपोर्ट जमा की?" राय साहब ने पूछा। मैंने पुन: क्षमा माँगते हुए कहा कि "सर थोड़ा काम बाकी है, मैं कल तक आप के पास जमा कर दूँगा।''

राय साहब मुसकराते हुए बोले, "अरे भाई, समझ नहीं रहे हो, हम पूछ नहीं रहे बल्कि बता रहे हैं कि आप ने रिपोर्ट जमा कर दिया है। हमने उसी आधार पर फाइनल रिपोर्ट भेज दी। ठीक है?"

"जी सर, मैं समझ गया।'' मैंने राय साहब को आश्वस्त करते हुए कहा।

राय साहब के चेहरे की मुसकान और फैल गई। मेरी तरफ टेबल पर आगे की तरफ झुकते हुए बोले, "यहाँ सब ऐसे ही चलता है। काम कम, लेकिन काम का दिखावा अधिक। किसी पर भरोसा नहीं कर सकते। तुम अपने हो, निश्चिंत रहो। कोई परेशानी हो मुझे बताओ, मैं बैठा हूँ। ठीक है?"

मैंने बिना कुछ बोले बस हाथ जोड़ लिये। इतने में चपरासी चाय समोसे लेकर आ गया। वह चाय-समोसा खत्म होने तक राय साहब गूढ़ रहस्यों से अवगत कराते रहे। मैं विस्मय भाव से सब सुनता रहा। मोटे तौर पर जो कुछ प्रमुख बातें उन्होंने बताई थीं, वे निम्न प्रकार थीं—

१. छात्रों को अपना हथियार बनाना। इस हथियार का उपयोग अपनी इच्छा और सुविधा के अनुरूप करना।
२. रोज विभाग आने से बचना।
३. लैक्चर लेने में अधिक समय बरबाद करने से बचना। अपने शोध-छात्रों को कुछ कक्षाओं के लैक्चर दे देना।
४. किसी काम को मना न करना, पर काम करना न करना अपने तरीके से।
५. केंद्रीय कार्यालय में अच्छे संबंध बनाना।
६. किसी से सीधे उलझने से बचना, पर गुपचुप तरीके से उसका काँटा निकालने में जुटे रहना।
७. संगोष्ठियों, परिचर्चाओं का उपयोग अपने संबंधों को विस्तार देने के लिए करना।
८. लिखित रूप में कुछ भी देने से बचना।

ऐसी ही न जाने कितनी ही बातें राय साहब ने बताईं।

उनके चैंबर से बाहर निकला तो देखा, विभागाध्यक्ष के कक्ष में छात्र नारेबाजी कर रहे हैं। बड़े बाबू से ज्ञात हुआ कि विद्यार्थियों की शिकायत है कि उपस्थिति रिपोर्ट में बहुत गड़बड़ी है। जो कभी नहीं आया, उस विद्यार्थी की उपस्थिति अस्सी फीसदी दिखाई गई है और जो विद्यार्थी नियमित कक्षा में बैठते थे, उनमें से कई की उपस्थिति चालीस प्रतिशत से भी कम दिखाई गई है। परिणामस्वरूप ऐसे विद्यार्थियों को परीक्षा देने से वंचित किया जा सकता है। विभागाध्यक्ष रस्तोगीजी विद्यार्थियों को समझा रहे थे कि वे इसकी जाँच करेंगे, लेकिन विद्यार्थी सुनने को तैयार नहीं थे। 'जिंदाबाद, मुर्दाबाद' के नारे तेज होने लगे तो प्रॉक्टर साहब और डीन कार्यालय में सूचना दे दी गई। वहाँ रुकना अब ठीक नहीं था, सो हम भी धीरे से खिसक लिये। मुझे उस दिन बार-बार यह लगा कि राय साहब से निवेदन करूँ कि वे मेरी वास्तविक रिपोर्ट के आधार पर अपनी फाइनल रिपोर्ट में बदलाव कर लेते तो नियमित विद्यार्थियों के साथ अन्याय न होता और विभागाध्यक्ष प्रोफेसर रस्तोगीजी भी विद्यार्थियों के कोपभाजन न बनते। फिर लगा कि कहीं यह सबकुछ जानबूझकर तो राय साहब ने नहीं किया? अंतत: मैंने चुप रहना ही उचित समझा।

दूसरे दिन समाचार-पत्र के माध्यम से पता चला कि विद्यार्थियों ने रस्तोगी साहब के कपड़े फाड़कर उनके मुँह पर कालिख मल दी। इस बात से आहत होकर रस्तोगीजी ने विभागाध्यक्ष के पद से इस्तीफा दे दिया। वरिष्ठता क्रम के आधार पर प्रोफेसर भानुप्रताप सिंह राय नए विभागाध्यक्ष होंगे। साथ ही साथ कुलपति महोदय ने छात्रों की उपस्थिति रिपोर्ट पर नए सिरे से विचार करने का आदेश भी नए विभागाध्यक्ष को दिया है। खबर पढ़कर मैंने विभाग न जाने का निर्णय किया। वह पूरा दिन मैंने केंद्रीय पुस्तकालय में बिताया। लेकिन शाम को गुलदस्ते और मिठाई के साथ राय साहब के घर जाना नहीं भूला। राय साहब ने भी बड़ी गर्मजोशी से स्वागत किया। मेरे कान में धीरे से बोले, "समझ लो, तुम्हीं विभागाध्यक्ष हो।'' और फिर वही कुटिल मुसकान।

इस बात को दो-तीन महीने बीत चुके थे। एक दिन अचानक पता चला कि किसी शोध छात्रा ने राय साहब पर यौन-शोषण का आरोप लगाया है। कैंपस में चारों तरफ इसी बात की चर्चा हो रही थी। राय साहब पर कठोर अनुशासनात्मक काररवाई की आशंका थी, मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ। उस छात्रा ने न केवल अपना आरोप वापस लिया बल्कि विभाग के कुछ लोगों द्वारा उसे बरगलाने और राय साहब पर दोषारोपण के लिए प्रेरित करने का आरोप भी लगाया। पूरे विभाग में फिर हड़कंप मचा। जिन प्राध्यापकों पर आरोप लगे, वे विभाग नहीं आ रहे थे। उनका सारा समय केंद्रीय कार्यालय और कुलपति कार्यालय के चक्कर काटने में ही बीत रहा था। यहाँ राय साहब विभाग में अपनी पकड़ मजबूत करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ रहे थे। फुरसत में कुछ शोध छात्राओं से अपने चैंबर में लोकगीत सुनना उनका पुराना शौक था, जो आज भी जारी था। उस दिन जब राय साहब मिले तो मुसकराते हुए गालिब का एक शेर पढ़े—

थी खबर गर्म कि 'गालिब' के उड़ेंगे पुरजे
देखने हम भी गए थे प तमाशा न हुआ।

फिर उसी चिर-परिचित कुटिल मुसकान के साथ मेरे कंधे पर हाथ रखकर बोले, "तुम लोग मेरे साथ रहना बस। सब को देख लूँगा।''

मैंने हाथ जोड़कर कहा, "आप आदेश दें, हम सब तैयार हैं।"

राय साहब ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "बस यही उम्मीद थी। तुम तो छोटे भाई हो।'' इतना कहकर वे आगे बढ़ गए। मैं यह नहीं समझ पा रहा था कि मुझसे उन्हें इतनी आत्मीयता क्यों है? मेरे जैसा कच्चा खिलाड़ी उनके क्या काम आ सकता था? फिर क्या सच में अगर वे कोई उल्टा सीधा आदेश देंगे तो मैं उसे करूँगा?

उस दिन रात करीब साढ़े दस बजे राय साहब का फोन आया। मैंने फोन उठाया तो सीधा सवाल, "कौन सा अखबार पढ़ते हो सुबह?" मैं कुछ समझ नहीं पाया, फिर भी बोला, "जी 'दैनिक जागरण' और 'टाइम्स ऑफ इंडिया।' कुछ खास?"

"कल का दैनिक जागरण ध्यान से देख लेना। सब समझ जाओगे। शुभ रात्रि।" इतना कहकर राय साहब ने फोन काट दिया। मेरी नींद हराम कर के शुभ रात्रि बोल गए थे।

समझ में नहीं आ रहा था कि कल क्या होगा अखबार में। कहीं मेरे ही खिलाफ! या कोई और, विश्वविद्यालय की कथा तो हरि अनंत हरि कथा अनंता जैसी है। फिर राय साहब की षड्यंत्रकारी कुटिल बुद्धि, क्या खिचड़ी पका रही थी, समझना मुश्किल था। फिर राय साहब ही क्यों, विभाग में कौन किससे कम है? मैं खुद क्या होते जा रहा हूँ? यही सब सोचते-सोचते कब नींद आ गई, पता ही नहीं चला।

आँख खुली तो सुबह के साढ़े नौ बज रहे थे। रविवार था, इसलिए कोई जल्दी नहीं थी। तभी अखबार की याद आई और आँखों पर चश्मा चढ़ाते हुए मैं अखबार की तरफ लपका। पूरा अखबार सरसरी निगाह से देख डाला पर कोई विशेष खबर नहीं दिखी। दुबारा ध्यान से देखा तो एक तस्वीर पर नजर रुक गई। उस तस्वीर के साथ जो लिखा था, वह पढ़कर तन बदन में आग लग गई। मन तो किया कि राय साहब को फोन कर एक हजार गाली दूँ, लेकिन आगे-पीछे का बहुत कुछ सोचकर चुप रह गया। मन कसैला हो गया था और लग रहा था कि गले में कुछ अटक सा गया है। मैं अखबार मेज पर रख कॉफी बनाने किचन में चला गया। आदमी कितना नीचे गिर सकता है? वह भी एक पढ़ा-लिखा प्रोफेसर? क्या पढ़े-लिखे लोगों का ऐसा ही चरित्र होता है? इन्हीं सब सवालों से जूझते हुए काफी उबाली और पीने बैठ गया। पैसे कमाने का कोई दूसरा विकल्प मेरे पास होता तो इस प्राध्यापिकी को लात मार देता।

अखबार में विभाग के प्रोफेसर सर्वदानंद बिष्टजी की तस्वीर छपी थी। सर्वदानंदजी लैक्चर हॉल के लान में अपनी कार में बैठे हुए लैक्चर दे रहे हैं और नीचे लान की हरी घास पर बीस-तीस विद्यार्थी उन्हें या तो सुन रहे हैं या नोट्स लिख रहे हैं। तस्वीर के साथ लिखा था, "लाखों रुपए वेतन पाने वाले प्रोफेसर का शाही अंदाज, जनाब कार से उतरना भी नहीं चाहते।" खबर इतनी ही थी, लेकिन बिष्टजी जैसे कर्मठ और समर्पित प्राध्यापक को बदनाम करने के लिए पर्याप्त थी। ऐसा नहीं था कि वह तस्वीर झूठी थी, लेकिन उस तस्वीर को देखकर जो बयान दिया जा रहा था, वह पूरी तरह मिथ्या और दुर्भावना पूर्ण था। मैं समझ गया कि यह तस्वीर जानबूझकर छपवाई गई है। बिष्टजी की छवि धूमिल होने से कई समितियों से उनका नाम निकलवाने में राय साहब को आसानी होगी। फिर बिष्टजी जैसे सिद्धांतवादी और सच्चे लोगों की सिस्टम में जरूरत भी किसे थी? वे कइयों की आँख की किरकिरी बने हुए थे। उन्हें बदनाम करने का यह एक ओछा प्रयास था।

सच्चाई यह थी कि बिष्टजी के घुटनों की सर्जरी हुई थी। पिछले तीन महीने से वे मेडिकल लीव पर थे। अभी दो महीने और उनकी छुट्टियाँ बाकी हैं, लेकिन विद्यार्थियों के अनुरोध एवं उनकी परीक्षा को देखते हुए वे लैक्चर लेने आने लगे। वे अभी देर तक खड़े नहीं रह सकते थे और सीढ़ियाँ चढ़ना उतरना मना था। ऐसे में विद्यार्थियों ने ही कहा कि वे लान में बैठकर लैक्चर सुन लेंगे। फरवरी की उस गुलाबी सर्दी में, सुबह की गुनगुनी धूप के बीच लान में लैक्चर होते रहे हैं। बिष्टजी और विद्यार्थियों को क्या पता था कि इस बात को इतने गलत तरीके से प्रचारित-प्रसारित किया जाएगा। लोग चटकारे लेकर इस बात की चर्चा करेंगे, लेकिन सच-सच को अपने हाल पर सिर्फ तरस आएगा। स्वयं बिष्टजी कितना आहत हुए होंगे? क्या इस घटना के बाद कोई प्राध्यापक नियमों से परे जाकर विद्यार्थियों के हित की सोचेगा? ये कुछ ऐसे सवाल थे, जो व्यवस्था के आगे दम तोड़ देते हैं और तोड़ते रहेंगे। नाम, जगह और घटनाएँ बदल जाएँगी, लेकिन सवाल वही रहेंगे, क्योंकि व्यवस्था इन सवालों के लिए कम ही बदलती है।

दिन ऐसे ही बीत रहे थे। जटिलता और कुटिलता के ऊपर सरलता का मुखौटा चिपकाए हम भी परिपक्व हो रहे थे। लेकिन विभाग से जुड़ने वाली नई पौध को इन मौसमों में ढलने में समय लगता। विभाग में नव नियुक्त रंजन झा उत्साही प्राध्यापक थे। विद्यार्थियों में लोकप्रिय। एक बार मुझे याद है कि स्टाफ मीटिंग में शरमाते हुए खड़े हुए और राय साहब से बोले "सर, मैं कुछ बताना चाहता हूँ। कुछ ऐसा, जिसे आप सभी पसंद करेंगे।''

राय साहब बोले, "बिल्कुल रंजनजी, करिए मनोरंजन। मेरा मतलब है बताइए।"

राय साहब ने हँसी की लेकिन निरंजन अपने झोले से कुछ कागज निकाल शुरू हो गए। "मैं आप सभी के साथ अपनी एक खुशी साझा करना चाहता हूँ। मेरे हाथों में उन बच्चों के ये फीड बैक फॉर्म हैं, जिन्हें मैं पढ़ा रहा हूँ। इतना सुंदर और भावुक कर देने वाला फीड बैक मुझे इसके पहले कभी नहीं मिला। एक शिक्षक के नाते यही मेरी पूँजी है। अगर बच्चे हमसे संतुष्ट रहेंगे, तभी हमारे यहाँ होने की कोई सार्थकता है।"

निरंजन भावुकता में बोले जा रहे थे कि राय साहब ने बीच में ही टोकते हुए बोला, "बहुत बधाई। हम समझ गए सब। आप बहुत बढ़िया पढ़ाते हैं। आप से एक अनुरोध है कि आप मेरी भी एक क्लास पढ़ाना शुरू कर देते तो अच्छा होता। बच्चे हमसे बहुत दुखी रहते हैं, विभाग के दूसरे मसलों में फँसकर हम नियमित क्लास ही नहीं ले पाते। आप को कोई आपत्ति तो नहीं?" राय साहब ने इस प्रश्न के साथ एक कुटिल मुसकान निरंजन की तरफ फेंकी। निरंजन अभी नया था, वह राय साहब की चाल समझ नहीं पाया और उसने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

इतने में वरिष्ठ, बदनाम और बेहया टाईप के प्रोफेसर राकेश कुमार टाँग-पर-टाँग भिड़ाए बोले, "अरे राय साहब, हमारी तो रोज ही कंपलेन रहती है। रिटायरमेंट को दो साल बचा है, काम-काज में मन भी नहीं लगता। ऐसा करें मेरी भी कुछ कक्षाएँ निरंजनजी को दे दीजिए। काम

करने वालों को काम की कमी नहीं पड़नी चाहिए। वैसे भी अंग्रेजी में कहा गया है कि रिवॉर्ड फॉर गुड वर्क इज मोर वर्क।" उनकी इस बात पर सब की हँसी फूट पड़ी। बेचारा निरंजन समझ नहीं पा रहा था कि कैसे रिएक्ट करे। लेकिन उस दिन के बाद निरंजन ने कभी अपने अच्छे फीड बैक की कोई चर्चा नहीं की, क्योंकि वह समझ चुका था कि इसका परिणाम बुरा ही होगा। अच्छे फीड बैक वालों के साथ इस विभाग में यही होता रहा। इस विभाग में हुए सारे औचक निरीक्षण सिर्फ छुछिया फायर निकले। किसी का कुछ नहीं बिगड़ा। राय साहब के निजाम को समझना मुश्किल था।

चपरासी बटेश्वर राय साहब का मुँह लगा था। एक बार प्रोफेसर अस्थाना ने शिकायत की कि सुबह बटेश्वर समय पर नहीं आता, स्टाफ और क्लास-रूम बंद रहते हैं। विद्यार्थियों को बाहर इंतजार करते खड़ा रहना पड़ता है। प्रोफेसर अस्थाना से राय साहब की पुरानी रंजिश थी, अत: बटेश्वर को बुलाकर राय साहब बोले, "स्टाफ रूम और अस्थानाजी के क्लास रूम की एक चाभी इन्हें अभी दे दो, ताकि महराज समय पर खोलकर बैठें, एक दम तसल्ली से। समझे?" और राय साहब खिलखिला पड़े। अस्थानाजी गुस्से में लाल हो गए और तुरंत वहाँ से चले गए। उनके जाने के बाद बटेश्वर और राय साहब खूब देर तक ठहाके लगाते रहे।

विभागाध्यक्ष के रूप में अपना कार्यकाल पूरा करने के बाद राय साहब अब डीन बन गए हैं। विश्वविद्यालय उनके प्रशासनिक कार्यों से खुश है। जो उनसे खुश नहीं, दोष उसी का है। वह सिस्टम में फिट नहीं बैठा तो ठोक-पीटकर बैठा दिया जाएगा। पूरे देश में कमोबेश यही हो रहा है। सवाल यह है कि क्या यही होता रहेगा? अब मुझे नहीं पता, फिलहाल तो हम एक गुलदस्ते और ब्लैक डॉग की बोतल के साथ राय साहब को मुबारकबाद देने जा रहे हैं। देश के तमाम विश्वविद्यालयों-महाविद्यालयों में अँधेरे की साख बड़ी मजबूत है। यहाँ के कई अनखुले तहखानों में संघर्ष के तेवर कैद हैं। यहाँ दूज का चाँद पीला पड़ जाता है। फिर वह सहमा हुआ पीला चेहरा एक प्रश्न में तब्दील हो जाता है। यहाँ नौकरी करना खुद से एक गहरी और गंभीर शिकायत है, जिसे लगातार अनसुना कर रहा हूँ। एक सार्थक जीवन की अभिलाषा एक थका हुआ इरादा मात्र बनकर रह गया है। इस 'विभागीय' रंग और गंध ने मेरे भी कपड़े जाने कब के उतार लिये।

के.एम. अग्रवाल कॉलेज,
कल्याण-वेस्ट, थाने-४२१३०१ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९०८२५५६६८२
manishmuntazir@gmail.com

कितने रूप दहेज के

लघुकथा

● आर.बी. भंडारकर

विवाह योग्य बेटी के लिए वर तो ढूढ़ना ही है। कार्य की व्यस्तता, छुट्टियाँ मिलने की मुश्किल; पर आज निकल ही पड़े हैं वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक इंद्रेश्वर एक मंजिल की ओर।

पहुँचते ही लड़के के पिता बुद्धलाल बाहर ही मिल गए। इंद्रेश्वर ने अपना परिचय दिया तो उन्होंने जोर से सलाम ठोका, फिर 'जय हिंद सर' किया।

"अरे नहीं भाई, व्यक्तिगत भेंट में सरकारी प्रोटोकॉल आवश्यक नहीं, बुद्धलालजी।"

"जी सर! आदेश?"

"नहीं भाई, आदेश नहीं।···दरअसल बात यह है कि मेरी बेटी ने इसी वर्ष कंप्यूटर से बी.ई. किया है। मेरे एक रिश्तेदार ने बताया है कि आपका बेटा एम.बी.बी.एस. करके अब जूनियर रेजिडेंट है; मैं उसी सिलसिले में आया हूँ।"

बुद्धलाल की मुखमुद्रा बदल गई,"जी तो कहिए?"

"तो आप क्या उपयुक्त प्रस्ताव मिलने पर अपने बालक की शादी करना चाहते हैं?"

"बिल्कुल करना चाहता हूँ।"

"लड़की मेडिकल क्षेत्र की ही चाहिए या फिर कोई भी उपयुक्त लड़की?"

"लड़की का मेडिकल लाइन का होना जरूरी नहीं। घर-परिवार अच्छा हो, लड़की सुंदर और संस्कारवान होनी चाहिए।"

"मुझे बताया गया है कि लड़का जे.आर. के बाद पी.जी. की पढ़ाई करना चाहता है।"

"सही सुना है; वह इसके बाद पी.जी. ही करेगा।"

"बुरा न मानें तो एक बात पूछूँ?"

"जी कहिए?"

"लड़का भी पढ़ाई जारी रखना चाहता है, आप भी लड़के की पढ़ाई जारी रखने के पक्ष में हैं; तो अभी उसकी शादी क्यों कर रहे हैं, पहले पढ़ाई पूरी हो जाने दें।"

"देखिए साहब! मैं सिपाही आदमी। कब तक खर्च उठाऊँगा। शादी करके जिम्मेदारी से मुक्त होना चाहता हूँ। इसके बाद वह (पुत्र) जाने और शादी करने वाला (लड़की का पिता) जाने कि वह पीजी कैसे करेगा?"

अब आश्चर्यचकित इंद्रेश्वर बुद्धलाल का मुँह ताक रहे थे।

सी-९, स्टार होम्स, रोहितनगर, फेस-२,
भोपाल-४६२०३९ (म.प्र.)

धूम मची धूम, होली की धूम

• विष्णु भट्ट

धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम।
तन-मन रंग लो साथियो चारों ओर धूम,
झूम-झूम के नाचो तुम बस धरती को चूम॥
धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में धूम।
नाच-नाचकर साथियों होली गीत गाओ,
सब मिलकर होली पर रंगोली मिठाइयाँ खाओ।
एकता और प्यार जताने का यह शुभ दिन,
कहीं तुमसे न कोई ले इसे छीन।
तो गाओ सब एक साथ मिल,
धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम॥
ऊँच-नीच, अमीर-गरीब का भेद-भाव,
सब भूल भुलाकर एक साथ मिलकर गाओ।
धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम।

राजू आओ, अहमद आओ, सुरिंदर और डेविड आओ,
रंग-बिरंगी रंगों से भर पिचकारियाँ लाओ।
कोई लाओ अबीर और कोई लाओ गुलाल,
सबके चेहरों पर मल डालो रहे न कोई मलाल।
धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियों मस्ती में झूम।
राजू उठाए चंग हाथ में अहमद उठाए मंजीरा,
सुरिंदर उठाए डफली हाथ में डेविड लेले कंजीरा।
नाच-नाचकर होली के गीत गाओ,
धूम मचाओ होली के हुड़दग में खो जाओ।

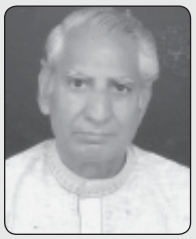

सुपरिचित लेखक। अब तक हिंदी में तीन कृतियाँ तथा राजस्थानी व हिंदी में बाल-साहित्य की सात पुस्तकों के अलावा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'कर्तव्य रो पुकार' राजस्थानी भाषा में बाल-कहानियों की पुस्तक पर 'पं. जवाहरलाल नेहरू बाल साहित्य पुरस्कार'; राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति बीकानेर से पुरस्कृत।

धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम।
झूम-झूमकर होली खेलो रंगों में रंग जाओ,
रंग-बिरंगी मिठाईयाँ खाकर होली पर्व मनाओ।
याद यह रखना कोई कष्ट न हो किसी को,
गर रंगों से ही खेलोगे होली तो खुशी होगी सबको।
धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम।
वह भी सुनी किसी का मन नहीं दुखाना,
किसी बात का बतंगड़ न बनाना।
कोई बहाना न बनाना, समझाना,
प्रेम से होली खेलो सबको खुश रखना।
इसलिए तो धूम मची धूम होली की धूम,
होली खेलो रे साथियो मस्ती में झूम।

साअ

म.न. १, म. ९,
गायत्री नगर, हिरनमगरी, सेक्टर-५,
उदयपुर-३१३००२ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४६१४०३१६९

महिला-साहित्य का प्रस्थान बिंदु : ऋग्वेद की ऋषिकाएँ

● जीनत आबेदीन

साहित्य-सृजन सतत चलने वाली प्रक्रिया है। जब से मनुष्य-जाति में अपनी अस्तित्व चेतना जागी, तब से ही साहित्य का सृजन होने लगा। नि:संदेह प्रारंभ में यह साहित्य चित्रित अथवा वाचिक रूप में रहा। वाचिक साहित्य को पीढ़ी दर पीढ़ी ज्ञान के स्थानांतरण द्वारा तथा चित्रित साहित्य को संगृहीत कर जीवित रखा गया। साहित्य मनुष्य जाति के लिए पितामह के समान है, जो न केवल उसे उसकी जड़ों से जोड़ता है बल्कि भविष्य के लिए आवश्यक ज्ञान भी प्रदान करता है। किसी भी राष्ट्र का श्रेष्ठ साहित्य उस राष्ट्र के नागरिकों को गौरवान्वित करता है, भारत के संदर्भ में यह तथ्य और भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि विश्व की सर्वाधिक प्राचीन भाषा होने का गौरव भारत की 'संस्कृत' भाषा को है, इसी के साथ 'वेदों' को मानव सभ्यता के सबसे प्राचीन लिखित दस्तावेज होने का गौरव प्राप्त है। 'ऋग्वेद' संसार का प्राचीनतम साहित्यिक ग्रंथ है, जो पद्यात्मक रूप में है।

सामान्य भाषा में वेद का अर्थ होता है 'ज्ञान'। वेदों में धर्म के साथ-साथ पुरातन ज्ञान विज्ञान का अथाह भंडार संगृहीत है। वेदों को 'श्रुति' भी कहा जाता है, इसके दो कारण है प्रथम तो प्राचीन ऋषियों ने वेदों का ज्ञान सुनकर प्राप्त किया था, कहा जाता है कि स्वयं 'ब्रह्मा' ने ध्यानमग्न ऋषियों को उनके अंतर्मन में वेदों का ज्ञान सुनाया था अर्थात् 'श्रुति' या 'वेद' ईश्वर रचित है। दूसरा कारण यह है कि वेद पहले लिखित नहीं थे, इनको गुरु अपने शिष्यों को सुनाकर याद करवा देते थे और यह परंपरा चलती रहती थी, इनका संकलन पांडुलिपियों के रूप में बहुत बाद में किया गया। वेदों की २८ हजार पांडुलिपियाँ भारत में पुणे के 'भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट' में संगृहीत हैं। यूनेस्को ने ऋग्वेद की १८०० से १५०० ई. पू. की लगभग ३० पांडुलिपियों को सांस्कृतिक धरोहरों की सूची में शामिल किया है। यह तथ्य ऋग्वेद की महत्ता को सिद्ध करता है। अन्य तीन वेदों की रचना भी ऋग्वेद से ही हुई है।

ऋग्वेद में १० मंडल (अध्याय), १०२८ सूक्त (वैदिक संस्कृत भजन) तथा लगभग १०६०० छंद है। ऋग्वेद कई देवी-देवताओं को

शोधार्थी। संप्रति मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर में हिंदी विषय से शोध-कार्य में रत। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कई आलेख प्रकाशित।

समर्पित है, इनमें सर्वप्रमुख है 'इंद्र देवता'। परमात्मा या ब्रह्मा द्वारा प्रकट मंत्रों का ऋषियों ने अपने अंत:करण में दर्शन भी प्राप्त किया, इससे इन ऋषियों को 'मंत्रदृष्टा' भी कहा गया। याज्ञवल्क्य ने भी ऋषि शब्द का अर्थ 'मंत्रदृष्टा' ही माना है—

येन य ऋषिणा दृष्टो मन्त्र: सिद्धिच तेन वै।
मन्त्रेण तस्य सम्प्रोक्त ऋषिभावस्तदात्मक: ॥

वैदिककाल में हमें वेदों के रूप में अथाह ज्ञान की प्राप्ति तो हुई ही साथ ही इस काल की एक अन्य विशेषता यह भी है कि हम इस काल को नारी के विकास का 'स्वर्ण-काल' भी कह सकते है। इस काल में ऋषियों के साथ कई ऋषिकाएँ भी हुई, जिन्होंने गहन तपस्या द्वारा मंत्रों का ज्ञान प्राप्त किया। इस काल में स्त्री-शिक्षा के प्रति जागरूकता ही नहीं रही बल्कि विदुषी नारियों का समाज में महत्त्वपूर्ण एवं प्रतिष्ठित स्थान रहा। पुरुषों के समान ही वेद मंत्रों का साक्षात्कार एवं तदनुसार आचरण करने वाली स्त्रियाँ 'ऋषिकाएँ' कहलाती थीं। वेद-मंत्रों के साक्षात्कार करने वाले कुल पाँच सौ पच्चीस (५२५) ऋषि हैं, जिनमें ऋषिकाओं की संख्या मात्र उनतीस (२९) है, परंतु इनके द्वारा दिए गए मंत्र अति महत्त्वपूर्ण माने गए हैं।

ध्यातव्य है कि 'ऋषिका' शब्द का प्रयोग परवर्ती है। ऋग्वेद में स्त्री-पुरुष दोनों के लिए ही 'ऋषि' शब्द का प्रयोग किया गया है। यह स्त्री-पुरुष समानता का सूचक कहा जा सकता है, जो वैदिककाल की बहुत बड़ी विशेषता रही। ऋग्वेद-काल में स्त्रियों की स्थिति काफी सुदृढ़ थी, यहाँ तक कि कोई पुरुष विवाह से पूर्व किसी भी प्रकार का याज्ञिक अनुष्ठान संपन्न

नहीं कर सकता था। इस काल में विद्यारंभ से पूर्व पुत्र की भाँति पुत्री का भी उपनयन संस्कार किया जाता था तथा विद्या-अध्ययन के दौरान ब्रह्मचर्य का पालन अनिवार्य था। स्त्री-पुरुष की सह शिक्षा पद्धति के उदाहरण भी मिलते हैं। नि:संदेह इस युग के समाज में काफी खुलापन एवं समानता की भावना रही थी। ऋग्वैदिक युग में छात्राओं के दो वर्ग थे, सयोवधू—यह विवाह के पूर्व तक ज्ञान प्राप्त करती थी तथा ब्रह्मवादिनी—यह अपना संपूर्ण जीवन वैदिक ज्ञान प्राप्ति हेतु समर्पित करती थी।

ऋग्वेद-काल में स्त्रियाँ भी यज्ञ करती थी, ऐसे भी कई उदाहरण मिलते हैं। ऋषिका शची पौलोमी ने अपने सूक्त में एक स्थान पर कहा है कि "जिस यज्ञ से मेरे स्वामी इंद्रदेव समर्थ और जगत् में विख्यात हुए हैं, देवों के निमित्त वही यज्ञ अनुष्ठान मैंने भी किया है।"

ऋग्वेद में कई ऋषिकाओं का वर्णन है, इन ऋषिकाओं ने अपने तप और बुद्धिमत्ता से तीनों लोकों को पराजित करते हुए 'स्त्री-शक्ति' को नए आयाम प्रदान किए हैं। ऋषिकाओं के मंत्रों में जीवन एवं जगत् के लिए आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान मिलता है, तो कहीं-कहीं यह सृष्टि से जुड़े ऐसे गहन रहस्यों को परत दर परत खोलती हुई नजर आती हैं कि आधुनिक विज्ञान भी ठगा सा दिखाई देता है। आज हम कई वैज्ञानिक-खगोलीय उपलब्धियों की बात करते हैं, परंतु आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व हुए इन वैदिक ऋषि-ऋषिकाओं के मंत्रों में यह ज्ञान पहले से समाहित है।

सूक्तों एवं मंत्रों में ऋषिकाओं का व्यावहारिक आलोचनात्मक रूप दिखाई देती है। आलोचना जीवन और समाज की। किंही स्थलों पर यह रोमशा के रूप में आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाने वाले शासक पति को ललकारती हुई नजर आती हैं, कहीं शची पौलोमी के रूप में अपने ज्ञान और बुद्धिमत्ता पर गर्वित होकर 'स्त्री सशक्तीकरण' की मिसाल प्रस्तुत करती हैं, कहीं ब्रह्मजाया जुहू के रूप में देवताओं के गुरु को ज्ञान देती हैं, कहीं लोपामुद्रा के रूप में पति-पत्नी की समानता का आह्वान करती हैं, तो कहीं मुद्गल पत्नी (इंद्रसेना नालायनी) के रूप में स्वयं रणक्षेत्र में शत्रुओं पर टूट पड़ती हैं आदि-आदि। इस प्रकार आलोचना के कई-कई रूप हमें इन ऋषिकाओं के मंत्रों में उपलब्ध हो जाते हैं। इन ऋषिकाओं के संक्षिप्त वर्णन से यह तथ्य और भी स्पष्ट होगा।

अदिति ऋषिका चारों वेदों की प्रकांड विदुषी रही। इनके मंत्र ऋग्वेद के चौथे मंडल में वर्णित हैं। सातवें मंत्र में इंद्र का उल्लेख अदिति के पुत्र के रूप में किया गया है। ऋषिका अदिति ने अपने पुत्र इंद्र को वेदों एवं शास्त्रों का ज्ञान इतना उच्च कोटि का दिया कि किसी से भी इंद्र की बराबरी संभव न हो सकी और इंद्र तीनों लोकों के अधिपति बने रहे। ब्रह्मजाया जुहू (दसवां मंडल, १०९) ब्रह्मा की पुत्री एवं बृहस्पति की पत्नी मानी जाती है। ब्रह्मजाया जुहू के सामाजिक विचार अपने युग से कई आगे के तथा समाज का पथ-प्रदर्शन करने वाले रहे है, उदाहरणार्थ—समान गुण, कर्म और स्वभाव वालों का ही आपस में विवाह होना चाहिए। विवाह से पूर्व वर-कन्या, दोनों एक-दूसरे की स्वयं देख-परखकर लें। विवाह के बाद पत्नी को छोड़ना या दु:ख देना अनैतिक है। सुमन राजे ने बृहस्पति द्वारा जुहू के परित्याग एवं देवताओं की मध्यस्थता में दोनों के पुन: मिलन का उल्लेख किया है। बृहस्पति देवताओं के गुरु माने जाते हैं, परंतु इन्हें यज्ञ-विज्ञान का रहस्य अपनी पत्नी जुहू से ही प्राप्त हुआ था, यह तथ्य नारी शिक्षा, सामर्थ्य एवं सशक्तीकरण का प्रमुख उदाहरण है।

ऋषिका उर्वशी (दसवाँ मंडल, ९५) अप्सरा थी, इन्होंने ऋषित्व ही नहीं बल्कि देवत्व भी प्राप्त किया। अपाला (आठवाँ मंडल, ९१) एवं घोषा (दसवाँ मंडल, ३९-४०) कुष्ठ रोग से पीड़ित थी, परंतु अपनी साधना से स्वास्थ्य लाभ एवं ऋषित्व पाया। इसी प्रकार ऋषिका रोमशा (प्रथम मंडल, १२६) के सारे शरीर में अत्यंत रोम होने के कारण पति द्वारा त्यागी गई, पर उन्होंने पराजय नहीं मानी तथा वेद एवं शास्त्रों की प्रकांड विदुषी बनी, इस प्रकार रोमशा ने अपने नाम का अर्थ ही परिवर्तित कर दिया तथा रोमशा का अर्थ 'वेदों एवं शास्त्रों की अनेक शाखाएँ' माना जाने लगा।

लोपामुद्रा प्रथम मंडल की ऋषिका है। लोपामुद्रा विदर्भ नरेश राजसिंह की पुत्री थी, इनका विवाह परिस्थितिवश अगस्त्य ऋषि से हुआ था, राजकन्या होते हुए भी विवाह पश्चात् लोपामुद्रा ने ऋषियों के समान ही जीवन यापन किया। इनके विचार भी आधुनिकता से ओत-प्रोत रहे, इन्होंने पति-पत्नी की समानता पर बल दिया तथा यह सभी प्राणियों को एक ही ईश्वर की संतान मानती थी, इस कारण 'दशराज्ञ युद्ध' में घायल असुरों की भी इन्होंने शुश्रूषा की, इसे हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के मंत्र का प्रारंभ कह सकते है, परंतु इससे आर्य शुद्धता के पक्षधरों का विरोध लोपामुद्रा को सहना पड़ा। लोपामुद्रा श्री विद्या के हादि-संप्रदाय की प्रवर्तिका मानी जाती हैं।

ऋषिका शची पौलोमी (दसवाँ मंडल, १५९) ने असुर राजा पुलोम की पुत्री होते हुए भी अपने तप से 'इंद्राणी' होने का गौरव प्राप्त किया। इंद्र पर उनके तप और ज्ञान का अत्यधिक प्रभाव होने का बखान स्वयं शची ने अपने सूक्तों में विभिन्न स्थलों पर किया है। इंद्र और नहष युद्ध की प्रसिद्ध कथा में शची का सामर्थ्य एवं उदात्त चरित्र उभरकर सामने आता है।

ऋषिका उर्वशी (दसवाँ मंडल, ९५) अप्सरा थी, इन्होंने ऋषित्व ही नहीं बल्कि देवत्व भी प्राप्त किया। अपाला (आठवाँ मंडल, ९१) एवं घोषा (दसवाँ मंडल, ३९-४०) कुष्ठ रोग से पीड़ित थी, परंतु अपनी

साधना से स्वास्थ्य लाभ एवं ऋषित्व पाया। इसी प्रकार ऋषिका रोमशा (प्रथम मंडल, १२६) के सारे शरीर में अत्यंत रोम होने के कारण पति द्वारा त्यागी गई, पर उन्होंने पराजय नहीं मानी तथा वेद एवं शास्त्रों की प्रकांड विदुषी बनी, इस प्रकार रोमशा ने अपने नाम का अर्थ ही परिवर्तित कर दिया तथा रोमशा का अर्थ 'वेदों एवं शास्त्रों की अनेक शाखाएँ' माना जाने लगा। एक स्थान पर यह अपने पति द्वारा, अपने सामर्थ्य को कम आंकने पर उसे ललकारती हुई कहती है—"हे पति राजन्! जैसे पृथ्वी राज्यधारण एवं रक्षा करने वाली होती है, वैसे ही मैं प्रशंसित रोमोंवाली हूँ। मेरे सभी गुणों को विचारो। मेरे कामों को अपने सामने छोटा न मानें।" यह कथन संभवत: स्त्री-आत्मसम्मान का प्रथम लिखित प्रमाण है।

ऋषिका मुद्गलपत्नी (दसवाँ मंडल, १०२) का अन्य ग्रंथों में नाम 'इंद्रसेना नालायनी' भी मिलता है। यह बड़ी पराक्रमी थी। षड्गुरु शिष्य एवं यास्क के अनुसार चोरों द्वारा इनकी समस्त गायें चुराए जाने पर इन्होंने स्वयं एक बैल को गाड़ी में जोतकर चोरों का पीछा किया तथा चोरों से युद्धकर गायों को छुड़ाया। पिशेल के अनुसार रथ की एक दौड़ में अपनी पत्नी की सहायता से मुद्गल विजयी हुआ था। इस प्रकार स्थान-स्थान पर मुद्गल पत्नी अर्थात् इंद्रसेना के शौर्य एवं पराक्रम का बखान मिलता है। ऋषिका दक्षिणा प्राजापत्या (दसवाँ मंडल, १०७) के सूक्तों में दान-दक्षिणा का महत्त्व बताया गया है। ऋषिका सूर्या सावित्री के सूक्तों में विवाह-बंधन की गरिमामयी प्रस्तुति है, इस कारण सूर्या की कुछ ऋचाएँ आज भी हिंदू विवाह-संस्कार के अंतर्गत मंत्र-रूप में अनिवार्यत: पढ़ी जाती है। ऋषिका श्रद्धा कामायनी (दसवाँ मंडल, १५१) कामदेव की पुत्री होने से 'कामायनी' कहलाई। जयशंकर प्रसाद ने इन्हें हिंदी साहित्य में प्रसिद्धि एवं लोकप्रियता दिलाई। ऋषिका श्रद्धा जीवन मूल्यों की बात करती है तथा श्रद्धा-भाव को सभी भावों में सबसे उच्च कोटि का मानती है।

ऋषिका सर्पराज्ञी (दसवाँ मंडल, १८९) के सूक्त साहित्य ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण माने गए है, इस कारण चारों वेदों में इनके सूक्तों को स्थान दिया गया है। इनकी भौगोलिक मान्यताएँ, आधुनिक-वैज्ञानिक तथ्यों की पूर्वगामी प्रतीत होती है, यथा—

(क) परमात्मा और उसका प्रतिनिधि सूर्य जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत प्राणी में जीवन, प्रकाश तथा सुख का संचार करते हैं।

(ख) पृथ्वीलोक अपने जल सहित सूर्य की परिक्रमा करता रहता है।

(ग) जीवात्मा जब तक शरीर में आश्रय लिये रहता है, तब तक वाक् आदि इंद्रियाँ दिन के बीस मुहूर्तों में विराजमान रहकर अपना कार्य करती रहती हैं। इस प्रकार ऋषिका सर्पराज्ञी अत्यंत विदुषी महिला थी।

ऋग्वेद-काल की अन्य विदुषी स्त्रियों में मैत्रेयी, गार्गी और उभय भारती की चर्चा करना अत्यावश्यक है, इन्होंने अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के चलते प्रकांड ऋषियों को भी निरुत्तर होने पर विवश किया। मिथिला के शासक सीरध्वज की धर्मसभा में जब ऋषि याज्ञवल्क्य को शास्त्रार्थ में चुनौती देने का साहस किसी में न हुआ, तब गर्ग ऋषि की पुत्री गार्गी ने ऋषि याज्ञवल्क्य को शास्त्रार्थ के लिए आमंत्रित किया और सूक्ष्मतम ज्ञान के प्रश्नों से आक्रांत कर दिया, तब ऋषि याज्ञवल्क्य द्वारा गार्गी को चुप कराने हेतु कहना पड़ा, "हे गार्गी! अब इसके आगे प्रश्न करने पर तुम्हारे सिर के दो टुकड़े होकर भूमि पर गिर जाएँगे। आज भी 'गार्गी' छात्राओं में बुद्धिमत्ता की प्रतीक है।"

इसी प्रकार आठवीं सदी में ब्रह्मचारी संन्यासी शंकराचार्य और आचार्य मंडन मिश्र के मध्य शास्त्रार्थ में निर्णायक की भूमिका के लिए मंडन मिश्र की पत्नी उभय भारती को चुना गया। जब मंडन मिश्र शास्त्रार्थ में पराजित होने लगे, तब उभय भारती ने पत्नी धर्म की रक्षा हेतु निर्णायक पद का त्याग करते हुए शंकराचार्य को शास्त्रार्थ के लिए चुनौती दी तथा अपनी बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुए ब्रह्मचारी संन्यासी शंकराचार्य से कामशास्त्र के प्रश्न किए, जिनका उत्तर शंकराचार्य न दे सके और उत्तर देने हेतु समय की याचना की। विशिष्ट बात यह है कि कामशास्त्र की शिक्षा लेने के लिए शंकराचार्य ने परकाया गमन द्वारा एक विदुषी स्त्री से ही कामशास्त्र की शिक्षा ग्रहण की—ऐसी किंवदंती है।

वैदिककाल में ऐसी विदुषी स्त्रियाँ हुईं, इसका श्रेय उस समय की स्त्री-शिक्षा के लिए की गई व्यवस्थाओं को जाता है। नारी-शिक्षा की यह परंपरा स्मृतिकाल तक बनी रही, परंतु उसके पश्चात् धीरे-धीरे समाज नारी विरोधी रुख अपनाने लगा। स्त्री के लिए शिक्षा और सामाजिक स्वतंत्रता तो दूर की बात, वे वेद जिनकी रचना में स्त्रियों (ऋषिकाओं) की बराबर से भागीदारी रही, उन्हें छुना भी स्त्री के लिए वर्जित कर दिया गया, परंतु आज स्थितियाँ बदल गई हैं, आज स्त्रियाँ न केवल साहित्य-सृजन कर रही हैं बल्कि उनके मूल्यांकन में भी बढ़-चढ़ भागीदारी निभा रही हैं।

निष्कर्षत: जब हम महिला आलोचकों की बात करते हैं तो ऋग्वेद में वर्णित इन ऋषिकाओं को अनदेखा नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऋग्वेदकालीन इन ऋषिकाओं ने नारी सामर्थ्य एवं बुद्धिमत्ता की अद्वितीय मिसाल तो समाज के सामने प्रस्तुत की ही, साथ ही स्थान-स्थान पर वे जीवन एवं जगत् की सच्ची आलोचक भी सिद्ध हुई। अत: महिला आलोचना के सूत्र हमें अंशत: ऋग्वेद-काल से ही मिलने प्रारंभ हो जाते हैं। इन ऋषिकाओं ने महिला आलोचकों के रूप में समाज के अंतर्गत नारी एवं नारीत्व की प्रतिष्ठा स्थापित की। आज ऋग्वेद-काल की ही भाँति कई आधुनिक महिला आलोचक जीवन एवं साहित्य में महिला हितों की रक्षा हेतु कटिबद्ध हैं।

साअ

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
दूरभाष : ९७८५४२०४४४

बाल-कहानी

होली का त्योहार

● हरदेव सिंह धीमान

मंकू बंदर और उसका टोल एक बार जंगल में मौज-मस्ती कर रहा था। अचानक उधर से हाथियों का एक दल अपनी मस्ती में झूमता हुआ आ धमका। सभी जानवर अपना-अपना बचाव करते हुए उनके रास्ते से दूर चले गए, परंतु बंदरों का वह दल अपनी ही धुन पर सवार उन हाथियों को तंग करने लगा। कभी उनकी पीठ पर चढ़ जाता, कभी पूँछ खींचता, कभी कान खींचता, कभी किसी के लंबे दाँतों पर चढ़ जाता। जब वे हाथी उन्हें डराने की कोशिश करते तो वे आसपास खड़े पेड़ों की चोटियों पर जा चढ़ते। इस प्रकार वे हाथियों को तंग करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे थे।

सभी हाथी अपनी मस्ती में निकल रहे थे, परंतु गज्जू नाम के एक हाथी के बच्चे को क्रोध आ गया। उसने आव देखा न ताव, बंदरों के दल के मुखिया मंकू को अपनी सूँड़ से एक हल्का सा झटका दे मारा, जिससे वह दूर छिटक गया। यदि वह झटका थोड़ा भी जोर से लगता तो उसको अपनी जान से हाथ धोना पड़ जाता। किसी तरह बचता-बचाता मंकू हाथियों के दल से दूर चला गया। वह और उसका दल भी उसके पीछे-पीछे वहाँ से भाग निकला।

तब से मंकू बंदर गज्जू हाथी से खार खाए बैठा था और वह उससे बदला लेने की योजना बनाने लगा । वह एक अदना सा बंदर व गज्जू एक भारी-भरकम हाथी। भला वह उससे बदला कैसे ले सकता था? क्योंकि शरीर की बनावट व डीलडौल से बंदर और हाथी का क्या मुकाबला, परंतु बलवान प्रतिद्वंद्वी से तो केवल बुद्धि द्वारा ही बदला दिया जा सकता है। पर जानवर के पास ऐसी बुद्धि कहाँ? मंकू बंदर हमेशा गज्जू हाथी से बदला लेने की सोचता रहता था।

लंबी व ठंडी सर्दी के बाद मौसम बदल गया तथा बसंत का मौसम आ गया था। हर तरफ हरियाली छाने लगी थी। सभी जानवर मौसम बदलने के उपलक्ष्य में कोई मौज-मस्ती वाला उत्सव मनाना चाह रहे थे। मंकू बंदर, गज्जू हाथी, लौमू लोमड़, गिदू सियार, भोलू भालू, चंकी हिरण आदि सभी जानवर होली मनाने की तैयारियों में लग गए। गज्जू हाथी तो खुश था, क्योंकि उसे अपनी सूँड़ से रंग भरकर सभी जानवरों को रंगों से भिगाने का मौका मिल गया था, मंकू बंदर तो मौके की तलाश में था ही। उसने सोचा कि गज्जू हाथी से बदला लेने का यही समय उचित है।

सुपरिचित लेखक। लेखन क्षेत्र में बाल-साहित्य के साथ बाल-कहानियाँ, रचनाएँ निरंतर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। माँ की सीख, आदमी से रक्षा, जंगल में दीवाली आदि अनेक कहानियाँ प्रकाशित।

होली के लिए सभी जानवरों ने जंगल में जहाँ-तहाँ खिले फूलों और पत्तियों को मसलकर कुदरती रंग बनाए, जिससे किसी को कोई नुकसान न हो, परंतु मंकू बंदर गज्जू हाथी से बदला लेना चाहता था और वह ऐसे रंगों की तलाश में था, जिससे गज्जू हाथी को नुकसान पहुँचे । घूमते-घूमते वह जंगल से शहर की ओर निकल गया। शहर में भी होली की तैयारियाँ चल रही थीं। बाजार में जहाँ खाने-पीने की कई प्रकार की चीजें थी, वहीं तरह-तरह के कृत्रिम रंग भी उपलब्ध थे। मंकू बंदर एक ठेले वाले की दुकान के सामने से निकल रहा था। वहाँ पर कई प्रकार के कृत्रिम रंग उपलब्ध थे। मंकू बंदर ने उन्हें खाने की सामग्री समझकर चुपके से रंगों की कुछ थैलियाँ झपट लीं। जैसे ही ठेले वाले ने उसे देखा तो वह भाग खड़ा हुआ। जंगल के नजदीक पहुँचकर वह उसे खाने की वस्तु समझकर खाने के लिए उद्यत हुआ। जैसे ही उसने थैली फाड़ी तो उससे एक तीखी सुगंध वाला पाउडर निकला जो कि कृत्रिम रंग था। उसने उसे अपनी मुट्ठी में भरकर खा लिया। जैसे ही उसने उसे खाया उसके रंग से उसके हाथ मुँह में वह रंग चढ़ गया। थोड़ी देर बाद उसके हाथ व मुँह में खुजली होने लगी, साथ ही उसका जी भी मिचलने लगा। अपनी परेशानी भूलकर वह जो सोचकर खुश हो गया कि इस रंग से रँगे पानी को जब गज्जू हाथी अपनी सूँड़ में भरेगा तो उसको भी हो सकता है, ऐसी ही परेशानी हो। यह सोचकर वह उछलता-कूदता हुआ वह जंगल की ओर भाग गया।

होली के दिन सभी जानवर अपने-अपने प्राकृतिक रंगों के साथ एक खुले स्थान पर आ गए। मंकू बंदर भी अपने कृत्रिम रंगों के साथ उछलता कूदता वहाँ आ पहुँचा। उसने एक बड़ी नांद में वह कृत्रिम रंग घोल लिया और अन्य जानवरों के साथ होली खेलने में मस्त हो गया। तब तक गज्जू हाथी भी अपनी मस्ती में झूमता हुआ आ पहुँचा। गज्जू हाथी को

आया देख मंकू बंदर फूलकर कुप्पा हो गया, क्योंकि उसने उससे बदला जो लेना था। वह अन्य जानवरों के बजाए गज्जू हाथी को अपने कृत्रिम रंग को सूँड़ में भरकर सभी जानवरों पर फेंकने के लिए उकसाता रहा।

गज्जू हाथी भी मंकू बंदर के उकसाने पर कृत्रिम रंगों को अपनी सूँड़ में भर-भरकर अन्य सभी जानवरों पर फेंकने लगा। होली कि मौज-मस्ती में सभी खुश थे, परंतु उनकी यह खुशी अधिक समय तक नहीं टिक सकी। सभी जानवरों के शरीर में एक अजीब सी खुजली होने लगी, जिसके कारण सभी जानवर परेशान होकर इधर-उधर भागने लगे। गज्जू हाथी का तो कहना ही क्या? उसकी सूँड़, आँखें इत्यादि में सूजन आ गई व अत्यधिक खुजली होने लगी। गज्जू हाथी परेशान होकर इधर-उधर भागने लगा। उसे परेशान देखकर मंकू बंदर वहाँ से खिसक गया और दूर जाकर एक बड़े वृक्ष की पत्तियों के बीच छुपकर सारा तमाशा देखता रहा।

सभी जानवर पास के तालाब में जाकर खूब डुबकी लगा-लगाकर नहाने लगे, जिससे उनके शरीर की खुजली धीरे-धीरे कम होती गई और सभी अपने-अपने ठिकाने की ओर चल दिए। गज्जू हाथी की परेशानी दूर होने का नाम नहीं ले रही थी, क्योंकि कृत्रिम रंगों के अत्यधिक प्रयोग के कारण उसके सूँड़, आँख, नाक और कान इत्यादि में कुछ संक्रमण हो गया था, जो तालाब में नहाने या डुबकी लगाने ले दूर नहीं हो सकता था। इसके लिए केवल कुशल चिकित्सा व लंबे समय कि आवश्यकता थी। गज्जू हाथी मारे दर्द के तड़पने लगा, उसकी यह हालत देखकर सभी जानवर चिंतित हो गए। मंकू बंदर तो पहले ही खिसक गया था, इसलिए सभी जानवरों को यह समझते देर नहीं लगी कि यह सब करतूत मंकू बंदर द्वारा चुराकर लाए गए कृत्रिम रंगों के कारण ही हुई है, अन्यथा वह वहाँ से खिसकता ही क्यों?

आखिर मामला वनराज सिंह के पास चला गया। वनराज सिंह ने सारे मामले को ध्यान से सुना व मंकू बंदर को दरबार में हाजिर होने के लिए आदेश दे दिया। मंकू बंदर डर के मारे थरथर काँपता हुआ वनराज सिंह के दरबार में पहुँचा, इससे पहले कि वनराज सिंह उससे कुछ पूछते, मंकू बंदर जोर-जोर से रोने व गिड़गिड़ाने लगा तथा अपने किए पर क्षमा-याचना माँगने लगा। उसके गिड़गिड़ाने व क्षमा-याचना के कारण वनराज सिंह व अन्य जानवरों का दिल पसीज गया, पर उसे उसके किए की सजा देना तो आवश्यक था, अन्यथा वह फिर कभी ऐसी कोई और हरकत कर डालता, जिससे अन्य जानवरों को परेशानी हो सकती।

वनराज सिंह ने उसे चेतावनी देते हुए आदेश दिया कि कस्बों व बाजारों में उपलब्ध बनावटी चीजें मानव द्वारा अपने इस्तेमाल के लिए ही होती हैं। हम जानवरों को कुदरत द्वारा प्रदान की गई खाने-पीने की वस्तुएँ ही प्रयोग करनी चाहिए। आदमी अपनी बुद्धि व विवेक से कुछ भी कर सकता है, विपत्ति आने पर उसका समाधान खोज सकता है, परंतु हम जानवर ऐसा नहीं कर सकते। इसलिए कोई भी जानवर आदमी की नकल न करें और उनके द्वारा प्रयोग किए जाने वाली वस्तुएँ भी प्रयोग न करें, अन्यथा ऐसे भयंकर परिणाम भुगतने पड़ेंगे, साथ ही यह भी आदेश दिया कि जब तक गज्जू हाथी पूरी तरह से ठीक नहीं हो जाए, मंकू बंदर उसकी पूरी सेवा शुश्रूषा करे। वह उसके चारे-पानी का भी प्रबंध करे, अन्यथा उसे भेड़िए या लकड़बग्घे के पास फेंक दिया जाएगा।

मरता क्या नहीं करता, मंकू बंदर रात-दिन गज्जू हाथी की सेवा में जुट गया।

सा अ

बरोली, पत्रालय-दनावली,
तहसील-ननखरी,
जिला-शिमला-१७२०२१ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९८१७२१६३५५

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

दादी बदल गई

● आशा शर्मा

लॉकडाउन के कारण नीनू बहुत परेशान है। शुरू के कुछ दिन तो स्कूल बंद होने की खबर सुनकर उसे बहुत अच्छा लगा था। देर तक सोना, जीभर टीवी देखना और मम्मी के मोबाइल पर गेम खेलना··· पूरा दिन मजे-मजे में बीत जाता था, लेकिन अब वह इन सबसे बोर होने लगा।

आजकल वह न तो टीवी पर कोई कार्टून देखता है और न ही दोस्तों के साथ वीडियो चैट करता है। सारा दिन आलसी सा पड़ा रहता है। एक दिन छत पर से सामने वाले मिश्रा अंकल के बरामदे में एक छोटा सा सफेद पिल्ला घूमते देखा तो नीनू की आँखें चमक उठीं।

"पापा! मिश्रा अंकल के घर कितना प्यारा सा पिल्ला है। मुझे भी एक पेट ला दो न।" उसने जिद की। पापा उसकी परेशानी समझते थे, लेकिन नीनू की दादी को घर में कुत्ता-बिल्ली पालने से सख्त एतराज था।

"घर इनसानों के रहने के लिए होते हैं, जानवरों के नहीं। पता नहीं कितनी बीमारी फैलाते होंगे।" कहकर दादी ने अपनी नाराजगी जता दी। नीनू उदास हो गया।

"अकेला बच्चा है। खेलने के लिए साथी तो चाहिए न!" नीनू की उदासी देखकर पापा ने दादी को समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन वे नहीं मानीं।

"ठीक है। आप उसे मत छूना। उसका कोई काम भी मत करना।" कहकर नीनू ने उन्हें मनाने की कोशिश की तो नीनू की खुशी के लिए उन्होंने बेमन से हामी भर दी। और दूसरे दिन शाम को ही पापा एक छोटा सा बिल्ली का बच्चा घर ले आए।

सुनहरे भूरे बालों और नीली आँखों वाले इस बच्चे का नाम 'कीबा' रखा गया।

कीबा के आने से नीनू की दुनिया ही बदल गई। पूरा दिन उसके साथ मस्ती करने में बीतने लगा। कीबा इतनी छोटी थी कि नीनू की हथेली में ही सिमट जाती। कभी उसके पेट पर चढ़ जाती तो कभी कंधे पर।

दर्जनों समाचार-पत्र एवं पत्रिकाओं में सैकड़ों रचनाओं के साथ लगभग सात पुस्तकें भी प्रकाशित। राजस्थान साहित्य अकादमी सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

गुदगुदी होती तो नीनू खिलखिलाकर हँस पड़ता। दूध पीने के बाद जब वह अपनी छोटी सी गुलाबी जीभ निकालकर पंजे और मुँह चाटती तो नीनू को उस पर बहुत प्यार आता था। नीनू कीबा के लिए बहुत से खिलौने भी लाया, लेकिन कीबा को बजने वाली गेंद ही सबसे अधिक पसंद थी। वह उसे लुढका-लुढकाकर पूरे घर में घुमाती रहती थी।

कीबा बहुत समझदार थी। एक महीने में ही वह समझ गई थी कि दादी उसे अधिक पसंद नहीं करतीं, इसलिए वह भी रसोईघर, मंदिर और दादी के कमरे से दूर ही रहती थी। कभी सामने आ भी जाती तो चुपचाप बचकर किनारे से निकल जाती।

आज नीनू को अपने मम्मी-पापा के साथ नए स्कूल में एडमिशन के लिए जाना था। बाकी सारी कारवाई तो ऑनलाइन पूरी हो गई थी, बस नीनू का इंटरव्यू होना ही शेष था।

अब समस्या यह थी कि कीबा को अकेले कैसे छोड़ा जाए। दादी ने तो पहले ही मना कर दिया था, लेकिन स्कूल तो जाना ही था।

सू-सू, पोटी करने के बाद मम्मी ने कीबा को दूध पिला दिया। कुछ देर खेलने के बाद वह सो गई तो सब लोग निश्चिंत होकर स्कूल के लिए निकल गए।

थोड़ी देर बाद कीबा जाग गई। वह घर में घूम-घूमकर सबको ढूँढ़ने लगी। जब कोई नहीं दिखा तो वह सहम गई। काफी देर तक म्याऊँ-म्याऊँ करती रही, फिर दर्द के मारे वह दादी के चारों तरफ चक्कर काटने लगी। अपने पंजों से उनकी साड़ी पकड़कर उनकी गोद में चढ़ने की

कोशिश करने लगी।

दादी ने उससे पीछा छुड़ाने की बहुत कोशिश की, लेकिन कीबा थी कि उनसे दूर जा ही नहीं रही थी। तभी उन्हें याद आया कि नीनू उसे खेलने के लिए बजने वाली बॉल देता है। दादी ने बॉल को बहुत ढूँढ़ा लेकिन उन्हें कहीं भी वह गेंद दिखाई नहीं दी। कुछ सोचकर उन्होंने ऊन का गोला कीबा की तरफ फेंक दिया। कीबा उससे खेलने लगी। दादी टीवी चलाकर सीरियल देखने लगीं।

अचानक दादी को लगा, जैसे कीबा कराह रही है। पहले तो उन्होंने टाल दिया, लेकिन जब उसकी कराहट बढ़ने लगी तो दादी उठकर उसके पास गईं। देखा तो कीबा ऊन में बुरी तरह से उलझी हुई पड़ी थी। वह हिल भी नहीं पा रही थी। सिर्फ म्याऊँ-म्याऊँ कर रही थी।

दादी ने धीरे-धीरे उसे ऊन से आजाद किया।

कैद से छूटते ही कीबा उछलकर दादी की गोद में दुबक गई। दादी डर गईं। वे उसे हाथ में पकड़कर गोद से नीचे उतारने लगीं। आज दादी ने पहली बार उसे छुआ। उसके बाल बहुत मुलायम थे। कीबा अपनी छोटी सी जीभ निकालकर उनका हाथ चाटने लगी। दादी उसे प्यार से सहलाने लगी। उसी समय नीनू ने घर में प्रवेश किया। अंदर का दृश्य देखकर वह खुशी से उछल पड़ा।

"पापा! देखिए, कीबा और दादी की दोस्ती हो गई। दादी बदल गई।" नीनू ने ताली बजाते हुए कहा।

"तेरी कीबा सचमुच बहुत प्यारी है रे!" कहते हुए दादी ने कीबा को नीनू के हाथों में थमा दिया।

मम्मी-पापा भी खुश थे। दादी ने कीबा को घर का सदस्य स्वीकार जो कर लिया था।

ए-१२३, करणी नगर (लालगढ़)
बीकानेर-३३४००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१३३६९५७१

रूबरू

कविता

• प्रीति कच्छल

व्यवसाय से सनदी लेखाकार (प्रैक्टिसिंग चार्टर्ड अकाउंटेंट), टैक्स गुरु पोर्टल पर कविताएँ व लेख प्रकाशित, इंस्टिट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउंटेंट्स ऑफ इंडिया की पत्रिका में कविताएँ प्रकाशित, आकाशवाणी दिल्ली में कविता वाचक, विभिन्न विषयों पर अनायास ही लिखने वाली कविताओं की रचयिता।

क्या टुकुर-टुकुर देखता है तू?
क्या बार-बार सोचता है तू?
वही जो तूने चाहा
तुझे नहीं मिला
और देख जो नहीं चाहा,
वो कैसे मिला?
तो खुश रह तू इस जिंदगी में,
बरबाद मत कर एक पल भी सोचने में।

लग जा उसमें भी,
जो चाहा न मिला।
दूर नहीं वह दिन भी,
मिल जाएगा चाहा किला।

कौन कहता है तू आगे नहीं,
सुन, आगे की कोई परिभाषा नहीं।
न बाँध जिंदगी को परिभाषा तले,
कर ले वह भी, जहाँ मन तेरा चले।

चलना ही तो निशानी है जिंदगी की,
बस थम के बैठ जाना हँसी अरमानों की।

किंतु अरमान तले खुद को न तड़पा तू,
अपने पंखों को सीमा तले न फड़फड़ा तू।

पंखों के साथ उड़ चल,
नीले गगन में प्रिये!
यही तो सच्ची जिंदगी है,
जो खुद के साथ जिए दूजे के लिए।

२१२, विज्ञापन लोक सोसाइटी,
मयूर विहार एक्सटेंशन, दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ९३५००४००००
pritikachhal@gmail.com

एक चेहरे का आदमी

● नीलोत्पल रमेश

सुपरिचित रचनाकर। 'मेरे गाँव का पोखरा' (कविता-संग्रह), 'शाल वन की धरा से' (संपादित साझा कविता-संग्रह)। हिंदी की दर्जनों पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, समीक्षाएँ और कहानियाँ प्रकाशित। आकाशवाणी, राँची से कविताओं और कहानियों का प्रसारण।

बच्चे स्कूल जा रहे हैं

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
अपनी पीठ पर लादे हुए
कुरान की आयतें
गीता के श्लोक
बाइबल की सूक्तियाँ
और-और धर्मों की
अनेक विचारधाराएँ

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
उनकी पीठ पर
बैठा हुआ है पहाड़
पृथ्वी इसके बोझ से
असहज महसूस कर रही है
दिशाएँ खोती जा रही हैं
अपना संतुलन
और चिड़िया चहचहा रही है

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
कूदते-फाँदते, खिलखिलाते
जैसे सबकुछ
आज ही पा लेंगे अपने स्कूल से
और खुशी-खुशी
लौट आएँगे
अपने-अपने घरों को
आज शाम तक

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
और माँएँ आशंकित हैं
पिता सहमे हुए हैं
भाई-बहन भी असहज हैं
कि समय पर, सही-सलामत
लौट आएगा न मेरा लाल!
कहीं प्रद्युम्न की तरह
कुछ हो तो नहीं जाएगा न!

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
ताकि भविष्य का बीज बन
अंकुर ले सकें
जीवन की खुशहाली के लिए

बच्चे स्कूल जा रहे हैं
माता-पिता का अरमान ले
सपनों का पिटारा ले
भूत-वर्तमान-भविष्य ले
ताकि छू लें आसमान।

बेचेहरे का आदमी

आजकल
मुझे एक ही आदमी के
दीखते हैं कई चेहरे
जो अकसर परेशान करते हैं
और मैं हो जाता हूँ बेचैन

मैं निकला तलाश में
ताकि खोज सकूँ
एक चेहरा का आदमी
लेकिन नहीं खोज पाया
फिर अपने से ही पूछ बैठा
भई, बताओ—
कोई ऐसा आदमी
जिसके
सिर्फ एक चेहरा हो
जिसे मैं
कहीं भी, कभी भी
पहचान सकूँ!

फिर मेरे अंदर से
आवाज आई—
पहले तुम तो देख लो
अपने आप को
तुम्हारे भी तो कई चेहरे हैं
पहले उसे एक रूप में ढालो
फिर खोजना
एक चेहरे का आदमी

ये चेहरे
बदलते रहते हैं
आदमी आदमी से बात करते वक्त
इनके कोई निश्चित
आकार-प्रकार नहीं
ताकि इन्हें
परिभाषित किया जा सके

सचमुच
मुझे लगता है
कि हो गया है आदमी बिना चेहरे का
जिन्हें नाम, पद, प्रतिष्ठा से ही
पहचाना जा सकता है
वह भी बेचेहरे का
सिर्फ अनुमान से

जिस पर
ठप्पा नहीं लगाया जा सकता
कि यही वह शख्स है
जिसे ढूँढ़ रहा था मैं!

पुराना शिव मंदिर, बुध बाजार, गिद्दी-ए,
हजारीबाग-८२९१०८ (झारखंड)
दूरभाष : ०९९३१११७५३७
neelotpalramesh@gmail.com

दृष्टि

• प्रीति गोविंदराज

"दरवाजा बंद कर लेना, स्कूल निकलने से पहले।" सीता अपने बेटे से बोलती हुई बाहर निकली। आजकल मौसम सुहाना था, इसलिए जल्दी चलने से पसीने से तर नहीं होती। यदि मौसम एक महीने पहले का होता तो अभी बेहाल हो गई होती। नियम है, सब कुछ बदल जाता है! सुबह के सात बजे थे, वैसे तो काम के लिए सही समय होता, लेकिन आज मद्रासी मैडम को अस्पताल जाना था, इसलिए पारसी मैडम को रुकना पड़ेगा। उसको तो रोज स्कूल जाना पड़ता है, फिर भी वह किचकिच नहीं करती। देर भी हो जाए, तो स्कूल चली जाती है। मुसकराती रहती है, जैसे उसके जीवन में दु:खी होने का कोई कारण नहीं हो। वैसे तो इन दोनों के कारण ही अपना घर चलता है, अपने को तो पगार से मतलब, किसी के साथ लफड़े में क्यों पड़ना? सबकुछ अपना फर्ज मानकर झेल लेने का। घंटी बजते ही सीता के दिल की धड़कन तेज हो गई, अभी बुरा-भला बरसना शुरू हो जाएगा।

आज तक मैडम से उसके नमस्ते का सीधा सा जवाब नहीं सुना, कभी 'इतने देर से क्यों आया?' कभी 'तुम हमेशा मुझे नमस्ते बोलता है, पर ठीक से काम नहीं करता।' कभी मुँह से कुछ न कहती, पर अपनी भौंहें तान लेती, जैसे अब तुम बूझो कि तुम्हारी गलती क्या है! सीता काम करते हुए सोचने भी लगती कि आज की नाराजगी का कारण क्या हो सकता है? फिर कुछ समय बाद सोचती कि बस उसे देखते ही बिगड़ जाती है! दरअसल बात यह थी की उनके दो कमरे का फ्लैट था। इसलिए काम आसान था, पैसे तो अच्छे मिल रहे थे। उनकी सेहत हमेशा बिगड़ी रहती, जाने क्या-क्या बीमारी थी उन्हें! शक्कर, बी.पी. और कैंसर तो थे ही, दमे का रोग भी था! सीता अपने रोज के दो-ढाई घंटे किसी तरह काट लेती। कभी जब दया आती, तो लगता अपने सेहत से नाराज होकर ही शायद इतनी चिड़ा चिड़ी हो गई हो, वरना उनको क्या तकलीफ हो सकती है? जब साब जिंदा थे तो वे उन्हें प्रेम से रखते थे। मैडम मुझसे भी इतना खीज नहीं दिखाती थी, छुट्टी माँगने पर मुँह बनाती थी, पर रोज इस तरह लगातार बड़बड़ाती नहीं रहती। पिछले साल साब चल बसे, पता नहीं उन्हें क्या हुआ था? उनके जाने के बाद मैडम दो महीने तक अपनी बेटी के घर गई थी। गार्ड को पूछा था, पर उसे भी कुछ बता कर नहीं गई। चार महीने बाद जब लौटीं तब तक सीता ने किसी और घर का काम पकड़ लिया था। पर मैडम तो उस पर अपना अधिकार समझती थी! सीता जानती थी की उनके घर कोई बाई टिकती भी नहीं। आजकल बाई लोग भी किटकिट बिल्कुल नहीं सहते। अधिक-से-अधिक एक हफ्ते में अपना हिसाब करके अपने रास्ते निकल पड़ते। सैकड़ों घर हैं काम करने को, फिर कोई समझौता क्यों करे?

जानी-मानी लेखिका। दो काव्य और एक कथा-संग्रह तथा अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कविताओं के अलावा कहानियाँ, संस्मरण और उपन्यास आदि लिखने में अभिरुचि। विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा अमेरिका भौगोलिक क्षेत्र से प्रथम पुरस्कार प्राप्त।

सीता का दिल थोड़ा नरम था, सत्तर से ऊपर की उम्र में किसी से काम कैसे हो? खासकर ऐसी मैडम से, जिसने यौवन में भी काम न किया हो! अब तो मैडम बीमार भी रहती हैं। कुछ कह भी दे तो क्या फर्क पड़ता है? बुर्जुग लोग हैं बेचारे, जाने कितने दिन और रहना है इस जग में! आज उनके शक्कर का टेस्ट हैं, इसलिए सुबह नाश्ता साथ लेकर जाना है, इस वास्ते जल्दी बुलाया था। उनका नाश्ता बनाकर, बरतन धो देती, तो वे अस्पताल चली जातीं। सीता उनके लिए कभी सुबह पहुँचती तो कभी शाम को, पारसी मैडम तो एडजस्ट कर लेती है। रोग भी कोई अपनी मरजी से आता है भला? डॉक्टर को भी तो अस्पताल नियम से चलाना पड़ता है। लेकिन इस सुबह के खून टेस्ट ने हम सब को परेशान कर दिया था। जब साब थे तो वे घर पर चुपचाप अपना अखबार पढ़ते रहते, मैडम अकेले अस्पताल जाती। वे सीता के लिए दरवाजा खोल देते और आगे कुछ नहीं कहते। वह शीघ्रता से अपना काम करके दूसरे घर निकल जाती। साब खाना नहीं पकाते, लेकिन सब्जी काट देते, तब सीता केवल रोटी ही बनाती थी। आजकल मैडम के हाथ से कोई काम नहीं हो पाता, इसलिए सीता का इंतजार करती है। अपनी बेबसी के चलते तेवर चढ़े ही रहते हैं! कोई उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई बात, सुझा भी नहीं सकता। एक बार सीता ने पूछा कि जिस दिन जाँच करनी हो, उससे पहले दिन ही सब्जी काट दे तो उन्हें सीता के कारण सुबह देरी नहीं होगी। वह शाम को आ जाया करेगी, बाकी सारे काम करने के लिए? मैडम तो आग

बबूला हो गई, एक सीधा सपाट उत्तर था, "नहीं होता।" सीता समझ गई कि वे नहीं मानेंगी। बाकी दोनों घर के मैडम ठीक थे, इसलिए अब तक सब जगह नौकरी टिकी हुई थी।

घंटी बजाए तो पाँच मिनट हो गए थे, क्या हुआ, अब तक मैडम ने दरवाजा क्यों नहीं खोला? क्या वे सो गईं? शायद कॉलिंग बेल काम नहीं कर रहा। सीता ने दरवाजा हाथों से खटखटाया। प्रतीक्षा की, पर अब भी कोई हरकत नहीं हुई। दूसरी बार खटखटाया तो कुछ जोर से और आवाज भी दी। अचानक बगल के फ्लैट से उनकी पड़ोसी शीला भाभी बाहर आ गई। "क्या हुआ सीता, आंटी घर पर नहीं है?" सीता जोर की दस्तक सुनकर हैरान थी। "नमस्ते दीदी, आज आप घर पर हैं?" "हाँ दो दिन की छुट्टी ली है, दोस्त के साथ शॉपिंग करनी थी। ठहर, मेरे पास चाबी दी थीं उन्होंने, मैं देखती हूँ।" जैसे ही वे चाबी खोलकर अंदर गई, सीता भी उनके साथ भीतर चल दी। बाथरूम से हलकी कराहने की आवाज आ रही थी। मैडम वहीं गिर गई थीं और उनसे अपने आप उठा नहीं जा रहा था। किसी तरह पड़ोसिन के साथ सीता ने उन्हें सहारा देकर उठाया। यह तो ईश्वर का शुक्र था कि हम दोनों के उठाने से वे उठ सकीं। पंजाबी मेमसाब को तो ऐसे उठाना मुश्किल होता। किसी तरह से वे बिस्तर पर बैठा दी गईं। "थैंक यू!" वे शिष्टता से हाँफती हुई बोलीं, उनके शरीर पर बाहर वाले कपड़े थे, जो अब अध-भीगे थे।

"सीता तू चाय चढ़ा दे और मैडम के नए कपड़े ला दे।" सीता तुरंत काम में जुट गई तो शीला भाभी ने मैडम से पूछना शुरू किया। कुछ देर तो मैडम कुछ न बोली, अपनी साँस काबू में लाने का इंतजार करती रही। फिर इत्मीनान से उन्होंने अपने उबले पानी के बोतल से पानी पीया। "आंटी अस्पताल जाना है क्या? रिक्शा बुलवा लें?" "नहीं, आज मैं कहीं नहीं जा सकता, बहुत दर्द हो रहा है। सोचा था कि शक्कर का टेस्ट करेगा, लेकिन गीजर बंद करने गया, तो एकदम पानी में फिसल गया।" अब की बार उनकी आँखों से आँसू बह निकले। "कोई बात नहीं आंटी, अच्छा हुआ, सीता ने आवाज लगाई, वरना मैं तो आज सुबह शॉपिंग जाने के लिए तैयार थी। आपको सीता को ही थैंक यू बोलना चाहिए। आप उसे भी एक चाबी दे दो, ऐसे ही अगर आप को कुछ हो गया, जब मैं ऑफिस में हूँ तो कहीं देर न हो जाए।"

सीता ने जब चाय का कप पकड़ाया तो उसके साथ ओट्स का दलिया भी दिया। "मैडम आप दर्द की दवाई ले लीजिए, बाद में बहुत दर्द होगा।" मैडम ने सीता की ओर कृतज्ञता से देखा। "सीता तुमने नाश्ता खाया?" "नहीं मैडम, अभी तो आप ही गिरे हैं न, आपको ही खिलाना है।" बत्तीसी निकालकर हँसने लगी सीता। इसी बीच शीला भाभी का फोन बजा। "आंटी, अब तो आप आराम करो और सीता अगर जरूरत हो तो मुझे फोन लगा देना, एक बजे तक पास के मॉल में रहूँगी।" "जी अच्छा भाभी।" "शीला तुम जाओ बेटा, मैं ठीक हूँ, दो दिन आराम कर लूँगी तो बिलकुल ठीक हो जाऊँगी। काम करके नाश्ता खा लेना और मेरे लिए दो रोटी और सब्जी बना देना।" मद्रासी मैडम आँखें बंद करती हुई बोली।

सारा काम निपटाकर जब सीता जाने लगी तो मैडम को जगाया, "मैडम मैं जाने वाली हूँ, कुछ चाहिए क्या?" "हाँ, तुम्हें कैसे मालूम कि दो दिन के बाद दर्द वापस आता है?" सीता खिलखिलाकर हँसी, "मुझे हुआ था न, मैडम। पिछले हफ्ते जब खूब बारिश पड़ रही थी और मैं जल्दी चल रही थी न यहाँ आने के लिए तो सीढ़ी से पहले जो पानी जमा था, मैं उसमें जबरदस्त फिसल गई! तब तो पता नहीं चला, फिर बाद में ऐसा दर्द उठा न बाबा!" "फिर तुम क्या किया?" "क्या किया माने, क्या करेगा मैडम, कुछ नहीं किया।" "कोई दवा लिया?" "ऐसे थोड़ा दवाई हम लेते हैं मैडम! वो विशाल को दर्द होएंगा या बुखार होगा तबइच खरीदते।" "विशाल कौन है?" सीता मन ही मन हँसने लगी। मैडम के घर में पाँच साल से काम करती हूँ और उन्हें नहीं पता विशाल कौन है? "एक ही तो बच्चा है न अपना मैडम? सातवीं में पढ़ता है इस साल। मैं उसको पूरा पढ़ा-लिखाकर नौकरी में देखना चाहती। अपने और अपने मर्द के माफिक ऐसा घर में काम नहीं करवाना चाहती।"

आज मद्रासी मैडम चुप थी, थक गई थी बेचारी। कुछ देर बाद पूछा, "उसको बीमारी है?" "नहीं मैडम, वैसा कुछ नहीं है। कभी-कभी उसको बुखार आता न और कभी खेलने के बाद चोट लग जाती न, तब उसको दर्द की दवा देती मैं। अभी जाऊँ? दूसरी मैडम राह देख रही होगी।" "हाँ, थैंक यू, तुमने आज मुझे बचा लिया। तुम मेरे लिए ड्राइंग रूम से दवाई का डब्बा लेकर आना और मेरा उबला पानी इसमें भर दो।" बोतल पकड़ाती हुई बोली। "तुम जब आगे गिरेगा या दर्द होएगा, तो तुम मुझे बताना?" "क्यों मैडम, ऐसे बहुत बड़ी बात नहीं है!" सीता दोबारा हँसने लगी। "मैं तुम्हें दवाई देगा, तुम्हारा शरीर भी थक जाता है। अभी तुम दरवाजा बंद कर दो, मैं थोड़ा सोऊँगी।" सीता को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ, "अच्छा मैडम, मैं अभी जाती हूँ।"

सीढ़ियाँ उतरते हुए सीता सोचने लगी, मद्रासी मैडम आज उसकी ओर पहली बार इनसान की नजर से देख रही थी। उनके यहाँ इतने लंबे समय से काम करती है, पर कभी यह नहीं पूछा कि कहाँ रहती है, घर में कौन-कौन है? जब मन किया तब नाश्ता दे दिया। हाँ, गरमी में ठंडा पानी जरूर पूछती रहती। बस, इससे अधिक कोई नरमी नहीं। जब उसे देरी हो जाती या कोई गलती हो जाती, तब खूब डाँटती। बच्चों की तरह, सीता सारी डाँट एक कान से सुनती और एक से बाहर करती। अब ऐसा नहीं करती तो जीवन कैसे काटता? बचपन से हर बात पर हँसते रहने की आदत थी। मैडम उसे डाँट देती, पर जल्द ही वह उसे भूल जाती।

पारसी मैडम के यहाँ वह दो साल से काम सँभालने लगी है। उन्हें सुबह साढ़े सात बजे स्कूल के लिए निकलना पड़ता है। सीता सुबह ठीक सात बजे आ जाती और अपना काम करती रहती और वे तैयार हो जातीं। वे तो अपना खाना खुद बनाती हैं, वैसे भी अकेली रहती हैं। घर भी साफ रहता और बरतन भी कम होते हैं। छुट्टी के दिन सीता से बात करती

रहती इसलिए, उनके घर का काम जल्दी से निपट जाता। उन्होंने विशाल के बारे में जानने के बाद उसे रोज शाम को पढ़ाना शुरू किया। जब से ट्यूशन पढ़ने लगा, उसके नंबर अच्छे आने लगे हैं। पहले विशाल उनसे मिलने में बहुत डरता था, क्योंकि पारसी मैडम उससे सिर्फ अंग्रेजी में बोलती थी। "अंग्रेजी बोलने से आती है, रटने से नहीं।" "सचमुच आई, मैं अब अंग्रेजी बोलने लगा हूँ और मुझे सब समझ भी आ रहा है।" सीता अपने बटे की बातें सुनकर खिल जाती। "अरे वाह विशाल, वे तो कोई पैसे भी नहीं लेती!" सीता उनके लिए कभी त्योहार में पूरन पोली तो कभी करंजी बनाकर ले जाती। मैडम कहती, विशाल जिस दिन अच्छी नौकरी पा लेगा, उस दिन ही वो उससे सीधे पैसे लेगी और हँस देती।

सीता सोचती रहती कि इनसान तो मद्रासी मैडम भी बुरी नहीं है, अकेली रहती हैं और बीमार भी। साब साथ होते तो इतनी चिड़चिड़ नहीं करती। वे उनकी सेवा भी करते और बाजार जाकर सारी खरीदारी भी करते, प्यार से उनकी बातें सुनते रहते। पारसी मैडम तो जवान है, स्कूल में टीचर है, अपने स्कूल में खुश है। वह मद्रासी मैडम की तकलीफ सुनती, तो उनकी आँखें भर आती। एक दिन तो सीता के साथ मिलकर उनके घर भी आई थी। उनके जन्मदिन पर पनीर की सब्जी और रोटी बनाकर लाई थी। मद्रासी मैडम बहुत खुश थी उस दिन, क्योंकि उन्हें पनीर की सब्जी बहुत प्रिय थी। जिस दिन उन्हें अस्पताल जाना पड़ा, पारसी मैडम उन्हें अपने साथ ले गई थी।

"तुम आज बहुत अच्छा कपड़ा पहन कर आया है!" सीता के गुलाबी सलवार कुरते को देखकर मद्रासी मैडम ने टिप्पणी की तो हमेशा साड़ी पहनने वाली सीता हँसने लगी। "अच्छा है न मैडम, पारसी मैडम ने दिया। उन्होंने कहा, अब उनके लिए तंग हो गया है।" "कौन, शहनाज?" "हाँ मैडम, मैं तो उनको पारसी मैडम ही कहती हूँ।" मद्रासी मैडम मुसकराई। "तुम जाने से पहले मेरी तीन साड़ियाँ ले जाना, अभी तो मैं साड़ियाँ नहीं पहन सकती। अभी मैं भी पंजाबी ड्रेस पहनता है।" "होऊ, आप पर मस्त दिखता है" सीता की आँखें चमकीं। कई बार उनकी दीवार पर टँगी तस्वीरें देखकर सोचती, जवानी में मद्रासी मैडम कितनी सुंदर थी, एकदम मस्त! "एक जमाने में तो सब बहुत पहनने का शौक था, अब क्या करें? साड़ी सँभालना मुश्किल, चलना ही मुश्किल है।" एक लंबी साँस छोड़ती हुई बोली।

दो-चार दिन तक सब कुछ सामान्य चल रहा था, अचानक एक दिन सीता सड़क पार करते-करते, तेजी से आते हुए एक रिक्शे से टकराई और बुरी तरह घायल हो गई। आसपास खड़े लोगों ने रिक्शे के चालक को खूब डाँटा-फटकारा और उसी रिक्शे में लादकर उसे सरकारी अस्पताल ले गए। सौभाग्य से मंगला उसके साथ वापस घर जा रही थी और उसने शिंदे भाऊ को फोन पर सारी बात बताई। सिर और दाएँ पैर के घाव गहरे थे, खून भी बहुत बहा। सीता बुरी तरह घबरा गई, उसका गला बिल्कुल सूख गया। कभी सुई तो कभी सेलाइन चढ़ा तो कभी एक्स-रे! एक के बाद एक कार्यक्रम चलता रहा। जब तक शिंदे सीता के पास न पहुँचा, मंगला उसके साथ रही। दस टाँके भी लगे, कुछ दिनों तक यों ही इलाज चलता रहा। तीनों मैडम को अपनी एक्सीडेंट के बारे में बताया। पारसी मैडम पूछने लगी, "किस ऑटो ने मारा तुम्हें, नंबर लिया? कोई हड्डी टूटी तो नहीं? काम के बारे में चिंता मत करना।" मद्रासी मैडम कुछ देर तो चुप रही, फिर बोली, "तुम हॉस्पिटल में हो? डॉक्टर क्या बोलता है, ऑपरेशन करेगा?" सीता हँसने लगी, "मैडम वह तो बोलता है हड्डी ठीक है, पर घाव भरने में अभी टाइम लगेगा। पैर में दस टाँके लगे हैं, सिर पर पाँच, उसको सँभालना पड़ेगा। दो हफ्ता काम करने को मना किया है।" "तुम मंगला या नंदा से बात करना मेरे लिए, दो हफ्ता कैसे काम चलाएगा?" "हाँ, मैडम, मंगला को तैयार किया है मैंने आपके लिए। ग्यारह बजे तक आएगी, अपना काम करने के बाद।" "ठीक है, ठीक है, सीता थैंक यू" सीता हैरान रह गई कि मद्रासी मैडम देर से आने के बारे में सुनकर भड़की नहीं।

सीता चौथे दिन घर पहुँची, तो पड़ोस से उसके घर में खाना पहले ही पहुँचाया जा चुका था। दर्द अभी भी जोरदार था, पर उसे तो खाट पर लेटने की बिल्कुल आदत नहीं थी। घर पहुँचकर आश्वस्त थी, अस्पताल की दवाई की गंध और सब जगह उदास, थके-हारे चेहरे देखकर उसे बहुत बुरा लगता था! घर पर बढ़िया गद्‌देदार बिस्तर तो नहीं था, पर जगह अपनी थी। विशाल को देखे, तीन दिन हो गए थे। पति ने जबरदस्ती लेटने का आदेश दिया, तो बिना तर्क के अपना पैर सँभालती हुई लेट गई। दोपहर से कब शाम हुई, पता ही नहीं चला। कुछ आवाजें सुनाई दी तो अचानक आँखें खुलीं। सामने मद्रासी और पारसी मैडम कुरसी पर बैठे थे, विशाल से बात करते हुए। "नमस्ते मैडम!" कहते ही दोनों उसकी ओर मुड़े। मद्रासी मैडम के हाथ में फलों से भरा थैला था। "तुम अच्छी तरह रेस्ट करना, जब फिट हो जाएगा तब आना, ओके?" "जी मैडम, मुझे तो लेटने को जमताइच नहीं।" सीता ने दाँत निपोरे, "पर डॉक्टर ने बोला है, वरना टाँका खुल जाएगा।" अब तो विशाल भी नसीहत देने लगा, सीता चुपचाप मुसकराने लगी।

रात को सोने से पहले शिंदे ने सीता का माथा चूमते हुए कहा, "पता है, अस्पताल में तुम्हें देखकर डर गया था। तुम घर आ गई, अब अच्छा लग रहा है। तुम कहती थीं, मद्रासी मैडम हमेशा बिगड़ी रहती है। देखो तुम्हारे पूरे महीने की तनख्वाह देकर गई है और इतने सारे दर्द की दवाई भी पकड़ाकर गई। कहने लगी, सीता दर्द सहती है, लेकिन शरीर तो उसका भी सबके जैसा है। उसे दर्द सहने की जरूरत नहीं है। कहकर गई है, रोज खाने के बाद दो बार लेना, बहुत अच्छी दवा है।" सीता मन ही मन मुसकराने लगी।

"अच्छा दे दो, एक दवाई अभी ले लेती हूँ, दर्द तो सुबह से हो रहा है।" दिल में सैकड़ों सुंदर फूल खिले थे, वहाँ दर्द नहीं, शीतल हर्ष था। उसकी कल्पना दृष्टि में मद्रासी मैडम जैसे एक छोटी नटखट बालिका थी, जिसने अभी-अभी अपना खिलौना किसी को प्रेम से पकड़ाया था फिर खिलाकर हँस पड़ी सीता। "तुम हमेशा क्यों हँसता रहता है?" मद्रासी मैडम का रूठा सा स्वर फिर कानों में गूँजा!

सा
अ

१४१३ ग्रेडी रेंडल कोर्ट, मैकलेन, वर्जीनिया-२२१०१ (यू.एस.)
दूरभाष : ५७१ ५२७ ६५५६
cs_preethi@hotmail.com

...कि तुम मेरी जिंदगी हो

● पूरन सिंह

'आप सुमन के पापा हो?'

'जी, नहीं!'

'तो?'

'चाचा हूँ।'

'चलिए, चाचा भी तो पापा ही होते हैं।' डॉक्टर बोला था।

'मेरे चाचा मेरे लिए पापा ही हैं। पापा मैंने नहीं देखे। मेरे चाचा ने मेरे लिए बहुत दु:ख उठाए। कभी हम सभी भाई-बहनों को पता ही नहीं चलने दिया कि पापा क्या होते हैं, सर। मेरे चाचा बहुत अच्छे हैं।' सुमन के मन में मेरे लिए छिपी श्रद्धा और सम्मान साकार होने लगा था।

डॉक्टर साहब कुछ नहीं बोले थे। उन्होंने सुमन को देखा था। उसकी बातों की सच्चाई को जानना चाहा था। फिर अल्ट्रासाउंड, एम.आर.आई. आदि की रिपोर्टें देख रहे थे। मुझे हाथ से बैठने का संकेत किया था। मैं वहीं उनके सामने ही कुरसी पर बैठ गया था, 'आपसे एक जरूरी बात कहनी है।' डॉक्टर साहब ने मेरी तरफ देखा था। मैंने भी सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी थी, मानो कहना चाहा था, 'कहो क्या कहना है, सर।'

'सुमन का केस थोड़ा सा कंप्लीकेटिड है। मेरे लिए नॉर्मल स्थिति में कुछ भी नहीं है। अब चूँकि सुमन अनमैरिड है, इसलिए हमें फूँक-फूँककर कदम रखना होगा। आपको फेथ में लेकर काम करना जरूरी है।' वे बताए जा रहे थे।

'आप थोड़ा सा और स्पष्ट करें, सर।' मैं बोला था।

'ठीक कहा आपने। देखो, सुमन की ओवरी में सिस्ट है। सिस्ट बढ़ रही है। उसे निकालना होगा। निकल भी जाएगी, लेकिन बहुत संभव है कि वह कुछ परेशानियाँ छोड़ जाए।' डॉक्टर साहब आगे बताते, इससे पहले मैं बोल पड़ा था, 'मतलब?'

'मतलब यह कि हो सकता है, सुमन शायद कभी माँ न बन पाए। वैसे ऐसा होगा नहीं, लेकिन पॉइंट फाइव परसेंट संभावनाएँ रहती हैं।'

सुपरिचित कथाकार। अब तक एक हजार से अधिक लघुकथाएँ, १८० से अधिक कहानियाँ और तीन सौ से अधिक कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। विभिन्न प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थाओं द्वारा अनेक सम्मान और पुरस्कार। विभिन्न रचनाएँ पुरस्कृत एवं आकाशवाणी से प्रसारण।

इसके आगे भी डॉक्टर साहब न जाने क्या-क्या क्रॉनिकल बातें बताते रहे थे। मुझे तो लगा था कि उनका कैबिन घूम रहा है। मैं चक्कर खा रहा हूँ और ध्यान न दिया तो मैं गिर पड़ूँगा कि मेरे मुँह से निकल गया था, 'पानी'। डॉक्टर साहब पानी देते इससे पहले ही सुमन ने पानी की बोतल मेरी तरफ बढ़ा दी थी। मैंने आधी बोतल खाली कर दी थी।

'देखिए, सुमन के चाचा, आपको धैर्य से काम लेना होगा। सुमन अभी बच्ची है। आप बड़े हैं और समझदार भी। परिवार के अन्य लोगों को भी साहस देना होगा आपको। मुझसे आज तक कभी कोई चूक हुई तो नहीं है लेकिन फिर भी।' फिर अपने हाथों को उठाकर बोले थे, 'हजारों ऑपरेशन किए हैं मैंने। अब तक तो ऐसा हुआ नहीं।'

मैं चुप था

'तो ठीक है, अगले फ्राईडे को सुमन को लेकर सुबह सात बजे आ जाना। उसी दिन ऑपरेशन कर लेंगे और अगले दिन छुट्टी मिल जाएगी। विश्वास है, सब ठीक रहेगा।' इतना कहकर डॉक्टर साहब ने हमें इजाजत दे दी थी।

हम बाहर आ गए थे उनके कैबिन से। मैं अंदर-अंदर तो परेशान था, लेकिन अपनी परेशानी प्रकट नहीं होने दे रहा था। बाहर भाभी और छोटेवाला इंतजार कर रहे थे। 'क्या कहा डॉक्टर ने?' भाभी बोली थी।

'कुछ नहीं। फ्राईडे को ऑपरेशन होगा और सैटरडे को ललिया (बेटी) को छुट्टी मिल जाएगी।' मैं सहज होने का साहस कर रहा था।

हम सब घर लौट आए थे।

अगले फ्राईडे को हम जल्दी ही अस्पताल पहुँच गए थे। डॉक्टर साहब और नर्सें अपने-अपने काम में व्यस्त थे। डॉक्टर साहब ने मुझे देखकर छोटी वाली स्माइल दी थी। मैंने अपने दोनों हाथ जोड़ दिए थे। शायद कहना चाहा था, 'मेरे भाई की अमानत है। चूक न होने पाए, सर।' बेटी को ऑपरेशन थिएटर ले जाया गया था। भाभी वहीं बाहर वेटिंग रूम में पड़ी बेंचों पर बैठ गई थीं। छोटेवाला भी वहीं बैठा था। मैं भी उन्हीं के पास साइड में बैठ गया था। मेरे अलावा बहुत से और लोग भी बैठे थे। सभी का कोई-न-कोई ऑपरेशन थिएटर में था। कोई-कोई तो ऐसा भी था, जो ऑपरेशन थिएटर के दरवाजे की ओर ही देख रहा था, जिधर से उसके अपने को अंदर ले जाया गया था।

प्राय: लोगों को कहते सुना है कि 'कोई काऊ को नाहि है,' लेकिन अस्पतालों में ये बात झूठी साबित होती हैं। अगर कोई किसी का नहीं है तो ये बाहर बैठे लोग कौन हैं। बीच-बीच में गार्ड या वार्डबॉय आकर किसी के नाम की आवाज लगा जाते। शर्मिला के साथ कौन है या फिर रजिया के साथ वाले आओ। जिससे लोगों का ध्यान बँट जाता था। अधिकांश के चेहरे उतरे हुए थे।

मैं बेंच पर बैठा सभी को देख रहा था। भाभी और छोटेवाला कुछ बातें करने लगे थे कि··· कि···

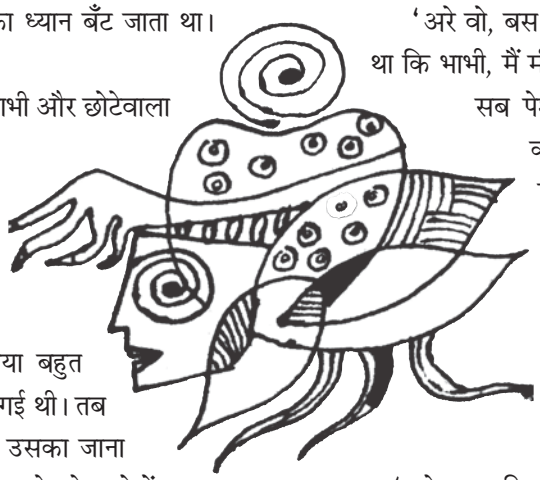

कैसे भैया अपने छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर भगवान् के घर चले गए थे। भाभी के चार बच्चे हैं। दो बेटे और दो बेटियाँ। जब भैया की मृत्यु हुई थी, तब भाभी खूब जवान थी। चार बच्चे जल्दी-जल्दी हो गए थे। भैया बहुत ज्यादा काम नहीं कर पाते थे। उन्हें टी.बी. हो गई थी। तब टी.बी. लाइलाज हुआ करती थी। जिसे होती, उसका जाना तय होता था। भैया की मृत्यु पर अम्मा और घर के शेष लोगों ने भाभी को ही कोसा था। 'इसी की वजह से मेरा बेटा चला गया। खसम के बगैर कभी सोती तो थी नहीं। कमजोर शरीर था मेरे बेटे का। ये जवान लुगाई। लील लिया मेरे बच्चे को।'

भाभी का साथ देने के बजाय उन्हें दुत्कार और घृणा ही मिली थी। मेरा झुकाव भैया की ओर था। भाभी भी मेरे लिए महत्त्वपूर्ण रही। उस समय सुमन अपनी मम्मी का दूध पीती थी, जब भैया अपनी अंतिम यात्रा पर निकल गए थे। बड़ा बेटा ही थोड़ा सा समझदार था। उसी ने घर सँभाला था। मैंने साथ दिया भाभी और बच्चों का, जिसका परिणाम यह निकला कि मुझे भाभी के साथ जोड़ा गया। 'एक को तो लील गई, अब इसे भी लील लेना।' भाभी सूनी-सूनी आँखों से सभी को देखती रहती। स्थिति तो यहाँ तक आई कि मेरी पत्नी भी मुझे गलत समझने लगी थी। खैर, आप जब भी कोई अच्छा काम करेंगे, बाधाएँ आपका मार्ग रोककर खड़ी हो जाएँगी। मैं अपवाद कहाँ था।

बड़े बेटे की मेहनत, लगन और परिवार के प्रति निष्ठा, भाभी की ईमानदारी और मेरा साथ, आज भाभी के चारों बच्चे समर्थ हैं। जो भाभी एक-एक पैसे के लिए तरसती थी, आज उसको उसके दोनों बेटों ने अपने-अपने क्रेडिट कार्ड दे दिए हैं। बड़ी बेटी का ब्याह कर दिया है। बेटे भी ब्याह दिए हैं। बस सुमन ही बची है। सुमन भी भारत सरकार में सेक्शन ऑफिसर है, वस्त्र मंत्रालय में। किसी तरह का कोई दु:ख नहीं है भाभी के लिए। हाँ भैया को वापस तो भगवान् भी नहीं ला सकते। वह दु:ख तो रहेगा ही। रही बात मेरी, तो मेरा क्या है? कभी वादा किया था भाई से कि जीवन की आखिरी साँस तक बच्चों को आपकी कमी महसूस नहीं होने दूँगा। वही पूरी कर रहा हूँ, अब यह बात और है कि···।

सोच ही रहा था कि वार्डबॉय ने आवाज लगाई थी, 'सुषमा के साथ कौन है।' 'मैं', न जाने कब बोल गया था मैं। भाभी ने मुझे देखा था, 'क्या हुआ, सब ठीक तो है? वह सुषमा को बुला रहा है। सुमन को नहीं।' फिर पानी की बोतल मेरी ओर बढ़ाई थी, 'लो पानी पियो। आप ऐसे करोगे तो हम···हम कैसे करें।'

'अरे वो, बस ऐसे ही।' मैंने कह दिया था। उन्हें नहीं बताया था कि भाभी, मैं मीलों दूर चलकर लौट आया हूँ।

सब पेशेंट के नाम बुलाए जाते, लेकिन मेरी सुमन का नाम नहीं बुलाया जा रहा था। देखते-देखते पौने चार बजने को आए। हम सब की आँखें ऑपरेशन थिएटर के दरवाजे की ओर लगी थीं और कान खड़े थे।

फिर वार्डबॉय ने आवाज लगाई, 'सुमन के साथ कौन है?' मैं एक ही पल में उसके सामने। भाभी और छोटेवाला तो सामान ही सँभालते रहे थे।

'अरे आपकी जरूरत नहीं है। कोई लेडी भेजो।' वार्डबॉय गुर्राया था।

'क्यों?'

'अरे, भाई गाईनी का मामला है। आप वहाँ क्या करेंगे?' और उसने मुझे ऐसे दुत्कारा था मानो मैं कुत्ता होऊँ।

तब तक भाभी भी आ गई थीं। भाभी वार्डबॉय के साथ अंदर चली गई थी। कुछ देर बाद सुमन को वार्ड में शिफ्ट किया जाना था। दो महिला कर्मचारी उसे स्ट्रेचर पर लिये वार्ड में जा रही थीं। वार्ड ऑपरेशन थिएटर से थोड़ा सा दूर था। मैं भी स्ट्रैचर के साथ-साथ ही चलने लगा था। रंभा, उर्वशी, कामायनी को मात देने वाली मेरी सुमन का चेहरा पीला पड़ा हुआ था। होंठ पपड़ाए हुए थे। शेष शरीर ढका था। मैं रोक न सका था, 'बाबू, बाबू, सुमन, ए सुमना···मैं चाचा···मुझे देखो, बाबू।' सुमन ने थोड़ी सी आँखें खोली थी, फिर बंद कर ली थीं।

सुमन को वार्ड में शिफ्ट कर दिया गया था। भाभी उसकी देख-रेख के लिए थीं। मैं और छोटेवाला वार्ड के बाहर ही खड़े थे। अभी बहुत

ज्यादा देर भी नहीं हुई थी कि भाभी वार्ड के बाहर आईं और बोली थीं, 'डॉक्टर साहब बुला रहे हैं', मैं यंत्रचलित सा उनके सामने था।

'आपकी बेटी का ऑपरेशन सफल रहा। वह खतरे से पूरी तरह बाहर है, लेकिन···' इसके पहले कि डॉक्टर कुछ आगे बोलता, मैं बीच में कूद पड़ा था, 'लेकिन माने क्या डॉक्टर साहब?'

'लेकिन माने यह कि अब सुमन कभी माँ नहीं बन पाएगी। मैंने बहुत कोशिश की, लेकिन क्या करता, सिस्ट ने जड़ें पकड़ ली थीं। बेटी को बचाना बहुत जरूरी था, हमारे लिए पेशेंट इज इसेंशियल। बच्चे पैदा करने की तो तमाम टेक्नीक हैं मार्केट में। लेकिन इनसान को बचाने की··· नो···नो वन। आई डिड राईट, यू डोंट वरी। सुमन को मत बताइएगा और यहाँ तक कि उसकी माँ को भी नहीं। यह बात सिर्फ मैं जानता हूँ या फिर आप। सुमन की माँ औरत ही है। और फिर यह क्रूयल समाज। आई थिंक यू बेटर अंडरस्टैंड।' और मेरी कोई बात सुने बिना ही बाहर चले गए थे डॉक्टर साहब। उनके जाते ही महिला कर्मचारियों ने मुझे बाहर जाने के लिए कहा था। मैं वार्ड से बाहर आ गया था। भाभी सुमन के पास चली गई थी। मैं और छोटेवाला वहीं, वार्ड के बाहर ही गैलरी में बैठ गए थे।

मैं बार-बार अपने मन में यही कह रहा था, 'यह क्या हो गया भगवान्, मेरी बच्ची के साथ? उसकी रक्षा नहीं की तूने, तू सच में बहुत बड़ा निर्दयी···।' कि सोचने लगा था···

'···चाचा एक बात कहनी थी आपसे।' एक दिन शाम को चाय पीते समय बोली थी सुमन मुझसे।

'कहो।'

'ऐसे नहीं, प्यार से पूछो।' और पीछे से मेरे गले में बाँहें डाल दी थीं। छोटी थी तब, ऐसे ही किया करती थी, जब चिज्जी या हप्पा माँगती थी।

'प्यार, मेरे पास कहाँ है बेटा। अगर प्यार होता तो आज मेरे अपने···।' इसके आगे नहीं बोलने दिया था सुमन ने। और कहा था, 'अगर आप में प्यार नहीं है तो दुनिया के किसी भी आदमी में प्यार नहीं होगा।'

'अच्छा बताओ क्या बात है?' मैंने चाय का कप प्लेट में रखते हुए कहा था।

'चाचा।'

'हाँ।'

'चाचा।'

'अरे भैया, अब चाचा से आगे भी बढ़ेगी या चाचा पर ही अटकी रहेगी। और पहले तो एक काम करो मेरे ऊपर से हटो। यहाँ बैठो आकर। कितनी बड़ी हो गई है, लेकिन फिर भी बच्ची ही बनी रहती है। कोई कहेगा इसे देखकर कि ये अफसर होगी।' मेरे प्यार में अथाह गहराई थी।

सुमन मेरे पास ही सोफे पर बैठ गई थी। बिल्कुल मुझसे सटकर। फिर उसे चैन नहीं पड़ा तो मेरी गोद में सिर रख लिया था। 'अब सुनो।'

'मैं एक लड़के से···।' कहाँ बोलने दिया था, मैंने उसे आगे। मैं ही बोला था, 'प्यार करती हूँ, राइट।'

बस गजब हो गया था। 'आपने कैसे जाना, बताओ···बताओ···ये बात आपको किसने बताई। मम्मी तक नहीं जानती। अच्छा उसी ने बताया होगा।' गोद से उठकर बैठ गई थी।

'अरे, मुझे किसी ने नहीं बताई। आखिर मैं तेरा चाचा हूँ भाई।' मैं बोला था।

'आप चाचा नहीं हैं। आप पापा हैं, पापा···सिर्फ पिता ही होता है, जो अपने बच्चों के मन की बात जान लेता है।' और उसकी आँखों की कोरों में गीलापन गहरा हो गया था। मैंने आँसुओं को बाहर नहीं आने दिया था। आँसू पी लेने में मुझे महारत हासिल है।

'मेरे ऑफिस में ही है। मेरा ही बैचमेट है। मुझसे तीन नंबर नीचे उसका नाम था। हम दोनों ने साथ-साथ ज्वॉइन किया था।' बताए जा रही थी सुमन, 'बहुत रहीस घर का है। अकेला बेटा है अपने माँ बाप का। मुझे बहुत प्यार करता है, चाचा।'

'और तुम।'

'मैं भी।' उसके इतना कहने पर मैंने उसकी ओर देखा था। फिर क्या था। 'हम ना···मजाक बना रहे हैं मेरी।' और फिर तो सोफे से उठकर मेरी पीठ पर लद गई थी। 'और बनाओगे मजाक, बताओ, बताओ।'

'अरे अब उतर भी। मैं बूढ़ा आदमी हूँ। अब तू बच्ची नहीं है। और आज तो साबित हो गया कि तू बच्ची नहीं है। अच्छा चल, आगे बता···।' मैंने उसे पकड़कर अपने पास फिर बैठा लिया था।

'चाचा, वह मुझे बहुत प्यार करता है। मैं भी। एक दिन कहने लगा मुझसे। चाचा सुनो तो।' और मुझे झकझोरने लगी थी, 'कि सुमन, हमारी माँ कहती है हमारे घर में खूब सारे बच्चे चाहिए। दो, चार, पाँच, नौ, ग्यारह।'

तभी न जाने क्यों मुझे डॉक्टर के कहे शब्द याद आने लगे थे कि अब···सुमन कभी, माँ···नहीं।

'क्या?' मैं अनायास ही बोल पड़ा था।

'हाँ चाचा, उसकी माँ चाहती है कि उनके घर में खूब सारे बच्चे हों। मैंने तो कह दिया, सिर्फ दो बच्चे ही करेंगे। ठीक कहा न चाचा मैंने।'

'हाँ' मैं कब बोल गया था, मुझे पता ही न चला। होश तो तब आया जब एक महिला कर्मचारी मुझ पर चिल्लाई थी, 'चलो, चलो, भागो यहाँ से···वहाँ जाकर बैठो···ये कोई बैठने की जगह है। चलो···हटो।'

छोटेवाले ने कहा भी था, 'तुम्हारा दिमाग खराब है। ऐसे बात करते हैं। मेरे चाचा बहुत बड़े अफसर हैं।'

'अफसर होगा अपने ऑफिस में। यहाँ तो वही होगा, जो हमें कहा

गया है।' उसकी बात का बुरा मैंने नहीं माना था। मैं वहाँ से उठकर चला आया था। छोटेवाला साथ-साथ था।

दो दिन वार्ड में रखने के बाद उसकी छुट्टी हो गई थी। डॉक्टर ने फिटनेस सर्टिफिकेट दे दिया था। सुमन ने ऑफिस ज्वॉइन कर लिया था और फिर एक सप्ताह की छुट्टी ले ली थी।

अब वह घर पर ही आराम करती थी। रोज शाम को मेरे पास आकर बैठ जाती। तभी एक शाम···

···मैं थक गया था। ऑफिस में काम ज्यादा रहा था। दरअसल एक एग्रीमेंट था इंडोनेशिया के साथ भारत का। उसी का ड्राफ्ट तैयार करते-करते सब करम हो गए थे, सो बैड पर लेटा था कि सुमन आ धमकी।

'और हैंडसम, कैसे हो?'

'तू बता, तेरा प्यार कैसा चल रहा है।' मैं कहाँ चूकने वाला था। शरीर ही तो थका था। मुँह थोड़े ही न थका था।

'सोलिड।'

'अरे, तूने उस गधे का नाम तो बताया ही नहीं उस दिन।' मैं चिढ़ाने में भी माहिर हूँ।

'रणविजय सिंह।'

'माने ठाकुर साहब और तू च···।'

'चाचा हम नहीं। अब मैं बड़ी हो गई हूँ। और वैसे भी प्यार में जातिबंधन हैज नो मीनिंग।' वह बोली थी। 'चाचा आज क्या हुआ···सुनो तो···आज उसकी माँ का फोन आया था, जानते हैं आप, उसकी माँ क्या कह रही थी।' और उसने मेरे चेहरे की ओर देखा था।

मैंने आँखें घुमाई थीं।

'कह रही थी, सुमन जल्दी से घर आ जाओ दुलहिन बनकर। घर सूना-सूना लगता है। और जल्दी से तीन-चार बच्चे।'

'ऐं', मैं लेटा था बैड पर सो उठकर बैठ गया था। और डॉक्टर का चेहरा मेरी आँखों में घूम गया था···सुमन अब कभी माँ···नहीं···

सुमन नहीं समझ पाई थी। उसे लगा था कि उसके मुँहफट होने से मैं नाराज हो गया हूँ, तभी तो बोली थी। 'सॉरी, सॉरी···चाचा। गलती हो गई। आप मुझे डाँटते ही नहीं, इसीलिए···अब आगे से ध्यान रखूँगी।'

और इतना कहकर कान पकड़कर मेरे सामने खड़ी थी। ठीक वैसे ही जैसे बचपन में कोई गलती करती और मैं डाँटता तो ऐसे ही खड़ी हो जाती थी। मैंने उसे सहज किया था और बोला था, 'बेटा, एक बात सुनो मेरी।'

'जी, चाचाजी।'

'तुम कितना प्यार करती है उस लड़के से।'

'अपने आप से भी ज्यादा।'

'तुम यह भी जानती हो, प्यार में झूठ बोलना, धोखा देना, अविश्वास करना प्यार को कमजोर बनाता है। प्यार में स्वाभिमान बहुत जरूरी है। घमंड नहीं। और स्वाभिमान तभी रहता है, जब आप पूरे-के-पूरे ईमानदार हों। प्यार में डर नहीं होना चाहिए।' इन बातों पर वह मुझे बड़ी गहनता से देख रही थी। 'तुम समझ रही हो, मैं क्या कहना चाह रहा हूँ?'

'हाँ।' वह बोली थी।

'तो जाओ और उससे कह दो कि तुम कभी माँ नहीं बन पाओगी।' सहज तरह से मैं कभी कह नहीं सकता था यह बात। दिल पर पत्थर रखकर ही तो बोला था मैं।

और सुमन···वह तो सचमुच पाषाण प्रतिमा सी मुझे निहारे जा रही थी।

मैंने उसे हिलाया था। डॉक्टर की कही पूरी बात बताई थी। बहुत समझाया था। वह कितना समझी कितना नहीं, यह तो वही जाने। हाँ, जाने को हुई तो फिर मैंने उसे पुचकारते हुए कहा था, 'बेटा, मेरी लाडो, मेरी राजकुमारी···उसे सब बात स्पष्ट बताना। देखो, अगर वह तुम्हारा होगा तो तुम्हारे पास आ जाएगा और अगर नहीं होगा तो तुमसे दूर चला जाएगा। तुम दोनों ही स्थितियों में जीत में रहोगी। कम-से-कम अकेले में बैठोगी तो खुद को दोष तो नहीं दोगी कि तुमने उसे छला है। किसी को भी छल लो, लेकिन स्वयं से नहीं भागा जा सकता।'

सुमन चली गई थी अपने कमरे में।

दो दिन तक मेरे पास नहीं आई थी।

कल आई थी मेरे पास। मैंने उसकी ओर प्रश्न करने वाली आँखों से देखा था, मानो कहना चाहा हो 'क्या हुआ?'

'चाचा, मैंने उसे सारी बातें बताईं, जैसी आपने मुझसे बताई थीं।' सुमन बताने लगी थी। उसे देखकर लगा था कि न जाने वह, कुछ ही दिनों में बहुत बड़ी हो गई हो।

'फिर।'

फिर उसने मुझसे कहा, 'सुम्मा, एक बात बताओ यही घटना हमारी शादी के बाद हुई होती तो···तो क्या मैं तुम्हें छोड़ देता।'

'तब दूसरी बात होती। अभी सबकुछ तुम्हारे हाथ में है। तुम्हें दूर तक सोचना होगा।···और हाँ, माँ का कैसे करेंगे। माँ को खूब सारे बच्चे चाहिए।' मैं निर्दयी हो गई थी।

'माँ को मना लूँगा। मान जाएगी माँ। माँ बहुत अच्छी है। माँएँ अच्छी होती ही हैं। तुम्हें बहुत चाहती है।' वह बोला था।

'चाहत और यथार्थ में जमीन-आसमान का फर्क होता है। अच्छा एक काम करो, पहले खूब सोच-विचार कर लो, फिर देखेंगे।' मैंने कहा था।

'मुझे अकेला मत छोड़ो, सुमन। मैं रह न पाऊँगा तुम्हारे बिना।' फिर घुटनों के बल बैठकर, दोनों हाथ बढ़ाकर, मेरी आँखों में आँखें डालकर बोला, '···सुमन, तुम मेरी जिंदगी हो।'

मैंने उसके हाथ अपने हाथों में भर लिये थे। बताए जा रही थी सुमन और मेरे गले लगकर बड़ी देर तक बिलख-बिलखकर रोती रही थी।

और मैं उसके सिर पर प्यार से हाथ फिराता रहा था। आँखें तो गीली मेरी भी थीं कि···कि कुछ शब्द हवा में तैरने लगे थे···कि तुम मेरी जिंदगी हो।

(सा.अ.)
२४०, बाबा फरीदपुरी, वेस्ट पटेल नगर,
नई दिल्ली-११०००८
दूरभाष : ९८६८८४६३८८

वर्ग पहेली (१८२)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मार्च, २०२१ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते मई २०२१ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१८०) का शुद्ध हल

१ न	२ वा	३ ब	जा	४ दा	■	५ सा	जि	६ श
७ म	स	ला	■	८ ह	९ म	ला	■	ही
१० न	र	■	११ स	क्रि	य	■	१२ खु	द
शी	■	१३ ज	रि	या	■	१४ ह	ल	■
१५ ल	१६ कु	टि	या	■	१७ स	त्या	ना	१८ स
■	१९ री	ल	■	२० आ	वा	रा	■	दा
२१ अ	ति	■	२२ चा	व	ल	■	२३ स	च
व	■	२४ क	ल	ह	■	२५ चा	द	र
२६ नि	कृ	ष्ट	■	२७ वा	ता	व	र	ण

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **सुश्री रेणु मिश्र**
द्वारा श्री कौशल मिश्र
यश मंदिर, ४भ९, जवाहर नगर
जयपुर-३०२००४ (राज.)
दूरभाष : ९५७१४०५२४२

२. **श्री पंकज सिंह गड़िया**
जनकल्याण न्यास
सुदर्शन कुंज, सुमन नगर
देहरादून-२४८००१
दूरभाष : ७२४८६०२५१३

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १८० के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), मोहन जगदाले (उज्जैन), मोहन उपाध्याय (अजमेर), फकीर चंद ढुल (कैथल), विनीता सहल (मुंबई), विजय पाल सेहलंगिया, ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), जगदीश चंद्र (कैथल), अशोक श्रीवास्तव (ग्रेटर नोएडा), बद्रीलाल व्यास (राजगढ़), ओम प्रकाश गोयल (शिवपुरी), सुधांशु शेखर बक्शी (अहमदाबाद), बी.डी. बजाज, सुभाष शर्मा, दिनकर सहल (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. बागियों का मुखिया (४)
५. अंधकार दूर करनेवाला (४)
९. काबा के पास का एक कुआँ, जिसका पानी बहुत पवित्र माना जाता है (४)
१०. शक्तिशाली (४)
११. रुपया-पैसा (२)
१२. मादक (३)
१४. घुमावदार, टेढ़ा (२)
१५. पर्वतों का राजा (२)
१६. कोई कार्य सिद्ध करने के लिए किया जानेवाला कठिन परिश्रम (३)
१७. सूचना देना (३)
१८. छोटे बच्चों के लिए एक प्रकार का झूला (३)
१९. वह भवन, जिसमें बहुत से लोग दर्शक के रूप में उपस्थित हो सकते हों (३)
२०. लुप्त करना (३)
२२. झुकाव, झुकने का गुण (२)
२३. कहने या बताने वाला (३)
२४. वह संरचना, जो किसी वस्तु के सिकुड़ने पर बनती है (२)
२५. चुनौती (४)
२७. नाना (४)
२९. सार्वजनिक राय (४)
३०. अवैध (४)

ऊपर से नीचे—

१. आडंबर, बनाव-सिंगार (४)
२. जो आनंद देनेवाला हो (३)
३. हाथी (२)
४. अलग कर बैठना (२,१,२)
५. एक वाद्य यंत्र (३)
६. मूल्य, कीमत (२)
७. शेखी मारना (२,३)
८. घुँघरू आदि का मंद-मंद शब्द होना (४)
१३. शरीर में गरदन से आगे का भाग (२)
१५. पिशाच, बदमाश, दुर्जन (३)
१६. साग-सब्जी की मसालेदार तरकारी (३)
१७. दुराचारी (५)
१८. पाप करके फल का भोगी बनना (२,३)
२९. साले की पत्नी (४)
२०. लचक (२)
२१. साले की पत्नी (४)
२३. शक्ल (३)
२४. अवधि, काल (३)
२६. दस्तक, थपकी, खटखटाना (२)
२८. हरा-भरा, नया (२)

वर्ग पहेली (१८१) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१८२)

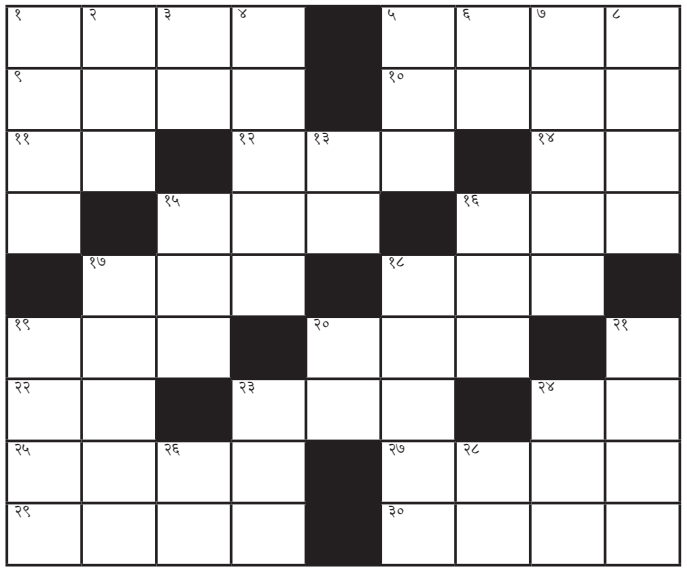

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। पुष्पा राही की कविताएँ, 'मधुर' जी की 'स्वर्ण बालियाँ झूम रही हैं' अच्छी लगीं। ऊषा निगम का 'एक शहीद की दास्तान', हरींद्र कुमार के संस्मरण 'खिड़की से झाँकती वे सूनी आँखें' आदि रचनाएँ अच्छी लगीं।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक प्राप्त हुआ। नरेंद्र कोहली की कहानी 'बुड्ढा सोता बहुत है' अच्छी लगी। क्षमा शर्मा की कहानी 'पंद्रह साल की माँ', कमल किशोर गोयनका का 'प्रेमचंद साहित्य में माँ का स्वरूप', कहानी 'बेटों वाली विधवा' तथा अन्य सभी रचनाएँ बहुत अच्छी लगीं।

—कृष्णकांत शुक्ल, गौतमबुद्धनगर (उ.प्र.)

गौरैया के साथ वसंत के आगमन की आहट देता 'साहित्य अमृत' का मुख पृष्ठ बड़ा ही चित्ताकर्षक लगा। आचार्य चतुरसेन की सुप्रसिद्ध कहानी 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' दिल में गहरे तक उतर गई। अन्य कहानियों में मंजु मधुकर की 'सच्ची जीत', प्रगति गुप्ता की 'गुम होते क्रेडिट कार्डस', संध्या मेनन की 'जाकी रही भावना जैसी' भी मन को भा गईं। 'एक शहीद की दास्तान' ऊषा निगम का आलेख क्रांतिकारी मणींद्रनाथ के सम्मान में सच्ची श्रद्धांजलि है। आलेख 'हरित मानसिकता की जरूरत' में गिरीश्वर मिश्र ने सच्ची चिंता व्यक्त की है। मुकेश शर्मा की लघुकथा 'अँधेरा और रोशनी' बड़ी सकारात्मक लगी। कविताओं में पुष्पा राही की 'चुक जाती हैं जब इच्छाएँ', होड़िल सिंह 'मधुर' की 'स्वर्ण बालियाँ झूम रहीं', अंकुर सिंह 'सरस्वती वंदना', कर्नल प्रवीण त्रिपाठी की 'बसंत' समसामयिक और मनोरंजक लगीं। एक नए लोकनाट्य हिरनी-बिरनी से शंभूशरण सत्यार्थीजी ने बखूबी परिचय करवा दिया, उन्हें बधाई। राम झरोखे में अब पहले वाली बात नहीं रही। श्याम दुबेजी के ललित-निबंध हमेशा उम्दा होते हैं, यह भी उसी श्रेणी में है। राजशेखर व्यास ने महादेवीजी के पत्राचार से बखूबी साक्षात्कार कराया है। बाल-संसार में पवन चौहान की बाल-कहानी 'बिंदु का सवाल' बड़ी ज्ञानपरक और सहज पठनीयता से भरपूर लगी। मैंने उनकी और भी कहानियाँ पढ़ी हैं, वे शानदार लिखते हैं। कुल मिलाकर पूरा अंक ही साहित्य के अमृत की बरसा करता लगा। संपादक मंडल को बहुत सारी शुभकामनाएँ।

—आनंद शर्मा, प्रेमनगर (दिल्ली)

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक प्राप्त हुआ। अंक का आवरण पृष्ठ तथा संपादकीय बहुत पसंद आया। कैलाश सत्यार्थी की पुस्तक का अंश 'कोविड-१९ : सभ्यता का संकट और समाधान', पंडित विद्यानिवास मिश्र पर आलेख 'परंपरा के पुरुषार्थ : पं. विद्यानिवास मिश्र' अच्छे लगे। साहित्य का अमृत तत्त्व जीवन को संवर्धित करे और समय का नूतन अंश शुभता पूरित रहे।

—प्रमिला मजेजी, कोरबा (छ.ग.)

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक पढ़ा। संपादकीय 'वसंत को बुलाओ' पढ़ा, भाई लक्ष्मीशंकर वाजपेयी के संपादकीय को नमन करता हूँ, जो इतना सुंदर होता है, वे कई विषयों को अपने संपादकीय में समेट लेते हैं। कहानी साँकल व मुखौटा, आलेख एक शहीद की दास्तान, साथ में कविताएँ, संस्मरण, व्यंग्य और बाल-संसार की रचनाएँ हमें खूब पसंद आईं। 'साहित्य अमृत' को पढ़ने से हमारा ज्ञान बढ़ता है और साहित्यकारों से संपर्क भी बढ़ता है।

—बद्रीप्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। कविताओं में 'वासंती स्वर', 'चुक जाती हैं जब इच्छाएँ', 'कोई आश्चर्य नहीं', 'बसंत' (कुंडलियाँ), 'लग रहा है ज्यों' (गजल) और कहानियों में जहाँ भावना शेखर की 'साँकल', प्रगति गुप्ता की 'गुम होते क्रेडिट काड्र्स' बेहद पसंद आईं, वहीं संध्या मेनन की 'जाकी जैसी रही भावना' कहानी कम शब्दों में बहुत कुछ बयाँ करती लगी। पवन चौहान की बाल-कहानी भी अच्छी लगी। संपादकीय में 'विश्व पटल पर हिंदी लेखन···' में इंटरनेट क्रांति पर वाजपेयीजी के विचार अच्छे लगे। वर्ग पहेली सरल थी, जो दिमाग की कसरत नहीं करा पाई।

—ब्रह्मानंद 'खिच्ची', महेंद्रगढ़ (हरि.)

कोरोना काल में बहुत सारी पत्रिकाएँ दम तोड़ चुकी हैं। पहले ही पत्रिकाएँ कम छप रही थीं, उनमें साहित्यिक तो और भी कम। 'साहित्य अमृत' अडिग रहकर निरंतर हम पाठकों को साहित्य का अमृत पान करा रही है। ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह पत्रिका यों ही आगे बढ़ती रहे। फरवरी अंक में संपादकीय लेख वसंत की अगवानी करता लगा। इस अंक की कहानियाँ एक से बढ़कर एक और मनोरंजन से भरपूर हैं। आलेख तो स्तरीय हैं, पर ऊषा निगम का आलेख 'एक शहीद की दास्तान' गौरवान्वित करनेवाला एक शहीद की सच्ची कहानी है। लघुकथाएँ तीनों अच्छी लगीं, मनोरंजक हैं, शिक्षाप्रद भी। कविताओं में होडिल सिंह 'मधुर' की 'स्वर्ण बालियाँ झूम रहीं' वसंत की संपदा का गुणगान करती लगीं। लोककथा हिरनी-बिरनी अलग-अलग राज्यों में विभिन्न रूपों में प्रचलित है। लेखक ने लोकगीतों के साथ सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है। ललित निबंध 'सखा धर्ममय अस रथ जाके' दिल को छू गया। व्यंग्य 'ठेले पर वैक्सीन' अच्छा कटाक्ष है। बाल-संसार में पवन चौहान की बाल-कहानी 'बिंदु का सवाल' जानकारीपरक है। गतिविधियाँ पूरे साहित्य संसार से रूबरू करा देती हैं। कुल मिलाकर पूरा अंक ही अच्छा है। आप सब लोग खूब मेहनत कर रहे हैं, आपको बधाई।

—रामप्रकाश राय, गोरखपुर (उ.प्र.)

सम्मान-कार्यक्रम आयोजित

१२ जनवरी को ओ.एन.जी.सी. मुख्यालय देहरादून में विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में श्रीमती मधुलिका श्रीवास्तव के संचालन में श्री विपुल कुमार जैन ने सर्वश्री जितेन ठाकुर, राम विनय सिंह, कुसुम नौटियाल, शिवमोहन सिंह और पल्लवी रस्तोगी को अंगवस्त्र, स्मृति चिह्न और अभिनंदन-पत्र देकर सम्मानित किया। श्री रामराज द्विवेदी ने मुख्य अतिथि श्री विपुल जैन और विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री रजनीश त्रिवेदी का स्वागत किया। सभी सम्मानित साहित्यकारों ने हिंदी के विविध पक्षों पर अपने विचार व्यक्त किए और कवियों ने गीत प्रस्तुत किए। □

स्मृति सम्मान समारोह आयोजित

विगत दिनों इंद्रधुनष साहित्य परिषद्, फारबिसगंज द्वारा प्रोफेसर कॉलोनी स्थित 'सागर प्रांगण' में महान् स्वतंत्रता सेनानी आशुकवि, नाटककार एवं 'हितैषी' के संपादक-प्रकाशक पंडित रामदेनी तिवारी द्विजदेनी की १३६वीं जयंती श्री शिव नारायण दास की अध्यक्षता में मनाई गई। साहित्यकारों-साहित्यप्रेमियों ने श्रद्धासुमन अर्पण कर उन्हें नमन किया। सर्वश्री सुरेश कंठ, जयप्रकाश भारद्वाज, हेमंत यादव 'शशि', सधीर झा ने शॉल ओढ़ाकर अतिथियों को पुस्तकें प्रदान कर 'द्विजदेनी स्मृति साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया। सर्वश्री हेमंत यादव, हर्ष नारायण दास, अरविंद ठाकुर ने अपने विचार व्यक्त किए। □

एकल पाठ कार्यक्रम संपन्न

२४ जनवरी को पटना में फेसबुक के 'अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका पेज पर' ऑनलाइन एकल पाठ में कवि-चित्रकार श्री सिद्धेश्वर ने अपनी कविताओं और लघुकथाओं का पाठ किया। मुख्य अतिथि श्री शरण नारायण खरे ने अपने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षीय उद्‌बोधन श्री अपूर्व कुमार ने दिया। भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् की साहित्यिक गतिविधियों पर सर्वश्री प्रियंका श्रीवास्तव शुभ्र, राजप्रिया रानी ने चर्चा की। श्री नीरज कुमार से श्री सिद्धेश्वर द्वारा की गई लाइव भेटवार्त्ता आकर्षण का केंद्र रही। सर्वश्री श्रीकांत, संजय राय, रामनारायण यादव, ऋचा वर्मा, अलका वर्मा, संजय श्रीवास्तव, धनश्याम ने अपने विचार व्यक्त किए। □

परिचर्चा आयोजित

२९ जनवरी को विश्व हिंदी संगठन, नई दिल्ली द्वारा डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'मध्य कालीन कविता का पुनर्पाठ' पर आयोजित परिचर्चा में मुख्य अतिथि श्रीमती चित्रा मुद्‌गल रहीं। अनेक विद्वानों, प्राध्यापकों और शोधार्थियों ने इसमें भाग लिया। डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय ने अतिथियों का स्वागत किया। बीज वक्तव्य डॉ. अरुण होता ने दिया। सर्वश्री आलोक रंजन पांडेय, दर्शन पांडेय तथा पूरनचंद टंडन ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. कोयल विश्वास ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री अनुरोज टी.जे. ने किया। □

सम्मान समारोह आयोजित

७ फरवरी को नई दिल्ली में मीडिया विमर्श परिवार द्वारा साहित्यिक पत्रिका 'अभिनव इमरोज' के संपादक श्री देवेंद्र कुमार बहल को १३वें पं. बृजलाल द्विवेदी स्मृति अखिल भारतीय साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान के अंतर्गत ग्यारह हजार रुपए, शॉल, श्रीफल, प्रतीक चिह्न और सम्मान-पत्र से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री अच्युतानंद मिश्र, देवेंद्र कुमार बहल, कुमुद शर्मा, गिरीश पंकज, अनंत विजय, संजय द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन सुश्री विष्णुप्रिया पांडेय ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री संजीव सिन्हा ने किया। □

परिचर्चा आयोजित

१२ फरवरी को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र एवं प्रभात प्रकाशन के संयुक्त तत्त्वावधान में नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित बाल अधिकार कार्यकर्ता श्री कैलाश सत्यार्थी की पुस्तक 'कोविड-१९ : सभ्यता का संकट और समाधान' पर ऑनलाइन परिचर्चा आयोजित की गई, जिसमें सुप्रसिद्ध पत्रकार एवं इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री रामबहादुर राय ने अध्यक्षता करते हुए कहा, ''इस पुस्तक से नई सभ्यता का शास्त्र रचा जा सकता है। यह पुस्तक भारत की नेतृत्वकारी भूमिका का भी प्रमाण है। इस पुस्तक में विचार की अमीरी के सूत्र छिपे हैं, जिसे लोगों को यदि समझाया जाए तो पुस्तक की सार्थकता बढ़ेगी।''

राज्यसभा सांसद एवं पद्म विभूषण डॉ. सोनल मानसिंह ने कहा कि कैलाशजी की पुस्तक को छापकर प्रभात प्रकाशन ने अपने प्रकाशन में एक रत्नमणि जोड़ने का काम किया है। यह पुस्तक गागर में सागर है। सुप्रसिद्ध गीतकार एवं अध्यक्ष सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन के अध्यक्ष श्री प्रसून जोशी ने कहा, ''कैलाशजी की पुस्तक को पढ़ते हुए मेरा विश्वास पुख्ता हो गया कि उन्होंने उसी विषय को उठाया है, जिस पर मैं सोच रहा था कि उन्हें उठाना चाहिए।

विशिष्ट अतिथि सुप्रसिद्ध लेखक एवं पूर्व राजनयिक श्री पवन के. वर्मा ने कहा कि महामारी के दौर में गहन चिंतन को दरशाती यह पुस्तक बहुत ही प्रासंगिक है। इस महामारी ने मध्यवर्ग को आत्मचिंतन करने का एक अवसर उपलब्ध कराया है। कैलाशजी जिस करुणा, कृतज्ञता, सहिष्णुता और उत्तरदायित्व की बात करते हैं, लोग अगर उसका पालन करने लगें तो उन्हें पूर्ण सुख (टोटल हैप्पीनेस) की प्राप्ति होगी। सुप्रसिद्ध लेखक एवं नेहरू सेंटर, लंदन के निदेशक श्री अमीश त्रिपाठी ने कहा कि कैलाशजी ने बहुत महत्त्वपूर्ण विषय उठाया है। कोरोना के संदर्भ में ज्यादा चर्चा स्वास्थ्य और आर्थिक संकट को लेकर होती है। लेकिन लोगों के दिल और दिमाग पर उसका जो मानसिक प्रभाव पड़ा है वह सालों नहीं बल्कि दशकों तक नहीं मिटने वाला।''

श्री सुधांशु त्रिवेदी ने बहुत कम शब्दों में अपनी बात रखते हुए कहा कि कैलाशजी ने पुस्तक में सभ्यता की चुनौतियाँ और समाधान दोनों पर बहुत बढ़िया विचार किया है। उन्होंने कुछ नया करने का उपदेश देने वालों को आड़े हाथों लिया और कहा कि वे नया क्या कर लेंगे जबकि हमारे पास पहले से ही कुछ ऐसी अनमोल चीजें हैं जो हमेशा नई, सदाबहार, कालजयी और प्रासंगिक रहेंगी। डीन एवं विभागाध्यक्ष, कला निधि, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के प्रो. रमेशचंद्र गौड़ ने कार्यक्रम का संचालन किया। □

लेखक के नाम कार्यक्रम आयोजित

२० फरवरी को भोपाल में लैंडमार्क द बुक स्टोर एवं इंद्रा पब्लिशिंग हाऊस की तरफ से 'लेखक के नाम कार्यक्रम' आयोजित किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि 'बेटियाँ' पुस्तक के लेखक पी. नरहरि एवं पृथ्वीराज सिंह थे। दोनों ने दर्शकों को लाड़ली लक्ष्मी योजना के बारे में बताया और कैसे इसने राज्य के लिंग अनुपात को बढ़ाने में मदद की। □

साहित्य विमर्श कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों गुरुग्राम के सी.सी.ए. स्कूल में 'शब्द शक्ति' संस्था द्वारा कमलेश भारतीय के नवप्रकाशित लघुकथा संग्रह 'मैं नहीं जानता' व डायमंड बुक्स की पत्रिका 'साहित्य विमर्श' के लघुकथा विशेषांक के विमोचन अवसर पर 'साहित्य अमृत' के संपादक श्री लक्ष्मी शंकर वाजपेयी तथा विशिष्ट अतिथि श्री मुकेश शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री नरेंद्र गौड़ ने किया। मुख्य वक्ता श्रीमती रश्मि ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री कमलेश भारतीय ने अपनी कुछ चुनिंदा लघुकथाओं का पाठ प्रस्तुत किया। श्री लक्ष्मी शंकर वाजपेयी ने भी सुर में एक गीत सुनाकर माहौल को आनंदमय बना दिया। □

कथा-सम्मेलन आयोजित

१५ फरवरी को पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् के तत्त्वावधान में 'अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका' के सान्निध्य में ऑनलाइन 'हेलो फेसबुक कथा सम्मेलन' का संचालन करते हुए संयोजक श्री सिद्धेश्वर ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री जयंत की अध्यक्षता में मुख्य अतिथि डॉ. लवलेश दत्त थे। सर्वश्री अपूर्व कुमार, पुष्प रंजन कुमार, घनश्याम कलयुगी, प्रणय कुमार, अंकेश कुमार सभी ने अपने विचार व्यक्त किए। □

श्री प्रदीप सरदाना पुरष्कृत

१४ फरवरी को पत्रकारिता क्षेत्र में किए गए अपने असाधारण योगदान के लिए वरिष्ठ पत्रकार फिल्म समीक्षक श्री प्रदीप सरदाना को 'महात्मा गांधी राष्ट्रीय पत्रकारिता पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। यह प्रतिष्ठित पुरस्कार उन्हें 'इंटेरनेशनल चैंबर ऑफ मीडिया एंड इलेक्ट्रोनिक' द्वारा 'वैश्विक पत्रकारिता उत्सव' के दौरान ऑनलाइन प्रदान किया गया। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

१४ फरवरी को द्विजदेनी स्कूल के प्रांगण में इंद्रधनुष साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में नमन प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित माँगन मिश्र 'मार्तंड' की पुस्तक 'शिखरों की छाँव में' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री हेमंत यादव, कर्नल अजित दत्त, अनुज प्रभात, एस.एन. झा, हर्ष नारायण दास सभी ने अपने विचार व्यक्त किए। □

सम्मान घोषित

विगत दिनों इंदौर में आपले वाचनालय एवं श्री सर्वोत्तम द्वारा उत्कृष्ट मराठी काव्य कृतियों को दिए जानेवाले वसंत राशिनकर स्मृति अखिल भारतीय सम्मानों के तहत कवि श्री विशाल इंगोले की कृति 'माझ्या हयातीचा दाखला' का चयन कविवर्य वसंत राशिनकर स्मृति अ.भा. सम्मान-२०२० के लिए किया गया। पुणे के प्रा. साईनाथ पाचारणे की कृति 'माझ्या वाट्याची लोकशाही', मुंबई के डॉ. विजयकुमार देशमुख की कृति 'राघवशेला', श्री विनय मिरासे 'अशांत' यवतमाळ की कृति 'इतके जगून कळले', नाशिक के श्री विजय कुमार मिठे की कृति 'ओल तुटता तुटेना', अकोला के श्री सुरेश पाचकवडे की कृति 'कधी तरी', धुलिया श्री के. प्रभाकर शेळके की कृति 'ढासळल्या भिंती' तथा सुश्री मेधा खिरे की कृति 'आठवण' का चयन किया गया है। आपले वाचनालय द्वारा निकट भविष्य में होनेवाले गरिमामय समारोह में ये सम्मान प्रदान किए जाएँगे। □

गांधी विषयक संगोष्ठी संपन्न

१८ फरवरी को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा आभासी मंच पर 'प्रवासी साहित्य और गांधी' विषय पर एक संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें देश-विदेश के कई गांधी विशेषज्ञों और प्रवासी साहित्यकारों ने सहभागिता की। श्री सुरेश ऋतुपर्ण की अध्यक्षता में उद्घाटन वक्तव्य श्री गिरीश्वर मिश्र ने दिया। उद्घाटन सत्र के अध्यक्ष श्री कमल किशोर गोयनका ने अपना उद्बोधन दिया। श्री कमला प्रसाद मिश्र ने गांधीजी पर रचित कुछ कविताओं का उल्लेख किया। सर्वश्री अनिल शर्मा 'जोशी', उमापति दीक्षित, आशीष कंधवे, अंजू रंजन (जोहानिसबर्ग), अर्चना पैन्यूली (कोपेनहेगन), तेजेंद्र शर्मा (लंदन), विजय शर्मा, दत्ता कोल्हारे, मुन्ना लाल गुप्ता, विजय मिश्र एवं शालेहा प्रवीन ने अपने विचार प्रस्तुत किए। संचालन श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

अभिनंदन कार्यक्रम आयोजित

१३ फरवरी को इंदौर के प्रीतमलाल दुआ सभागृह में डॉ. योगेंद्रनाथ शुक्ल के शिष्यों और मित्रों द्वारा श्रीमती सोनाली सिंह की अध्यक्षता में उनका अभिनंदन समारोह आयोजित किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि श्री विकास दवे ने योगेंद्रनाथ शुक्ल के अभिनंदन में अपने विचार व्यक्त किए। विशेष अतिथि श्री पुष्पेंद्र दुबे तथा श्रीमती पद्मा राजेंद्र ने योगेंद्रनाथ शुक्ल पर आधारित स्व-रचित कविता का पाठ किया। सर्वश्री प्रतापसिंह सोढ़ी, ज्योति जैन, देवेंद्र सिंह सिसोदिया, शोभा जैन और गरिमा संजय दुबे का आयोजन समिति की ओर से सम्मान किया गया। स्वागत-भाषण श्रीमती सुषमा दुबे ने और अतिथियों व सम्मानित रचनाकारों का परिचय संयोजक श्री मुकेश तिवारी ने दिया। श्रीमती अंजना मिश्र के संचालन में अतिथियों का स्वागत विजयसिंह चौहान और अभय शुक्ला ने किया तथा आभार व्यक्त किया श्रीमती दीपा मनीष व्यास ने। □

साहित्यिक क्षति

कोशकार डॉ. बदरीनाथ कपूर नहीं रहे

२१ जनवरी को हिंदी शब्दकोश के विस्तारक एवं भाषाविद् श्री बदरीनाथ कपूर का ८९ वर्ष की आयु में अपने आवास पर निधन हो गया। उनका जन्म १६ सितंबर, १९३२ को पाकिस्तान के गुजरांवाला में हुआ था। हरिश्चंद्र कॉलेज से पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्होंने पंजाब यूनिवर्सिटी से पी-एच.डी. की। वे उ.प्र. हिंदी संस्थान के सौहार्द सम्मान के साथ-साथ, सेवक स्मृति सम्मान, विद्याभूषण सम्मान, कोशकार सम्मान, प्रचार शताब्दी सम्मान, वाङ्मय सम्मान, भाषारत्न, महामना मालवीय सम्मान सहित दो दर्जन से अधिक सम्मानों से सम्मानित हुए। उन्होंने कोश-आधारित कुल ४५ ग्रंथ रचे तथा योग वषिष्ठ का हिंदी अनुवाद किया।

प्रो. अनंतराम त्रिपाठी नहीं रहे

१० जनवरी को राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधानमंत्री प्रो. अनंतराम त्रिपाठी का निधन हो गया। उनका जन्म ७ जनवरी, १९३३ को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के पचराँव गाँव में हुआ था। उन्होंने वर्षों मुंबई स्थित के.जे. सौमेया और मुंबई विश्विविद्यालय में हिंदी अध्ययन-अध्यापन की सेवाएँ प्रदान कीं तथा १९६३ में एन.सी.सी. के प्रशिक्षण उपरांत वर्षों कमीशन ऑफिसर के रूप में विद्यार्थियों को सैन्य प्रशिक्षण देते रहे। गहरे अर्थों में स्वतंत्रता सेनानी, प्रखर गांधीवादी चिंतक और विचारक होने के साथ उन्होंने समाज सेवा के अंतर्गत उपचार, निदान के शिविरों में उल्लेखनीय कार्य किया। साहित्य और हिंदी भाषा की दिशा में अपना जीवन अर्पित करने के साथ-साथ उन्होंने आदिवासी और दलितों के क्षेत्रों में सश्रम सेवाएँ प्रदान कीं।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।